गाधी-साहित्य—१०

गांधी-विचार-रत्न

—विविध विषयो पर गांधीजी के चुने हुए विचारो का सग्रह—

•

सकलनकर्त्ता
माईदयाल जैन

१९६३

सस्ता साहित्य मंडल, प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय,
मंत्री, सस्ता साहित्य मण्डल,
नई दिल्ली

पहली बार · १९६३
मूल्य
साढे तीन रुपये

मुद्रक
वी० पी० ठाकुर,
लीडर प्रेस,
इलाहाबाद

प्रकाशकीय

विविध विषयो पर गाधीजी के चुने हुए विचारो का एक संग्रह हमने 'गांधी-विचार-दोहन' के नाम से कई साल पहले निकाला था। वह पाठको को बड़ा उपयोगी सिद्ध हुआ और अब भी हो रहा है। हमारी इच्छा थी कि एक और संग्रह् कराया जाय, जिसमे गांधीजी के अद्यतन विचार आ जायं। प्रस्तुत पुस्तक उसी दिशा मे प्रयत्न है।

गाधीजी ने इतने विषयो पर विचार प्रकट किये है और इतना लिखा है कि उस सबका अध्ययन करके उसमें से चुने हुए सुभाषितो को छांटना आसान काम नहीं है। फिर उनका सारा साहित्य विचारो की इतनी बड़ी खान है कि उन सबको एक पुस्तक मे देना असंभव है।

इन कठिनाइयो के होते हुए भी यह सग्रह तैयार किया गया है। हम जानते है, इसमें बहुत-सी कमियां है और बहुत-सी महत्त्वपूर्ण सामग्री छूट गई है; फिर भी हमें विश्वास है कि जो भी इसे पढेगा, उसे लाभ होगा। सग्रह के सभी विचार पठनीय तो हैं ही, मननीय भी हैं।

पाठको की सुविधा की दृष्टि से विषयो मे बांटकर सामग्री का वर्गीकरण कर दिया गया है।

हमे पूर्ण विश्वास है कि सभी वर्गों और विश्वासो के पाठक इस पुस्तक का लाभ लेगे।

—मत्री

अनुक्रम

खड १ दर्शन

खड २ धर्म-मार्ग

खड ३ चरित्र

खड ४ समाज

खड ५ . ज्ञान और सस्कृति

खड ६ राजनीति

गांधी-विचार-रत्न

खंड १ : दर्शन

१---धर्म

१ विधाता ने मनुष्य का लक्ष्य पुरानी आदतो पर विजय पाना, अपनी वुराइयो पर कावू रखना और भलाई को फिर से उसके उचित स्थान पर स्थापित करना बनाया है। अगर धर्म हमे यह विजय प्राप्त करना नही सिखाता हो तो वह कुछ भी नही सिखाता।

स० ई०, ५२

२ जो लोग यह कहते है कि धर्म का राजनीति के साथ कोई सवध नही है, वे नही जानते कि धर्म का अर्थ क्या है।

स० ई०, ५

३ सब धर्मो के एक ही स्थान पर पहुचने के अलग-अलग रास्ते है। अगर हम एक ही लक्ष्य पर पहुच जाते है, तो अलग-अलग रास्ते अपनाने मे क्या हर्ज है? वास्तव मे जितने मनुष्य हे, उतने ही धर्म है।

स० ई०, ५७

४ मै ऐसे किसी समय की कल्पना नही कर सकता जव पृथ्वी पर व्यवहार मे एक ही धर्म होगा।

स० ई०, ५८

५ तात्कालिक आवश्यकता यह नही है कि एक धर्म हो, वल्कि यह है कि विभिन्न धर्मो के अनुयायियो मे परस्पर आदर और सहिष्णुता हो।

स० ई०, ५८

६ धर्मो की आत्मा एक हे। परतु वह अनेक रूपो मे प्रगट हुई है। ये रूप अनत काल तक रहेगे।

स० ई०, ५८

७ सब धर्म ईश्वर की देन है, परतु उनमे मानव की अपूर्णता की

पुट है, क्योकि वे मनुप्य की वुद्धि ओर भापा के माव्यम मे गुजरते है।

स० ई०, ६१

८ धर्म का सचार ज्ञान, मत, पथो के वीच की दीवारो को हटाकर सहिप्णुता उत्पन्न करता है।

स० ई०, ६२

९ धर्म की शिक्षा लोकिक विपयो की तरह नही दी जाती। वह हृदय की भापा मे दी जाती है।

स० ई०, ६५

१० आजकल और वातो की तरह धर्म-परिवर्तन ने भी व्यापार का रूप ले लिया है।

स० ई०, ६६

११ धार्मिक ओर आध्यात्मिक जीवन की सुगध गुलाव के फूल से अधिक मधुर और सूक्ष्म होती है।

स० ई०, ६८

१२ जो सत्य पर भी शका करता है उसके लिए धर्मशास्त्रो का कोई धर्म नही है। उससे कोई वहस नही कर सकता।

स० ई०, ६

१३ यदि एक आदमी को आध्यात्मिक लाभ होता है तो उसके साथ-साथ सारी दुनिया को भी होता है, और अगर एक मनुप्य गिरता है तो उस हद तक समस्त जगत का भी पतन होता है।

स० ई०, १२६

१४ जो समाज या समूह अपने धर्म के अस्तित्व के लिए राज्य पर थोडा या पूरा आधार रखता है, उसका कोई धर्म नही होता, या यो कहे कि उसके धर्म को सच्चे अर्थ मे धर्म नही कहा जा सकता।

स० ई०, १३६

१५ धर्म अत्यत व्यक्तिगत वस्तु है।

सर्वो०, ३१

१६ मेरा धर्म कैदखाने का धर्म नही है।

सर्वो०, १७०

१७ जिस समय जैसा हृदय कहे, वही उस समय का धर्म है।

वा० प०, २६६

१८ मै यह मानता हू कि अपने नाम के योग्य धर्म आचार तथा नैतिकता के मूल सिद्धातो से विरोधी नही होना चाहिए।

रि० अ०, १८

१९ जाति का धर्म से कोई सबध नही है।

रि० अ०, ४०

२० इस युक्तियुग मे हर धर्म के हर सिद्धात को युक्ति और विश्व-मान्यता की कसौटी पर कसा जाना होता है।

सि० गा०, २७

२१ अगर किसी आदमी मे जीता-जागता धर्म है तो उसकी सुगध गुलाब के फूल की तरह अपने-आप फैलती है।

मे० स० भा०, २७५

२२ धर्म वह है, जिसे सब धारण करते है, यानी सब हिस्से मे, सब समय मे, जीवन मे ओतप्रोत है।

वा० आ०, १५५

२३ धर्म कुछ जीवन से भिन्न नही है, जीवन ही धर्म माना जाय। बगैर धर्म का जीवन मनुष्य-जीवन नही है, वह पशु-जीवन है।

वा० आ०, १५७

२४ धर्म कुछ सकुचित सप्रदाय नही है, केवल बाह्याचार नही है। धर्म है—ईश्वरत्व के विषय मे हमारी अचल श्रद्धा, पुनर्जन्म मे अचल श्रद्धा, सत्य और अहिसा मे हमारी सपूर्ण श्रद्धा।

गा० वा०, १२५

२५ मेरा ऐसा विश्वास है कि दुनिया के समस्त धर्म लगभग सच्चे है। 'लगभग' मै इसलिए कहता हू कि मेरा ऐसा विश्वास है कि मनुष्य का हाथ जिस किसी वस्तु को छूता है, वह अपूर्ण हो जाती है, इसका कारण यह सत्य है कि मनुष्य स्वय अपूर्ण है।

मो० मा०, ३४

२६ जिस प्रकार हमने ईश्वर का साक्षात्कार नही किया है, उसी प्रकार

हमने धर्म का भी उसके पूर्ण रूप मे साक्षात्कार नही किया है।

मो० मा०, ३५

२७ जो धर्म व्यावहारिक वातो का विचार नही करता और उसकी समस्याओ का हल करने मे सहायक नही वनता, वह धर्म नही हे।

मो० मा०, ३७

२८ धर्म दूसरी सव प्रवृत्तियो को नैतिक आधार प्रदान करता है, जो अन्य किसी प्रकार से उन्हे प्राप्त नही होता। और जिन मानव-प्रवृत्तियो के पीछे कोई नैतिक आधार नही होता, वे जीवन को निरर्थक शोरगुल और तीव्र भाग-दौड की भूलभुलैया वना देती है।

मो० मा०, ३७

२९ धार्मिक सुधारक लोगो के मन पर आधिपत्य जमाने की कोशिश नही करता, वह तो लोगो को जाग्रत करता हे और उन्हे विचार करने तथा काम करने मे लगा देता हे।

म० डा० ७, ८६

३० यह कितने आनद की वात होगी कि लोग यह समझ जाय कि धर्म वाहरी कर्मकाड मे नही है, वल्कि मनुष्य की ऊची-से-ऊची वृत्तियो का अधिक-से-अधिक अनुसरण करने मे है।

म० डा० ७, २३३

३१ जो अहिसा और सत्य की कसौटी पर खरा उतरे, वही धर्म है।

म० डा० ७, २६८

३२ हर व्यक्ति को जो चीज हृदयगम हो गई हे, वह उसके लिए धर्म है। धर्म वुद्धिगम्य वस्तु नही, हृदयगम्य है। इसलिए धर्म मूर्ख लोगो के लिए भी है।

म० डा० ७, २३३

३३ धर्म के मामले मे—मै तो कहता हू किसी भी मामले मे—जवरदस्ती नही की जा सकती।

म० डा० ७, २८९

३४ धार्मिक भावना होने की सच्ची कसौटी यह है कि मनुष्य ऐसी

बहुत-सी चीजो मे से, जो सभी थोडी-बहुत ठीक है, जो सबसे ज्यादा ठीक हो, उसे चुन सके।

बा० प० मी०, ५५

३५ धर्म का पालन करते हुए मन को जो शाति रहनी चाहिए, वह न रहे, तो यह माना जा सकता है कि कही-न-कही हमारी भूल हुई होगी।

बा० प० म०, १०७

३६ जो मनुष्य धर्म को अस्वीकार करता है, वह भी धर्म के बिना न जी सकता है, और न जीता है।

वि०, ६

३७ धर्म का पालन धैर्य से होता है।

वि० कौ० आ०, २९५

३८ धर्म की परीक्षा ही दुख मे होती है।

म० डा० २, १३०

३९ नास्तिकता मे स्वय अपने अस्तित्व का ही अस्वीकार है।

गां० ना० स० २४

४० शुद्ध धर्म अचल है, रूढि धर्म समयानुसार बदला जा सकता है।

म० डा० १न०, २८८

४१ व्यवहार से धर्म को अलग किया ही नही जा सकता या अव्यवहार कर्म जैसी कोई चीज नही है।

म० डा० २, २५२

४२ मजहब भाषा और लिपि की सीमा से बाहर है।

प्रा० प्र० १, ३३

४३ मैं धर्म-रक्षा करूगा, ऐसा कहना भी घमड है।

प्रा० प्र० १, ५६

४४ धर्म का पालन जोर-जबरदस्ती से नही हो सकता। धर्म का पालन करने के लिए मरना होगा। ससार मे ऐसा कोई धर्म पैदा नही हुआ, जिसमे मरना न पडा हो। मरने का रहस्य सीखने के बाद ही धर्म मे ताकत पैदा होती है। धर्म के वृक्ष को मरनेवाले ही सीचते है। धर्म उन लोगो के

कारण वढता है, जो ईश्वर का नाम लेते है, ईश्वर का काम करते हे, ईश्वर का स्तवन करते है, उपवास और व्रत करते हे ओर ईश्वर से आरजू करते रहते है कि हे भगवान, हमे, रास्ता नही दीखता, तू ही दिखा ! तव लोग कहते हे कि वह तो भक्त है और उसके पीछे चलते है। धर्म इसी तरह वनता है। मारकर कोई धर्म नही पनपा, मरकर ही धर्म पनपता है। यही धर्म की जड है।

प्रा० प्र० १, ६०

४५ धर्म का पालन यह है कि हम सीधे रास्ते पर चले।

प्रा० प्र० १, १६०

४६ जो वहादुर होते है उनको किसी की मदद की जरूरत नही होती। उन्हे केवल ईश्वर की मदद होनी चाहिए।

प्रा० प्र० १, २२१

४७ जो आदमी अपना धर्म पालन करता है, धर्म ही उसका वदला है।

प्रा० प्र० १, २४०

४८ धर्म अमर है। यह कभी वदल नही सकता।

प्रा० प्र० १, २३७

४९ हम दूसरो को कहे कि आप मेहरवानी करके हमारा धर्म वचा दे तो इस तरह धर्म वचता नही है। मेहरवानी से धर्म वचता है ? यदि हम कहे कि हमारा धर्म वचाओ, तो वह धर्म का सौदा हुआ।

प्रा० प्र० १, ३८३

५० धर्म अपने दिल की वात है। इसान जाने और उसका ईश्वर जाने।

प्रा० प्र० १, ४०६

५१ हम धर्म-परिवर्तन करने से तो मरना अच्छा समझेगे।

प्रा० प्र० २, २४

५२ दुनिया के दूसरे लोग धर्म का पालन नही करते, इसलिए क्या मै भी धर्म का पालन न करू !

प्रा० प्र० २, ७५

५३ धर्म तो अलग-अलग व्यक्ति का अलग रह सकता है ।

प्रा० प्र० २, १३५

५४ जवरदस्ती से किसी का धर्म नही वदला करता ।

प्रा० प्र० २, १३६

५५ 'धर्म-पलटा' शव्द मेरी डिक्शनरी मे नही ।

प्रा० प्र० २, २३७

५६ पैसे से धर्म नही चलता ।

प्रा० प्र० २, २३७

५७ भगवान तो हमारे पास पडा है, उसे हम पहचाने । सवसे वडा गिरजाघर है ऊपर आकाश और नीचे धरतीमाता । खुले मे क्या भगवान का नाम नही लिया जा सकता ? भगवान की पूजा के लिए न सोना चाहिए, न चादी । अपने धर्म का पालन हम खुद ही कर सकते है और खुद ही उसका हनन कर सकते है ।

प्रा० प्र० २, २३८

२—ईश्वर

१ जिसे ईश्वर बचाना चाहता है, वह गिरने की इच्छा रखते हुए भी पवित्र रह सकता है ।

आ० क०, १६

२ जीवन की डोर तो एक ईश्वर के ही हाथ मे है । ईश्वर का नाम लेकर, उस पर श्रद्धा रखकर, तू अपना मार्ग मत छोड ।

आ० क०, २१५

३ इस ससार मे जहा ईश्वर अर्थात् सत्य के सिवा कुछ भी निश्चित नही है, निश्चितता का विचार करना ही दोषपूर्ण प्रतीत होता है ।

आ० क०, २१८

४ पालन करनेवाला तो ईश्वर ही है ।

आ० क०, २२६

५ सपूर्ण ईश्वरार्पण के विना विचारो पर सपूर्ण विजय प्राप्त हो ही नही सकती ।

आ० क०, २७७

६ ईश्वर न तो ऊपर स्वर्ग मे है, न नीचे किसी पाताल मे, वह तो हर-एक के हृदय मे विराजमान है।

स० ई०, ५

७ ईश्वर एक अनिर्वचनीय रहस्यमयी शक्ति है, जो सर्वत्र व्याप्त है; मैं उसे अनुभव करता हू, यद्यपि देखता नही हू।

स० ई०, ७

८ सब प्राणियो का शासन करनेवाला यह नियम ही ईश्वर है। नियम और नियामक एक ही है।

स० ई०, ७

९ ईश्वर जीवन है, सत्य है, और प्रकाश है। वही प्रेम है, वही परम मगल है।

स० ई०, ८

१० मै जितना शुद्ध बनने की कोशिश करता हू, उतना ही ईश्वर से निकटता अनुभव करता हू।

स० ई०, ९

११ मेरी दृष्टि मे ईश्वर सत्य और प्रेम है, ईश्वर नीति और सदाचार है, ईश्वर अभय है। ईश्वर प्रकाश और जीवन का स्रोत है, फिर भी वह इन सबसे ऊपर और परे है। ईश्वर अतरात्मा है। वह नास्तिक की नास्तिकता भी है, क्योकि अपने नि सीम प्रेम के कारण वह उसे भी रहने देता है।

स० ई०, १०

१२ ईश्वर वाणी और बुद्धि से परे है।

स० ई०, १०

१३ ईश्वर कोई ऐसी शक्ति नही है, जो दूर कही बादलो मे रहती हो। ईश्वर हमारे भीतर रहनेवाली अदृश्य शक्ति है और पलके आखो के जितनी निकट है, उनसे भी वह हमारे ज्यादा निकट है।

स० ई० १८

१४ ईश्वर और उसका कानून एक ही है। वह कानून ही ईश्वर है।

स० ई०, २१

१५ ईश्वर सर्वशक्तिमान और सर्वत्र है।

स० ई०, २१

१६ ईश्वर कोई व्यक्ति नही है, वह वर्णन से परे है।

स० ई०, २३

१७ ईश्वर कानून बनानेवाला है, कानून भी है और उसे कार्यान्वित करानेवाला भी है।

स० ई०, २३

१८ मानव-जाति ईश्वर को, जो मनुष्य की वुद्धि के लिए अगम्य है और जिसका वैसे कोई नाम नही हो सकता, जिन अनत नामो से पहचानती है उनमे से एक नाम दरिद्रनारायण है। उसका अर्थ है गरीबो का, यानी उनके हृदय मे प्रकट होनेवाला, ईश्वर।

स० ई०, २७

१९ ईश्वर अपने को सिद्ध करने का विपय वनाये और वह भी अपनी ही सतानो के द्वारा, तो ईश्वर न रह जाय।

स० ई०, २७

२० ईश्वर के प्रति मेरा समर्पण जितना अधिक रहा है, उतना ही मेरा आनद वढा है।

स० ई०, २७

२१ मेरे लिए सत्य सर्वोपरि सिद्धात है, जिसमे दूसरे अनेक सिद्धातो का समावेश हो जाता है। यह सत्य वाणी का स्थूल सत्य ही नही है, अपितु विचार का सत्य भी है, और न केवल हमारी कल्पना का सापेक्ष सत्य है, वल्कि स्वतत्र चिरस्थायी सत्य है, यानी परमेश्वर ही है।

स० ई०, ३१

२२ ईश्वर की असख्य व्याख्याए है, क्योकि उसकी विभूतिया भी अगणित है।

स० ई०, ३१

२३ मैं ईश्वर की पूजा सत्य के रूप मे ही करता हू।

स० ई०, ३१

२४ इद्रियो के द्वारा ईश्वर को पहचानने मे हमे सदा असफलता होगी, क्योकि वह इद्रियो से परे है। हा, यदि हम इद्रियो से अपने को विरत करले तो उसका अनुभव कर सकते है।

म० ई०, ३०

२५ मनुष्य का अतिम लक्ष्य ईश्वर से साक्षात्कार हे और उसकी सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक सभी प्रवृत्तिया ईश्वर-दर्शन के अतिम उद्देश्य से प्रेरित होनी चाहिए। समस्त मानव-प्राणियो की तात्कालिक सेवा इस प्रयत्न का आवश्यक अग वन जाती है। परतु मैं जानता हू कि मैं उसे मानवता से अलग कही नही पा सकता।

स० ई०, ३३

२६ मै हवा और पानी के विना रह सकता हू, परन्तु ईश्वर के विना नही रह सकता। आप मेरी आखे निकाल ले, इससे मैं नही मरुंगा, आप मेरी नाक काट डाले, इससे भी मै नही मरुगा, परतु आप मेरा ईश्वर पर विश्वास नष्ट करदे तो मै निष्प्राण हो जाऊगा।

स० ई०, ३४

२७ पृथ्वी तल पर मैने ईश्वर-जैसा कठोर मालिक नही देखा। वह हमारी परीक्षा वार-वार लेता ही रहता है।

स० ई०, ३४

२८ तूफानो मे थपेडे खाते हुए विश्व मे कौन यह कहने का साहस करेगा कि मेरी जीत हुई है! विजय हमारे भीतर के ईश्वर की होती हे, हमारी नही।

स० ई०, ३७

२९ मेरी राय मे राम, रहमान, अहुरमज्द, गॉड या कृष्ण, ये सव उस अदृश्य शक्ति को, जो सव शक्तियो से वडी है, कोई नाम देने के मानव-प्रयत्न है।

स० ई०, ४२

३० ईश्वर का वर्णन मनुष्य अपनी टूटी-फूटी भाषा मे ही कर सकता है। जिस शक्ति को हम ईश्वर कहते है, वह वर्णनातीत है।

स० ई०, ४२

३१ ईश्वर ही वह प्राणभूत शक्ति या आत्मा है, जो सर्वव्यापी, सर्व-ग्राही और, इसलिए, मानव-बुद्धि से परे है।

स० ई०, ४३

३२ कुछ लोग ईश्वर को राम कहते है, कुछ कृष्ण और कोई रहीम और कोई उसे गॉड कहते है। सब उसी एक तत्त्व की पूजा करते है, परतु जैसे सब आहार सभी को अनुकूल नही होते, उसी तरह सब नाम सब को नही भाते।

स० ई०, ४५

३३ मेरा यह विश्वास जरूर है कि प्रत्येक मनुष्य के लिए ईश्वर के बराबर ही पूर्ण हो जाना सभव है।

स० ई०, ५७

३४ ईश्वर कोई व्यक्ति नही है। यह कहना कि वह मनुष्य के रूप मे समय-समय पर पृथ्वी पर उतरता है, आशिक सत्य है और उसका इतना ही अर्थ है कि इस प्रकार का मनुष्य ईश्वर के निकट रहता है।

स० ई०, ७८

३५ हम ईश्वर के न हो तो भी ईश्वर के तो है ही, जैसे पानी की छोटी-सी बूद महासागर की होती है।

स० ई०, ८६

३६ ईश्वर और उसका नियम एक ही वस्तु है। इसलिए उसके नियम का पालन करना पूजा का सबसे अच्छा रूप है। जो उस नियम के साथ एक हो जाता है उसे जबान से उसका नाम लेने की जरूरत नही रहती।

स० ई०, १०७

३७ कोई भी काम, जो ईश्वर के नाम पर और उसे अर्पित करके किया जाता है, छोटा नही होता।

स० ई०, १२६

३८ एक भगी, जो ईश्वर की सेवा के लिए काम करता है और एक राजा, जो उसकी दी हुई वस्तुओ को उसके नाम पर और केवल सरक्षक बनकर काम मे लेता है, दोनो का दरजा बराबर है।

स० ई०, १२६

भी एक ही वस्तु है। देवता परमेश्वर की एक शक्ति है, उसकी उपासना से भी अंत में परमेश्वर तक पहुंचा जा सकता है।

म० डा० ७, ८५

५९ जब क्षितिज अत्यंत अंधकारमय होता है, जब चारों ओर निराशा का घोर अंधकार छा जाता है, तब अक्सर दिव्य प्रकाश हमारा मार्ग-दर्शन करता है।

मो० मा०, १

६० जब हम अपने पैरों-तले की धूल से भी अधिक नम्र बन जाते हैं, तब ईश्वर हमारी मदद करता है। केवल दुर्बल और निराधार के लिए ही ईश्वरीय सहायता का वचन दिया गया है।

मो० मा०, ६

६१ हम ईश्वर से डरेंगे तो मनुष्य का हमारा डर मिट जायगा।

मो० मा०, ६६

६२ ईश्वर को नहीं मानने से सबसे बड़ी हानि वही है, जो हानि अपने को नहीं मानने से हो सकती है, अर्थात ईश्वर को न मानना आत्म-हत्या-जैसा है।

म० डा० १, ८१

६३ ईश्वर को मानना चाहिए, क्योंकि हम अपने को मानते हैं। जीव की हस्ती है तो जीव-मात्र का समुदाय ईश्वर है और यही प्रबल प्रभाव है।

म० डा० १, ८७

६४ ईश्वर तो अंतर में है। इसलिए भौतिक विज्ञान में कुछ भी शोध की जाए, तो भी उससे ईश्वर पर जीवित श्रद्धा नहीं हो सकती।

म० डा० १, ११७

६५ ईश्वर के अस्तित्व के बारे में दलील न करो, जैसे हम अपनी हस्ती के बारे में दलील नहीं करते। यूक्लिड के स्वयंसिद्ध सूत्र की तरह यह मान ही लो कि ईश्वर है, क्योंकि असंख्य धर्मात्मा ऐसा कह गए हैं और उनका जीवन इस बात का असंदिग्ध प्रमाण है।

म० डा० १, ११७

६६ हम अगर अपने-आपको भगवान की इच्छा के सिपुर्द कर दे तो हमे कभी चिंता करनी ही न पडे ।

म० डा० १, १६५

६७ ईश्वर मे श्रद्धा न होने से आत्म-विश्वास का अभाव होता है ।

बा० प० मी० २३९

६८ भीतर का आनद ईश्वर का काम करने से ही पैदा होता है ।

बा० आ०, १३

६९ जो ईश्वर को अधिक चाहता है, उसकी वह ज्यादा कसौटी करता है ।

गा० प० म०, ९५

७० ईश्वर स्वय न नर है, न नारी है, उसके लिए न पक्ति-भेद हे न योनि-भेद है, न वह 'नेति-नेति' है। वह हृदय-रूपी वन मे रहता है और उसकी वसी मे है अतर्नाद । हमे निर्जन वन मे जाने की आवश्यकता नही है। अपने अतर मे हमे ईश्वर का मधुर नाद सुनना है ।

प्रा० प्र० १, १३१

७१ अकेले आदमी की रक्षा ईश्वर करता ही है । इसीलिए उसे 'निर्बल के बल राम' कहा जाता है ।

प्रा० प्र० १, १३९

७२ पैसा-बल, शरीर-बल या पशु-बल—ये सब जडवाद के द्योतक है, परतु इन सबसे बडा ईश्वर का बल है ।

प्रा० प्र० १, २००

७३ सिवा ईश्वर की मदद के और कोई चारा ही नहीं है ।

प्रा० प्र० १, ४२८

७४ रक्षा का पहला साधन तो अपने हृदय मे पडा है । वह है ईश्वर मे अटल श्रद्धा, दूसरा है पडोसियो की सद्भावना ।

प्रा० प्र० १, ४४३

७५ ईश्वर का जो नियम है उसे कौन फेर सकता है, और दुनिया मे जो वडे-वडे नियम हे, उन्हे ईश्वर नही फेर सकता।

प्रा० प्र० २, १८

३—आत्मा

१ आध्यात्मिक सवध से रहित लौकिक सवध प्राणहीन देह के समान है।

श्रा० क०, २२६

२ आत्मा-विहीन व्यक्ति पृथ्वी पर भार-स्वरूप होता है।

सर्वो०, १७६

३ आत्मा अविनाशी है और सेवा-कार्यो के द्वारा अपनी मुक्ति निकालने के लिए नये-नये रूप धारण करती रहती है।

दि० डा०, २८

४ आत्मा अमर है, शरीर नाशवान है।

दि० डा०, २३१

५ आत्मा की अमरता मे मेरा विश्वास हे।

स० ई०, १३५

६ बुद्धि की तीव्रता की अपेक्षा हृदय का वल करोडो-गुना कीमती है, अत उसका विकास करना चाहिए।

बा० आ०, २१७

७ जितना साफ असर भौतिकशास्त्र मे अमुक मिश्रणो का या क्रियाओ का हम देखते है, उतना ही, वल्कि उससे भी ज्यादा, साफ असर रूहानी क्रियाओ का होता है।

स० ई०, १२

८ आत्म-विश्वास सच्चा तव कहा जायगा जव वह निराशा के समय भी अचल रहे।

बा० प० म०, १६

९ आत्मा की न मृत्यु है और न वियोग।

बा० प० मी०, २१

१० आत्म-विश्वास का अर्थ है अपने काम मे अटूट श्रद्धा।

म० डा० १, २३०

११ जिसका आत्म-बल पर विश्वास है, उसकी हार नही होती, क्योकि आत्म-बल की पराकाष्ठा का अर्थ है मरने की तैयारी।

म० डा० २, ६

१२ आजकल के गलत जीवन का हम दिलो-जान से विरोध करे, तो ही आध्यात्मिक एकता प्राप्त हो सकती है।

म० डा० ७, ११

१३ इस शरीर के नाश के साथ आत्मा का नाश नही है, ऐसी प्रतीति सबको है। ऐसे ही इस शरीर के पहले भी आत्मा का अस्तित्व था।

म० डा० २, १५२

१४ जिसे आत्मा का जरा भी भान हो, वह मृत्यु का स्वरूप समझता है। वह क्यो वृथा शोक करे!

म० डा० १, ७८

१५ आत्मा की शक्ति को पहचानना ही आत्म-ज्ञान है। आत्मा तो बैठे-बैठे दुनिया को हिला सकती है।

म० डा० १८०, १२०

१६ आध्यात्मिक अनुभव विचार से भी अधिक गहरे होते है।

सि० गा० १८

१७. आदमी की प्रतिष्ठा एक बहुत ऊचे नियम, अर्थात् आत्मबल के नियम, का पालन चाहती है।

सि० गा०, १४६

१८ हमे शरीर के चिकित्सक की बजाय आत्मा के चिकित्सको की आवश्यकता है।

मो० मा०, २२

१९ आत्मा से सबध रखनेवाली बातो मे पैसे का कोई स्थान नही है।

गा० का पुन०, १

७५ ईश्वर का जो नियम है उसे कौन फेर सकता है, और दुनिया मे जो बडे-बडे नियम है, उन्हे ईश्वर नहीं फेर सकता।

ग्रा० प्र० २, १८

३—आत्मा

१ आध्यात्मिक तत्त्व से रहित लौकिक सत्त्व प्राणहीन देह के समान है।

ज्ञा० क०, २२६

२ आत्मा-विहीन व्यक्ति पृथ्वी पर भार-स्वरूप होता है।

सर्वो०, १९६

३ आत्मा अविनाशी है और सेवा-कार्यों के द्वारा अपनी मुक्ति निकालने के लिए नये-नये रूप धारण करती रहती है।

दि० डा०, २८

४ आत्मा अमर है, शरीर नाशवान है।

दि० डा०, २३१

५ आत्मा की अमरता मे मेरा विश्वास है।

स० ई०, १३५

६ बुद्धि की तीव्रता की अपेक्षा हृदय का बल करोडो-गुना कीमती है, अत उसका विकास करना चाहिए।

बा० आ०, २१७

७ जितना साफ असर भौतिकशास्त्र मे अमुक मिश्रणो का या क्रियाओ का हम देखते है, उतना ही, बल्कि उससे भी ज्यादा, साफ असर रूहानी क्रियाओ का होता है।

स० ई०, १२

८ आत्म-विश्वास सच्चा तब कहा जायगा जब वह निराशा के समय भी अचल रहे।

बा० प० म०, १६

९ आत्मा की न मृत्यु है और न वियोग।

बा० प० मी०, २१

१० आत्म-विश्वास का अर्थ है अपने काम मे अटूट श्रद्धा ।

म० डा० १, २३०

११ जिसका आत्म-बल पर विश्वास है, उसकी हार नही होती; क्योकि आत्म-बल की पराकाष्ठा का अर्थ है मरने की तैयारी ।

म० डा० २, ६

१२ आजकल के गलत जीवन का हम दिलो-जान से विरोध करे, तो ही आध्यात्मिक एकता प्राप्त हो सकती है ।

म० डा० ?, ११

१३ इस शरीर के नाश के साथ आत्मा का नाश नही है, ऐसी प्रतीति सबको है। ऐसे ही इस शरीर के पहले भी आत्मा का अस्तित्व था ।

म० डा० २, १५२

१४ जिसे आत्मा का जरा भी भान हो, वह मृत्यु का स्वरूप समझता है । वह क्यो वृथा शोक करे !

म० डा० १, ७८

१५ आत्मा की शक्ति को पहचानना ही आत्म-ज्ञान है । आत्मा तो बैठे-बैठे दुनिया को हिला सकती है ।

म० डा० १न०, १२०

१६ आध्यात्मिक अनुभव विचार से भी अधिक गहरे होते है ।

सि० गा० १८

१७ आदमी की प्रतिष्ठा एक बहुत ऊचे नियम, अर्थात् आत्मबल के नियम, का पालन चाहती है ।

सि० गा०, १४६

१८. हमे शरीर के चिकित्सक की बजाय आत्मा के चिकित्सको की आवश्यकता है ।

मो० मा०, २२

१९ आत्मा से सबध रखनेवाली बातो मे पैसे का कोई स्थान नही है ।

गा० का पुन०, १

२० मानव के पास कितना ही धन या सुख-सामग्री रहे, फिर भी जबतक आतरिक शाति नही होती तबतक कभी बरकत नही होती ।

ग्र० भा०, ७५

२१ आत्मा की वीरता त्याग, निश्चय, श्रद्धा और नम्रता के बिना प्राप्त नही हो सकती ।

वि०, १०

२२ पशुबल अस्थायी है और अध्यात्मबल या आत्मबल या चैतन्य-वाद एक शाश्वत बल है । वह हमेशा रहनेवाला है, क्योकि वह सत्य है । जडवाद तो एक निकम्मी चीज है ।

प्रा० प्र० १, ७००

२३ आखिर मे तो चैतन्यवाद या आत्मवाद की ही विजय होगी ।

प्रा० प्र० १, ७००

४—आत्म-शुद्धि

१ सूक्ष्म विकारो पर विजयी होना मुझे शस्त्र-बल द्वारा ससार की भौतिक विजय से कठिन प्रतीत होता है ।

आ० क०, ५४

२ बिना आत्म-शुद्धि के जीवमात्र के साथ ऐक्य सध ही नही सकता । आत्म-शुद्धि के बिना अहिसा-धर्म का पालन सर्वथा असभव है । अशुद्ध आत्मा परमात्मा के दर्शन करने मे असमर्थ है । अतएव जीवन-मार्ग के सभी क्षेत्रो मे शुद्धि की आवश्यकता है ।

आ० क०, ४३२

३ निष्कलक चरित्र और आत्म-शुद्धिवाले मनुष्यो के प्रति आसानी से विश्वास हो जायगा और उनके आसपास का वातावरण अपने-आप शुद्ध हो जायगा ।

स० ई०, ५४

४ सब प्राणियो के साथ तादात्म्य-साधना आत्म-शुद्धि के बिना असभव है ।

स० ई०, ५४

५. आत्म-शुद्धि के बिना अहिंसाधर्म का पालन थोथा स्वप्न ही रहेगा ।

स० ई०, ५४

६ आत्म-शुद्धि का अर्थ जीवन की सभी पहलुओ से शुद्धि होना चाहिए ।

स० ई०, ५४

७ पूर्ण शुद्धता प्राप्त करने के लिए मनुष्य को मन, वचन और कर्म मे सर्वथा विकाररहित बनना पडता है । उसे प्रेम और घृणा, राग और द्वेष की विरोधी घटनाओ से ऊपर उठना होता है ।

स० ई०, ५४

८ स्थायी और लाभदायक मुक्ति भीतर से, अर्थात् आत्म-शुद्धि से, होती है ।

सर्वो०, १७५

९ जहा मनोवल नही है, वहा आत्मशक्ति नही हो सकती ।

हिं० स्व०, ८४

१० आत्म-शुद्धि मे से आत्म-ज्ञान होता है ।

म० मा० डा० २, ९६

११ आत्म-शुद्धि का मार्ग वडा विकट है। पूर्ण शुद्ध बनने का अर्थ है मन से, वचन से और काम से निर्विकार वनना, राग-द्वेषादि के परस्पर-विरोधी प्रवाहो से ऊपर उठना ।

मो० मा०, ५७

१२. जो सचमुच भीतर मे स्वच्छ है, वह बाहर मे अस्वच्छ हो ही नही सकता ।

बा० आ०, १२९

१३ मनुष्य को आत्म-शुद्धि का प्रयास करना चाहिए । पैसे से या पैसा विगाडने से किसी की कीमत नही बढती ।

अ० भा०, १८४

१४ हरएक आदमी, दूसरे क्या करते है, उसे न देखे, वल्कि अपनी ओर देखे और जितनी आत्म-शुद्धि कर सके, करे ।

प्रा० प्र० २, ३०९

१५ जनता बहुत परिमाण मे आत्म-शुद्धि कर लेगी तो उसका हित होगा ।

प्रा० प्र० ८, ३०४

५—अतरग की आवाज

१ इस आवाज को जो चाहे सुन सकता है। वह हरएक के अदर है । लेकिन दूसरी चीजो की तरह उसके लिए भी निश्चित पूर्व-तैयारी की आवश्यकता है ।

स० ई०, २६

२ मेरा दृढ विश्वास हे कि वह अपने को प्रत्येक मानव-प्राणी के सामने रोज प्रकट करता है। मगर हम भीतर की इस शात आवाज के लिए अपने कान वद कर लेते हे, हम अपने सामने के अग्नि-स्तभ के प्रति आखे मूद लेते हैं। मैं उसकी सर्वव्यापकता को अनुभव करता हू ।

स० ई०, ३३

३ न्याय की अदालतो से भी एक वडी अदालत होती है । वह अदालत अतर की आवाज की हे और वह अन्य सव अदालतो से ऊपर की अदालत है ।

य० अ०, ७६

४ हरएक स्त्री-पुरुष को अपनी आतरिक आवाज का अनुकरण करना चाहिए ।

फा० पै०, १०६

५ जव मनुष्य अतर्नाद की प्रेरणा होने की वात कहता हे, तव उसे ईश्वर की दया पर छोड देना चाहिए ।

म० डा० ७, १२१

६ हरएक मनुष्य के अदर से ईश्वर वोलता तो है ही, परतु हरएक मनुष्य उसे सुन नही सकता । अतर की आवाज दो तरह की होती है, ईश्वर की और शैतान की । किसकी है, इसका निर्णय तो परिणाम पर से ही किया जा सकता है ।

म० डा० ३, ३७

७ करोडो मनुष्य अतरात्मा की आवाज का दावा करे, तो भी सच्ची अतरात्मा की आवाज एक ही होगी ।

म० डा० ३, ४८

८ हरएक को अपनी अतरात्मा की आवाज का हुक्म मानना चाहिए। अतरात्मा की आवाज न सुन सके तो जैसा ठीक समझे वैसा करना उचित होगा, लेकिन किसी भी सूरत मे दूसरो की नकल नही करनी चाहिए ।

प्रा० प्र० १, १६४

६—आतरिक प्रकाश

१ भगवान ही हमारी आत्मा को सच्ची रोशनी दे सकता है, और ऐसी ही रोशनी सच्ची रोशनी है ।

प्रा० प्र० २, ७०

२ सच्ची रोशनी भीतर से पैदा होती है ।

प्रा० प्र० २, ७०

३ अगर वाहर की रोशनी भीतर की ज्योति का ही नमूना है तव तो खैर है, और अगर भीतर अधेरा है और वाहर हम दिया-वत्ती जलाते है और ऐसा मान लेते है कि यह तो सब चलता है, तव हम पाखडी और झूठे वनते है ।

प्रा० प्र० २, ७२

७—सिद्धात

१ छोटी-छोटी वातो मे ही हमारे सिद्धातो की परीक्षा होती है ।

ऐ० वा०, ७१

२ व्यवहार सदा सिद्धात से छोटा ही रहेगा, जैसे कि खिची हुई रेखा यूक्लिड की सैद्धातिक रेखा से छोटी रहती है ।

रच० का०, ७

३ जव तत्त्व व्यवहार मे आता न दीखे तव जान लो कि हमने तत्त्व को अच्छी तरह नही पहचाना है। परतु तत्त्व हमारे व्यवहार मे उतरना ही चाहिए। पूरी तरह तो कोई तत्त्व व्यवहार मे नही उतारा जा सकता; परतु जो व्यवहार तत्त्व के निकट नही जाता वह अशुद्ध और त्याज्य है ।

वा० प० प्रे०, १५८

४ कुछ सिद्धात ऐसे शाश्वत और सनातन होते है, जिनमे समझौते के लिए अवकाश ही नही होता, और ऐसे सिद्धातो पर अमल करने के लिए मनुष्य को प्राणो का वलिदान देने के लिए भी तैयार रहना चाहिए।

मो० मा०, ३०

५ मानव-जीवन समझौतो की एक दीर्घ परपरा है, और जिस वात को हमने सिद्धात के रूप मे सत्य पाया है, उसे व्यवहार मे सिद्ध करना हमेशा आसान नही होता ।

मो० मा०, ३०

८—भावना

१ शब्दो मे चमत्कार भरा होता है। शब्द भावना को देह देता है और भावना शब्द के सहारे साकार वनती है ।

खा०, २०८

२ केवल जोश और भावना-वश होकर किया हुआ काम आखिर टिकता नही ।

खा०, २३४

३ जहा भावना की हत्या होती है वहा शब्द का उतना ही उपयोग है, जितना उस शरीर का जिसमे से प्राण निकल गए है ।

खा०, २८१

४ महत्त्व मानसिक वृत्ति का है, न कि ऊपरी दिखावे का ।

ए० वा०, १३

५ भावना का स्थान हृदय मे है। अगर हम हृदय शुद्ध न रखेंगे, तो भावना हमे गलत रास्ते ले जायगी ।

म० डा० ३, १८४

६ मनुष्य के भावना न हो तो मनुष्य का मूल्य ही क्या ?

म० डा० ३, ३११

७ दुर्भावना को मै मनुष्यत्व का कलक मानता हू ।

गा० वा०, ८९

८ महज भावना का कोई उपयोग नही है, ठीक उसी तरह जैसे

कि भाप का अपने-आप मे कोई उपयोग नही। भाप को उचित नियत्रण मे रखा जाय तभी उसमे ताकत पैदा होती है। यही बात भावना की है।

मे० स० भा०, १६२

९ भावना कई बार कष्टप्रद सिद्ध होती है, लेकिन भावनाहीन मनुष्य पशु-तुल्य है। भावना को सही दिशा मे ले जाना हमारा परम कर्तव्य है।

बा० प० प्रे०, १५

१० भावना सीधे मार्ग पर जा सकती है। उसे सीधे मार्ग पर ले जाना परम अर्थ है।

बा० प० प्रे०, १६

११ भावना को गलत मार्ग से रोकने की शक्ति हम सबमे होती ही है। यह उत्कृष्ट प्रयत्न है। इस प्रयत्न मे हार के लिए स्थान ही नही है।

बा० प० प्रे०, १७

१२ शब्दो के पीछे रही भावना का अध्ययन करना चाहिए। केवल शब्दो को नही पकड रखना चाहिए।

ए० च०, १७७

९—प्रकृति

१ प्रकृति की शक्तिया रहस्यमय ढग से काम करती है।

स० ई०, १३१

२ मनुष्य मे प्रकृति को काबू मे रखने और उसके बलो को जीतने की शक्ति है।

खा०, २२

३ जगत हम ही है। हम उसके अदर है, वह हमारे अदर है। ईश्वर भी हमारे अदर है।

बा० आ०, २३७

४ प्रकृति की शक्तिया एक रहस्यमय ढग से काम करती है।

फा० पै०, ८३

५ जैसा पिड मे वैसा ब्रह्माड मे है। ब्रह्माड को जानने जाय तो भूल करेगे, परंतु पिड तो हमारे हाथ मे है।

बा० प० प्रे०, १६

६ हमे प्रकृति ने तो अपार भडार दिया है, परतु आलस्य हमे खा जाता है।

ए० च०, ३६

७ हम कुदरत की देन को किसी भी तरह काम मे ले, फिर भी कुदरत तो दोनो पलडे वरावर रखती ही है। कुदरत के वहीखाते मे न जमा है, न वाकी। वहा तो रोज आमद-खरच वरावर होकर शून्य वाकी रहता है। इस शून्य मे हमे शून्य के समान होकर समा जाना हे।

न० ई०, ५१

१०—श्रद्धा

१ जिसकी निष्ठा सच्ची है, उसकी रक्षा स्वय भगवान ही कर लेते हे।

आ० क०, १०

२ शका के मूल मे श्रद्धा का अभाव रहता हे।

आ० क०, ३६५

३ श्रद्धा की आवश्यकता है ही। मैंने तो सव धर्मो मे यही आदेश पाया है कि अपनी चिता ही न करनी, सव ईश्वर के भरोसे छोड देना।

य० म०, १७५

४ जिनमे श्रद्धा है, उनके लिए वह केवल सत्-स्वरुप है। वह सव मनुष्यो के लिए प्रत्येक की भावना के अनुसार सव-कुछ है। वह हमारे भीतर है और फिर भी हमसे ऊपर ओर परे है।

स० ई०, १०

५ मानव प्राणी जितनी अधिक-से-अधिक आध्यात्मिक उच्चता प्राप्त कर सकते है, उसके लिए जरूरत सिर्फ अटल और सजीव श्रद्धा की है।

स० ई०, ३२

६ वही सच्ची प्रार्थना कर सकता है, जिसे दृढ विश्वास हो कि ईश्वर उसके भीतर है। जिसे यह विश्वास नही है, 'उसे' प्रार्थना करने की जरूरत नही।

स० ई०, ४३

७ श्रद्धा ही हमे तूफानी समुद्रो के पार ले जाती है, श्रद्धा ही पहाडो

को हिलाती है और श्रद्धा ही समुद्र लाघ जाती है। यह श्रद्धा अतर्यामी ईश्वर के सजीव और जागृत भाव के सिवा और कुछ नही है।

स० ई०, ४६

८ अपने अतर मे ईश्वर के वास का सजीव विश्वास न हो, तो प्रार्थना असभव है।

स० ई०, ५२

९ श्रद्धा एक तरह की छठी इद्रिय है, जो उन मामलो मे काम देती है, जो बुद्धि के क्षेत्र से बाहर है।

स० ई०, ८६

१० श्रद्धा के बिना यह ससार क्षण-भर मे नष्ट हो जायगा।

स० ई०, ८६

११ बुराई की जड चेतन-ईश्वर मे सजीव श्रद्धा का अभाव है।

स० ई०, १३३

१२ विश्वास की शक्ति ऐसी है कि अत मे मनुष्य वैसा ही बन जाता है, जैसा वह अपने-आपको समझता है।

सर्वो०, १००

१३ श्रद्धा कभी गुम नही होती। वह आगे-आगे ही बढती चली जाती है। उसके सहारे से बुद्धि तेजस्वी होती जाती है और फिर श्रद्धा बुद्धि-वाद का सामना कर सकती है।

खा०, २०७

१४ उत्साह टिकाने मे एक ही वस्तु का काम है—ईश्वर पर सजीव श्रद्धा।

बा० प० ज०, ७४८

१५ श्रद्धा तो ज्ञानमयी और विवेकपूर्ण है। जो बुद्धि का विषय है, वह श्रद्धा का विषय कदापि नही हो सकता। इसलिए अधश्रद्धा श्रद्धा ही नही।

गा० वा०, ८२

१६ श्रद्धा से मनुष्य क्या नही कर सकता। सब-कुछ कर सकता है।

बा० आ० ३५

१७ जिस विषय मे वुद्धि का प्रयोग किया जा सकता है, वहा केवल श्रद्धा से हम नही चल सकते। जो वाते वुद्धि से परे है, उन्ही के लिए श्रद्धा का उपयोग है।

गा० वा०, ८५

१८ जहा वडे-वडे वुद्धिमानो की वुद्धि काम नही करती वहा एक श्रद्धालु की श्रद्धा काम कर जाती हे। जहा श्रद्धा है, पराजय नही, श्रद्धालु का अकर्म भी कर्म हो जाता हे।

गा०, वा० ८०

१९ सच्ची श्रद्धा का अर्थ हे ऐसे लोगो के ज्ञानपूर्ण अनुभव का उपभोग करना, जिनके वारे मे हमारा यह विश्वास है कि उन्होने प्रार्थना और तपस्या से शुद्ध और पवित्र वना हुआ जीवन विताया हे।

मो० मा० ४७

२० उस श्रद्धा का कोई मूल्य नही है, जो केवल सुख के समय ही पनपती है। सच्चा मूल्य तो उस श्रद्धा का हे, जो कडी-से-कडी कसौटी के समय भी टिकी रहे। यदि आपकी श्रद्धा सारी दुनिया की निदा के सामने भी अडिग खडी न रह सके, तो वह निरा दभ और ढोग है।

मो० मा०, ४८

२१ श्रद्धा ऐसा सुकुमार फूल नही है, जो हल्के-से-हल्के तूफानी मौसम मे भी कुम्हला जाय। श्रद्धा तो हिमालय पर्वत के समान है, जो कभी डिग ही नही सकती।

मो० मा०, ४९

२२ जहा श्रद्धा होती है, वहा दूसरे सामान अपने-आप आ जाते हे। श्रद्धा के अनुसार ही वुद्धि सूझती है, मेहनत आती है।

म० ई०, ५९

२३ सच्ची श्रद्धा हो जाने पर वाहर से लगनेवाले सकट भी ऐसी श्रद्धावाले को सकट नही लगते।

म० डा० १, १५५

२४. किसको किस प्रसग पर ईश्वरीय ज्ञान हुआ है, यह जानने से ईश्वरीय ज्ञान नही होता, मगर सयममयी श्रद्धा से होता है।

म० डा० १, २३७

२५ मनुष्य की श्रद्धा जितनी तीव्र होती है, उतनी ही अधिक वह मनुष्य की बुद्धि को पैनी और प्रखर बनाती है। जब श्रद्धा अधी हो जाती है, तब वह मर जाती है।

मो० मा०, ४७

११—साधन और साध्य

१ साधन की बीज से और साध्य की वृक्ष से तुलना की जा सकती है। और साधन तथा साध्य मे ठीक वही अलघ्य सबध है, जो कि बीज और वृक्ष मे है।

हिं० स्व०, ७१

२ मै शैतान को साष्टाग दडवत करके ईश्वर की पूजा से मिलनेवाले फल प्राप्त नही कर सकता।

हिं० स्व०, ७१

३. आप टीन की खान मे चादी की आशा नही कर सकते।

हिं० स्व०, ७७

४. अहिसक साधनो का गुणज्ञान धैर्यपूर्ण शोध-कार्य है और उससे भी अधिक धैर्यपूर्ण और कठिन व्यवहार है।

रच० का०, २६

५ अशुद्ध साधनो का अशुद्ध परिणाम होता है।

फा० पै०, ६३-६४

६ मै सफलता की सरल (हिसक) विधियो मे विश्वास नही करता।

फा० पै० ६५

७ गदे साधनो से मिलनेवाली चीज भी गदी ही होगी।

मे० स० मा०, ७०

८ जीवन के मेरे तत्त्व-ज्ञान मे साधन और साध्य पर्यायवाची शब्द है। दोनो एक-दूसरे का स्थान ले सकते है।

मो० मा०, ७२

९ लक्ष्य की सिद्धि ठीक साधनो की सिद्धि के अनुपात मे होती है। यह ऐसा सिद्धात है जिसमे अपवाद की कोई गुजाइश ही नही हे ।

मो० मा०, ७२

१० साधन से चिपटे रहना लेकिन उसमे विश्वास न रखना, विश्वास रखनेवाले का उसपर अमल न करना—यह स्थिति कितनी दयनीय, कितनी भयकर हे !

बा० प० स०, १२६

११ हेतु की शुद्धता से असत्य सत्य नही बन सकता।

म० डा० १नई, २६३

१२ पैसे से कोई स्थायी चीज नही हो सकती।

प्रा० प्र० १, १४०

१३ नापाक साधन से ईश्वर नही पाया जा सकता और बुरी चीज को पाने का साधन पाक नही हो सकता।

प्रा० प्र० १, १४०

१४ अच्छी बात के लिए साधन भी अच्छे ही बरतने चाहिए। टेढे रास्ते से सीधी बात को नही पहुचा जा सकता। पूरब को जाने के लिए पच्छिम की ओर नही चलना चाहिए।

प्रा० प्र० १, १४६

१२—सम्यक् विचार

१ अहिसा मे मूल तत्त्व सम्यक् विचार है।

ग्ली० बा० फी०, २४

२ सम्यक् विचार न तो ठीक रूप से सोचना है और न ठीक योजना बनाना है, यह तो मूल बातो का सम्यक् रूप से समझना हे। उदाहरण के तौर पर, 'ईश्वर है'—यह सम्यक् विचार है और 'ईश्वर नही है'—यह मिथ्या विचार है।

ग्ली० बा० फी० २४

३ सम्यक् विचार के बिना अहिसा अपने मे विश्वास की अति आवश्यक शक्ति को कभी धारण न कर सकेगी।

ग्ली० बा० फी०, २६

४ अपवित्र विचार से जो मुक्त हो जाय उसने मोक्ष प्राप्त किया । अपवित्र विचारो का सर्वथा नाश बडी तपश्चर्या से होता है। उसका एक ही उपाय है अपवित्र विचारो के आते ही उनके विरुद्ध तुरत पवित्र विचार खडे कर दे ।

वा० प० ज०, २९

६ अपवित्र विचार आये तो उससे पीछे न हटे, बल्कि अधिक उत्साहित हो ।

वा० प० ज०, ३० .

७ हरएक व्यक्ति अपने लिए खुद सोचे ।

वा० प० ज०, २६७

८ मनुष्य अपने शुद्ध विचार से भी सेवा कर सकता है । सलाह इत्यादि से भी कर सकता है । विशुद्ध चित्त के विचार ही कार्य है और महान परिणाम पैदा करते है ।

म० डा० १, १९५

९ विचार ही कार्य का मूल है। विचार गया तो कार्य गया ही समझो।

वा० प० म०, ४०

१० विचार पर नियत्रण रखना एक लवी, कष्टकर और कठिन परिश्रम की प्रक्रिया है ।

मो० मा०, ५४

११ विचार की शुद्धि निश्चित अनुभव-जैसी दृढ ईश्वर-श्रद्धा के विना कभी सभव ही नही है ।

मो० मा०, ५४

१२ अपवित्र विचार आकर उसी तरह शरीर को हानि पहुचाने की शक्ति रखता है, जिस तरह कि अपवित्र कार्य ।

मो० मा०, ५४

१३ मुक्त किंतु अपूर्ण विचार की शक्ति मूर्त अर्थात् कार्य-रूप मे परिणत विचार की शक्ति से कही ज्यादा बडी होती है ।

मो० मा०, ५५

१४ जिसकी विचार-शुद्धि हो गई है, उसका धर्म हो जाता है कि

वह अपने आचरण द्वारा पडोसियो को सुधारे। विचार-शुद्धि का इतना अधिक असर होता है कि आचार-शुद्धि अपने-आप हो जाती है।

नि० को० आ०, २३

१५ विचार का विरोध तो हो सकता है, लेकिन आचार मे विरोध नही होना चाहिए।

प्रा० प्र० २, ७४

१६ एक फालतू विचार कोई विचार नही।

प्रा० प्र० २, ८६

१३—कर्मयोग

१ हमारा प्रत्येक क्षण प्रवृत्तिमय होना चाहिए। परतु वह प्रवृत्ति सात्त्विक हो, सत्य की ओर ले जानेवाली हो। जिसने सेवा-धर्म को स्वीकार किया है, वह एक क्षण कर्म-हीन नही रह सकता।

य० म०, ५८

२ मैने देख लिया और मै मानता हू कि ईश्वर हमारे सामने शरीर धारण करके नही, वल्कि कार्य के रूप मे आता है, यही कारण है कि हमारा वुरे-से-वुरे समय मे उद्धार हो जाता है।

स० ई०, ३२

३ जो करो वह ठीक से करो और सुदरता से करो। छोटे या वडे किसी काम को वेगार न टालो।

वा० प० ज०, २५५

४ छोटा-वडा जो भी काम हाथ मे आया हो, उसका पालन करके शात रहना चाहिए।

वा० प० ज०, २५३

५ जितने काम की हम अच्छी व्यवस्था कर सकते है, उससे अधिक का बोझ उठाकर हम अपनी आत्मा मे झूठ का धब्बा लगा लेते है।

ऐ० वा०, १०१

६ मै समझ गया हू और मेरा विश्वास है कि ईश्वर शरीर से कभी दिखाई नही देता, परतु कर्म मे दर्शन देता है।

ऐ० वा०, ११६

७ महान काम महान बलिदान और महान उपायो के बिना नही किये जा सकते ।

डि० डू०, २६

८ निस्सदेह उचित काम को स्वेच्छा से करने मे गुण है, न कि बलात करने मे ।

डि० डू०, ४६

९ जब एक आदमी को औचित्य का विश्वास हो, तो उसे उचित काम से डरकर रुकना नही चाहिए ।

फा० पै०, २४

१० न्याय और निष्काम कर्मयोग दोनो साधन है । न्याय बुद्धि का विषय है, निष्काम कर्मयोग हृदय का है । बुद्धि से हम निष्कामता को नही पहुच सकते ।

१४—अनासक्ति

१ आसक्ति से मुक्ति ही सत्य-रूपी ईश्वर का साक्षात्कार है । यह साक्षात्कार जल्दबाजी से प्राप्त नही हो सकता ।

स० ई०, ३५

२ सत्य और अहिंसा के पूर्ण पालन के बिना पूर्ण कर्मफल-त्याग मनुष्य के लिए असभव है ।

स० ई०, ६८

३ काम करने पर भी उसका बोझ न लगे, यह अनासक्ति का रूप है ।

बा० प० प्रे०, २८

४ अनासक्त कार्य शक्तिप्रद है, क्योकि अनासक्त कार्य भगवान की भक्ति है ।

बा० आ०, २५०

५ अनासक्ति का अर्थ बेशक यह है कि अपने और अपनो के प्रति अनासक्त रहे ।

म० डा० १, -

६ वगैर अनासक्ति के मनुष्य न सत्य का पालन कर सकता है, न अहिसा का। अनासक्त होना कठिन है, इसमे सदेह नही।

म० डा० २, १६०

७ जगत मात्र की सेवा करने की भावना पैदा होने के कारण अनासक्ति सहज हो आ जाती है।

म० डा० २, १८१

८ अनासक्ति का मतलव जडता नही है, निर्दयता भी नही है, क्योकि सेवा तो करनी ही होगी, इसलिए दया की भावना मद पडने के वजाय तीव्र होगी, कार्यदक्षता भी वढेगी और एकाग्रता भी वढेगी, और ये सब अनासक्ति के चिह्न है।

म० डा० २, १८१

९ सबकी सेवा करनी हो, तो वह अनासक्तिपूर्वक ही हो सकती है।

म० डा० २, १८१

१० सच्ची निवृत्ति शरीर से नही होती, वह तो भीतर से पैदा होती है।

म० डा० २, १४१

११ उदासीनता का अर्थ अप्रसन्नता नही, वरन् विपयो से अरुचि और ससार के विपयो से अमोह है।

गा० सा०, १४३

१५—जीवन और मृत्यु

१ आत्महत्या का विचार करना सरल है, आत्महत्या करना सरल नही।

आ० क०, २१

२ हमे समझ लेना चाहिए कि जन्म की खुशी मनाना और मौत का मातम करना बेवकूफी है। जो आत्मा को मानते है—और कौन हिंदू, मुसलमान या पारसी ऐसा होगा जो आत्मा को नही मानता—वे जानते है कि आत्मा कभी मरती नही है। जीवितो और मृतो दोनो की आत्माए एक ही है।

स० ई०, १३५

१४ जानेवाले की आत्मा को सुख पहुचाने का एकमात्र उपाय यह है कि उसके सबसे प्रिय स्वप्न को चरितार्थ किया जाय, क्योकि जानेवाले की आत्मा, जो सदा हमारे साथ विद्यमान रहती है, जीवितो को निश्चित रूप मे बल पहुचाती है।

ए० आ०, १४७

१५ जीवन की समस्त शोभाए केवल तभी सभव है, जब हम शिष्टता से जीवित रहने की कला सीखते है।

फा० पे०, १०२

१६ शहीद की मृत्यु मरने के लिए हम सबको वीर होना चाहिए, परतु किसी को भी शहादत के लिए लालायित नही होना चाहिए।

सि० गा०, २४४

१७ जीवन का सपूर्ण सौंदर्य तभी खिल सकता है, जब हम उच्च कोटि का जीवन जीना सीखे।

मे० स० भा०, ३५

१८ देह के बारे मे मोह न रखकर मृत्यु से जरा भी न डरे।

गा० सा०, १४४

१९ मनुष्य-जीवन ओर पशु-जीवन मे क्या फर्क है—इसका सपूर्ण विचार करने से हमारी काफी मुसीबते हल होती है।

बा० आ०, १८३

२० अगर कोई भी वस्तु मनुष्य के सामने प्रत्यक्ष है तो वह मृत्यु तो है ही। ऐसा होते हुए भी इस अनिवार्य प्रत्यक्ष वस्तु का भारी डर लगता है, यही आश्चर्य है, यही ममता है, यही नास्तिकता है, उससे तर जाने का धर्म अकेले मनुष्य को ही सुलभ है।

बा० प० प्रे०, १५०

२१ जन्म और मरण एक ही सिक्के की दो बाजू है। एक तरफ देखो तो मरण और दूसरी तरफ जन्म। इससे दुख क्यो ! हर्ष क्यो !

बा० आ०, ९३

२२ अगर हम सच्चा जीवन व्यतीत करना चाहते है तो मानसिक

आलस्य छोडकर हमे मौलिक विचार करना होगा। परिणाम यह होगा कि हमारा जीवन बहुत सरल हो जायगा।

वा० आ०, ११३

२३ जब ईश्वर नही बचाना चाहता, तब न धन बचायेगा, न माता-पिता, न बडा डाक्टर।

वा० आ०, १८६

२४ जीवन का लोभ मनुष्य से क्या-क्या नही कराता? अतएव जो जीवन का लोभ छोडकर जीता है, वही जीता है।

गा० वा०, ५४

२५ पुत्र मरे या पति मरे, उसका शोक मिथ्या है और अज्ञान है।

गा० वा०, ११५

२६ मनुष्य जितना ही अधिक अपनी जान देता है उतना अधिक वह उसे बचाता है।

गा० वा०, ७५२

२७ मृत्यु जो शाश्वत सत्य है, उसी प्रकार एक क्राति है, जिस प्रकार जन्म और उसके बाद का जीवन एक धीमा और स्थिर विकास है। मनुष्य के लिए मृत्यु उतनी ही आवश्यक है, जितना कि स्वय जीवन।

मो० मा, ५०

२८ मृत्यु कोई राक्षसी नही है। वह हमारी सच्ची-से-सच्ची मित्र है। वह हमे यातनाओ और पीडाओ से मुक्त करती है।

मो० मा०, ५०

२९ जीवन का रहस्य निष्काम सेवा है।

म० डा० १, १५४

३० जन्म से मृत्यु ज्यादा उत्सव का प्रसग है। जन्म से पहले नौ महीने यातनाए भोगनी पडती है और जन्म के बाद भी अनेक दुख है, जब कि कुछ को मृत्यु के अवसर पर ब्राह्मी स्थिति प्राप्त होती है। इस प्रकार की मृत्यु प्राप्त करने के लिए जीवन अनासक्ति-युक्त कामो मे बीतना चाहिए।

म० डा० ७, १८३

३१ जिन्हे ईश्वर पर श्रद्धा है उनके लिए मौत और जिंदगी बराबर है। हमारा फर्ज तो आखिरी दम तक सेवा करना है।

म० डा० १, १२८

३२ जिदगी मौत की तैयारी है।

म० डा० १, १३६

३३ मौत का दुख मानने के बराबर और क्या अज्ञान हो सकता है!

म० डा० १, १७०

३४ समझनेवाले के लिए जन्म और मरण बराबर है।

म० डा० १, १८०

३५ परछाई की तरह हमारे पीछे-पीछे चलनेवाली मौत कब हमारा गला पकड लेगी, यह कौन जानता है ?

म० डा० २, ९१

३६ मृत्यु से शरीर का ही नाश होता है, अदर रहनेवाली आत्मा का नही।

म० डा० २, २३१

३७ जन्म और मृत्यु दोनो ही महान रहस्य हैं। यदि मृत्यु दूसरे जीवन की पूर्व स्थिति नही है तो बीच का समय एक निर्दय उपहास है। हमे यह कला सीखनी चाहिए कि मृत्यु किसी की और कभी भी हो, हम हरगिज रज न करे।

बा० प० म०, ३०४

३८ जीवन का सच्चा ध्येय जीवन की सार्थकता है।

वि० कौ० आ०, ८२

३९ मरने की हिम्मत पैदा करने के लिए, मरने की कला साधने का पहला और आखिरी मत्र प्रार्थना है, जिसमे पूर्ण श्रद्धा की जरूरत होती है।

वि० कौ० आ०, २५१

४० मृत्यु हमारा सच्चा और अचूक साथी है, वह सबको अपने समय पर ले जाती है।

वि० कौ० आ०, २८२

४१ विश्वास रखने मे मानव कुछ भी गवाता नही। वह अपना कर्तव्य पूरा कर सकता है। इसीका नाम है सच्ची जिदगी ।

अ० भा०, १८

४२ मृत्यु हम सबके लिए आनददायक मित्र है। वह हमेशा धन्य-वाद के लायक है, क्योकि मृत्यु से अनेक प्रकार के दुखो से हम एक बार तो बच ही जाते है ।

अ० भा०, ११६

४३ पुनर्जन्म का अर्थ है शरीर का रूपातर, आत्मा का नही। इसलिए वैज्ञानिक मान्यता से पुनर्जन्म अलग चीज है। आत्मा का रूपातर नही, बल्कि स्थानातर होता है ।

म० डा० २, २२

४४ मनुष्य के मरते समय हम उसके दोषो की याद न करे, उसके गुणो का ही स्मरण करे ।

बा० प० म०, ११५

४५ पैदा होने मे तो किसी अश मे मनुष्य का हाथ है भी, पर मरने मे सिवा ईश्वर के किसी का हाथ नही होता। मौत किसी भी तरह टाली नही जा सकती। वह तो हमारी साथी है, हमारी मित्र है। अगर मरनेवाले बहादुरी से मरे है तो उन्होने कुछ खोया नही, कमाया है।

प्रा० प्र० १, ८

४६ जन्म और मरण तो हमारे नसीब मे लिखा हुआ है, फिर उसमे हर्ष-शोक क्यो करे ! अगर हम हसते-हसते मरेगे तो सचमुच एक नये जीवन मे प्रवेश करेगे ।

प्रा० प्र० १, ३२

४७ हमे बहादुरी के साथ मरना चाहिए ।

प्रा० प्र० १, ४८

४८ सबको एक बार ही मरना है। कोई अमर तो पैदा हुआ नही है । तो फिर हम यह निश्चय क्यो न करले कि हम बहादुरी से मरेगे और मरते दम तक अपनी ओर से बुराई नही करेगे ।

प्रा० प्र० १, १०१

४९ मौत सारे प्राणियो को—इसानो, जानवरो वगैरा को—भगवान की दी हुई देन है। फर्क सिर्फ समय और तरीके का है।

प्रा० प्र० १, २९७

५० मारनेवाला कितना ही वलवान हो, मार नही सकता, जवतक ईश्वर हमारी रक्षा करता है।

प्रा० प्र० १, ३१०

५१ सवसे वडी वहादुरी और सवसे वडी समझ दुनिया की इसीमे है कि मरने का इल्म सीखो, तव जिदा रहोगे। अगर मरने का इल्म नही सीखते तो विना मौत मारे जाओगे।

प्रा० प्र० १, ३३८

५२ मरने की हिम्मत रखना सवसे वडी वहादुरी है।

प्रा० प्र० १, ३३९

५३ मुझे या किसी को जिदा रखना सिर्फ भगवान के हाथो मे है।

प्रा० प्र० १, ३८१

५४ सवके जन्म के साथ मरण भी लिखा है।

प्रा० प्र० १, ४२९

५५ कुछ लोग वृद्धावस्था को गिरना मानते है, लेकिन मैं वैसा नही मानता। वृद्धावस्था पका हुआ फल है, तो शरीर छूटता है, आत्मा थोडे ही छूटती है! वह न मरती है और न गिरती है।

प्रा० प्र० २, १८-१९

५६ लोगो को मरने से डरना नही चाहिए, क्योकि आज नही तो कल आखिर मरना ही है, तो वहादुरी के साथ क्यो न मरे?

प्रा० प्र० २, २८३

५७ सव इसानो को मरना है। जिसका जन्म हुआ है, उसे मृत्यु से मुक्ति नही मिल सकती। ऐसी मृत्यु का भय-शोक भी क्या करना!

प्रा० प्र० २, ३०४

१६—सुख-दुख

१ यह जरूरी नही कि कोई मनुष्य धनवान होने के कारण सुखी हो

और निर्धन होने के कारण दुखी हो। धनवान अक्सर दुखी और गरीब अक्सर सुखी पाये जाते है।

सर्वो०, ४५

२ हम जिस हालत मे जन्मे है, उसी मे हमे सुखी होना चाहिए और जो कर्तव्य प्रकृति ने हमारे लिए नियत किया है, उसे हमे पूरा करना चाहिए।

स्त्रि० स०, ७

३ कोई किसी की बुराई कर ही नही सकता। मनुष्य के दुख का कारण मनुष्य स्वय ही है।

आ० भा०, १३

४ सुख और दुख दोनो ईश्वर-दत्त है। इसलिए दोनो को हम शाति-पूर्वक और एक ही भाव से स्वीकार करे।

म० डा० २, ६३

५ ज्ञानपूर्वक दुख सहन करने से दुनिया मे आजतक किसी का बुरा नही हुआ। दुख पडे और उसे सहन किया जाय, यह बुरा नही।

म० डा०२, २०६

६ कभी किसी के दुख से अधिक दुखी या किसी के सुख से अधिक प्रसन्न न होना चाहिए। दोनो मे सतुलित स्वभाव रखने पर ही भगवान का सान्निध्य पाना आसान होता है।

आ० भा०, २४०

७ जब दुख पडता है तभी ईश्वर याद आता है, फिर भी उसकी दया कितनी अपार है! मनुष्य सुख मे उसका स्मरण नही करता, परतु दुख मे थोडा भी याद करता है तो ईश्वर उसे बचा लेता है।

ए० च० ७६

८ दुख को भूल जाने से दुख मिट जाता है।

प्रा० प्र० १, १८८

९ जो आदमी हमेशा अमृत ही पीता हो उसको अमृत उतना मीठा नही लगता, जितना कि जहर का प्याला पीने के वाद अमृत की दो बूंदें भी वहुत मीठी लगती है।

प्रा० प्र० १, १९८

१० जो ईश्वर का स्मरण करते हे और ईश्वर का काम कर लेते है, उनको आपत्ति से भी सीख मिल जाती है ।

प्रा० प्र० १, ४८८-८९

११ दुखी का वली परमेश्वर है, लेकिन दुखी खुद परमात्मा नही ।

प्रा० प्र० २, ३५३

१२ दुखियो को काम तो करना ही चाहिए। दुखी को ऐसा हक नही है कि वह काम न करे ।

प्रा० प्र० २, ३५३

१७—पाप-पुण्य

१ धन, सत्ता और मान मनुष्य से कितने पाप और अनर्थ कराते हे!

आ० क०, २००

२ ईश्वर की नजर मे पापी ओर सत वरावर है। दोनो को समान न्याय मिलेगा ।

स० ई०, १४१

३ जो सत अपने को पापी से श्रेष्ठ समझता हे, वह अपना सत-पन खोकर पापी से भी वुरा वन जाता है, क्योकि पापी को यह ज्ञान नही है कि वह क्या कर रहा है, जव कि सत को है या होना चाहिए।

स० ई० १४१

४ दूसरे का पुण्य भोगने का सिद्धात मै स्वीकार नही करता ।

य० प्र०, ५६

५ पाप का दड ईश्वर देता है या अपना अन्त करण देता है ।

स्त्रि० स०, ६३

६ हमे वे पाप धो डालने चाहिए जो हमारे मनुष्यत्व की हत्या करके हमे पशु वनाते है ।

स्त्रि० स०, १०५

७ कोई भी आदमी आत्म-हानि के विना पाप या भूल नही कर सकता ।

ड़ि० डू० ७४

८ पाप-पुण्य मृत्यु के बाद भी जीव के साथ ही जाते है। जीव जीव-

रूप मे उन्हे भोगता है। फिर वह दूसरे दृश्य शरीर मे हो या सूक्ष्म शरीर मे, इसमे हर्ज नही।

म० डा० २, १८

९ बुरे-से-बुरे आदमी को भी हमे शुद्ध मानकर चलना चाहिए। सब के साथ समान व्यवहार करने का और विरोधी चीजो के इस विश्व मे पानी मे कमल की तरह अलिप्त रहने का यही अर्थ है।

बा० प० मी०, ७१

१० गुनाह छिपा नही रहता। वह मनुष्य के मुख पर लिखा रहता है। उस शास्त्र को हम पूरे तौर से नही जानते, लेकिन बात साफ है।

बा० आ०, २०३

११ हमे पुण्यवान बनना चाहिए। एक ओर राम का नाम लेना और दूसरी ओर मायाचारी बनना, ईश्वर की निंदा करना है।

प्रा० प्र० १, ४६६

१८--प्रारब्ध और पुरुषार्थ

१ हम चाहते कुछ है और हो कुछ और ही जाता है।

आ० क०, ७६४

२ हमारा मौजूदा जीवन पिछले जीवन से नियत होता है। इसी कार्य-कारण के नियम से हमारा भविष्य का जीवन हमारे मौजूदा कामो से बनेगा।

म० डा० १, २८६

३ प्रारब्ध अवश्य है, परतु साथ ही पुरुषार्थ भी है। प्रारब्ध का इतना ही अर्थ है कि पुरुषार्थ के अभाव मे पूर्व कर्मो का फल ही बाकी रहता है। पुरुषार्थ होते हुए प्रारब्ध बदल सकता है।

म० डा० ७, ११०

४ किस्मत और पुरुषार्थ का झगडा रोज चलता है। हम पुरुषार्थ करते रहे और परिणाम ईश्वर पर छोडे।

बा० आ०, ७३५

५ ईश्वर के शब्द-कोष मे 'अकस्मात' जैसी कोई चीज ही नही। पर यह दुनिया तो अकस्मातो से ही भरी है। अकस्मात का अर्थ है ऐसी

घटनाए, जिनपर हमारा कावू नही और जिनके होजाने के वाद भी हम उनके कारण ढूढ नही सकते ।

म० डा० ३, ८६

६ चमत्कार-जैसी कोई चीज इस जगत मे नही है, अथवा सव चमत्कार ही है ।

वा० प० प्रे०, ५६

७ सव तो ईश्वर के हाथ मे है कि क्या होनेवाला है और क्या नही। आखिर इसान तो सिर्फ कोशिश ही कर सकता है ।

प्रा० प्र० १, १७५

८ मनुष्य को प्रयत्न करना चाहिए और ईश्वर का सहारा रहना चाहिए ।

प्रा० प्र० १, ३४८

१९—आदर्श

१ आदर्श को सही तौर पर समझे विना हम उस तक पहुचने की कभी आशा नही रख सकते ।

स० ई०, ३८

२ आदर्श की खूवी यह होती है कि वह अनत होता है ।

स० ई०, १४०

३ जीवन मे आदर्श की पूरी सिद्धि कभी नही होती ।

सर्वो०, ८७

४ हरएक वडे ध्येय के लिए जूझनेवालो की सख्या का महत्त्व नही होता, जिन गुणो से वे वने होते है, वे ही गुण निर्णायक होते है । ससार के महान-से-महान पुरुष हमेशा अपने ध्येय पर अकेले डटे रहे है ।

सर्वो०, १०७

५ आदर्श एक वस्तु है, उसका पालन विल्कुल दूसरी वात है ।

वा० आ०, २८६

६ विना आदर्श के मनुष्य पाल-रहित जहाज के जैसा है ।

वा० आ०, २६१

७ मेरे पास आदर्श है, ऐसा तभी कहा जाय, जब मै उसे पहुचने की कोशिश करता हू ।

वा० आ०, २६३

८ हमारी दुर्बलताओ या अपूर्णताओ के कारण आदर्श नीचा नही किया जाना चाहिए ।

सि० गा०, २६

९ आदमी जो ऊची उडान लेता है, वह हमेशा टिक नही सकती। हम भी ऊचे चढकर बार-बार गिर जाते है। पर मनुष्य के लिए अपनी ऊची उडान पुण्य-स्मृति बन जाती है ।

प्रा० प्र० १, १८५

२०—मोक्ष

१ शून्यता मोक्ष की स्थिति है। मुमुक्षु अथवा सेवक के प्रत्येक कार्य मे नम्रता अथवा निरभिमानता न हो तो वह मुमुक्षु नही है, सेवक नही है ।

आ० क०, ३४४

२ मनुष्य जबतक स्वेच्छा से अपने को सब से नीचे नही रखता, तबतक उसे मुक्ति नही मिलती । अहिसा नम्रता की पराकाष्ठा है ।

आ० क०, ४३३

३ नम्रता के बिना मुक्ति कभी नही मिलती ।

आ० क०, ४३३

४ मेरे लिए मोक्ष का मार्ग यही है कि मै अपने देश की, और देश के द्वारा मानव-जाति की सेवा के लिए अविश्रात परिश्रम करता रहू ।

स० ई०, ५

५ पूर्णता या दोष-मुक्ति भगवान की कृपा से ही आती है ।

सर्वो०, ११७

६ स्थायी तथा स्वस्थ मुक्ति भीतर से, अर्थात् आत्मशुद्धि से, आती है ।

रच० का०, ११

७ यह समझकर कि शरीर बडा धोखेबाज है, इसी क्षण मोक्ष की तैयारी करे ।

गा० सा०, १४४

८ उद्धार या मुक्ति का कोई छोटा रास्ता हो ही नही सकता ।

टु० न्यू० हो०, १३

खंड २ : धर्म-मार्ग

१—व्रत

१ व्रत बधन नही, बल्कि स्वतत्रता का द्वार है।

आ० क०, १७८

२. व्रतबद्ध न होने से मनुष्य मोह मे पड जाता है।

आ० क०, १७८

३. व्रत से बधना व्यभिचार से छुटकारा पाकर एकपत्नी-व्रत पालन करने के समान है।

आ० क०, १७८

४ कोई व्रत कठिन है, इसलिए उसकी व्याख्या को शिथिल करके हम अपने-आपको धोखा न दे।

य० म०, ३५

५ असुविधाओ को वाधने के लिए ही तो व्रतो की आवश्यकता है।

य० म०, ११३

६ जो पाप-रूप है उसका निश्चय तो व्रत कहा नही जा सकता, वह तो राक्षसी वृत्ति है।

य० म०, ११४

७ जो धर्म सर्वमान्य माना गया है, पर जिसके आचरण की हमे आवश्यकता नही पडी, उसका व्रत लिया जाता है।

य० म०, ११४

८ व्रत लेना कमजोरी का नही, वल का सूचक है।

य० म०, ११६

९ अमुक काम करना उचित है, तो फिर वह करना ही चाहिए। इसी का नाम व्रत है और इसमे वल हे।

य० म०, १८६

१० 'जहातक वन सकेगा करूगा', यह अपनी निर्वलता या अभिमान का दर्शन कराता हे।

य० म०, १८७

११ मनुष्य सूली पर वैठा होने पर भी अपने व्रत की रक्षा कर सकता हे। उस समय भी जिस व्रत की रक्षा हो मके, वही सच्चा व्रत है।

गा० मा०, १०६

१२ जो आदमी व्रतवद्ध नही है, उसका कौन विश्वास करेगा !

म० डा० १, १३६

१३ किसी काम के करने या न करने का पक्का निश्चय करने का ही नाम व्रत है।

म० डा० १ न०, ३०१

१४ अगर एक वार भी व्रत तोडने की छूट दे दी जाय, तो व्रत पाले ही नही जा सकते, और उनकी महिमा जाती रहे।

म० डा० १ न०, ३०५

१५ मनुष्य अपने प्रण की रक्षा आसानी से नही कर सकता।

गा० सा०, १०४

१६ आसमान टूट पडे, तव भी व्रत को तोडा नही जा सकता।

वा० प० म०, ५१

१७ जीवन का अर्थ है यम-नियम। उसके लिए हमे कष्ट की आग मे से गुजरना ही पडता है।

म० डा० १, ३०२

१८ जिसने प्रतिज्ञा नही ली, वह विना पतवार की नाव की तरह इधर-उधर टकराता ओर अत मे नष्ट हो जाता है।

म० डा० १ न०, १२१

१९ प्रतिज्ञाहीन जीवन विना नीव का घर है, अथवा यो कहिये कि

कागज का जहाज है। प्रतिज्ञा न लेने का अर्थ है अनिश्चित या डावाडोल रहना।

गा० वा, ६३

२० धर्म का सच्चा उपाय हर तरह से यम-नियमो का पालन है।

म० डा० १, २३६

२—सत्य

१ हरिश्चद्र पर जैसी विपत्तिया पडी, वैसी विपत्तियो को भोगना और सत्य का पालन करना ही वास्तविक सत्य है।

आ० क०, ४

२ कम बोलनेवाला बिना विचारे नही बोलेगा। वह अपने प्रत्येक शब्द को तौलेगा।

आ० क०, ५४

३ सत्य वज्र के समान कठिन है और कमल के समान कोमल है।

आ० क०, १२८

४ शुद्ध हिसाब के बिना शुद्ध सत्य की रक्षा असभव है।

आ० क०, १३१

५ सत्य एक विशाल वृक्ष है। ज्यो-ज्यो उसकी सेवा की जाती है, त्यो-त्यो उसमे से अनेक फल पैदा होते दिखाई पडते है। उसका अत ही नही होता, हम जैसे-जैसे उसकी गहराई मे उतरते है, वैसे-वैसे उसमे से अधिक रत्न मिलते जाते है, सेवा के अवसर प्राप्त होते रहते है।

आ० क०, १८६

६ जहा सत्य की ही साधना और उपासना होती है, वहा भले ही परिणाम हमारी धारणा के अनुसार न निकले, फिर भी जो अनपेक्षित परिणाम निकलता है वह अकल्याणकारी नही होता, और कई बार अपेक्षा से अधिक अच्छा होता है।

आ० क०, २६४

७ सत्य के पालन का अर्थ है लिये हुए व्रत के शरीर और आत्मा की रक्षा, शब्दार्थ और भावार्थ का पालन।

आ० क०, ३६५

८ सत्य से भिन्न कोई परमेश्वर है, ऐसा मैंने कभी अनुभव नही किया।

आ० क०, ४३२

९ सत्यमय बनने का एकमात्र मार्ग अहिसा ही है।

आ० क०, ४३२

१० सत्य का सपूर्ण दर्शन अहिसा के बिना असभव है।

आ० क०, ४३२

११ व्यापक सत्य-नारायण के प्रत्यक्ष दर्शन के लिए जीव मात्र के प्रति आत्मवत प्रेम की परम आवश्यकता है।

आ० क०, ४३३

१२ 'परमेश्वर सत्य है' कहने के बदले 'सत्य ही परमेश्वर है' यह कहना ज्यादा मौजू है।

य० म०, २

१३ अपनी सुविधा के लिए आदर्श को नीचे गिराने मे असत्य है, हमारा पतन है।

य० म०, ३५

१४ सत्य साध्य है, अहिसा एक साधन है।

य० म०, ४२

१५ सत्य ही हरि है, वही राम है, वही नारायण, वही वासुदेव है।

य० म०, ६१

१६ 'कुछ' होना अर्थात ईश्वर से, परमात्मा से, सत्य से, दूर जा पडना, विलग होना। 'कुछ' मिट जाना अर्थात परमात्मा से मिल जाना। समुद्र मे रहनेवाली बूद समुद्र की महत्ता भोगती है, परतु इसे वह जानती नही।

य० म०, १०६

१७ सत्य के पालन की इच्छा रखनेवाला अहकारी कैसे हो सकता है।

य० म०, १०७

१८ सत्य को पूरी तरह प्राप्त कर लेना अपने को और अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेना है, अर्थात सपूर्ण हो जाना है।

स० ई०, ३

१९ मेरी भक्तिपूर्ण खोज ने मुझे 'ईश्वर सत्य है' के प्रचलित मत्र के बजाय 'सत्य ही ईश्वर है' का अधिक गहरा मत्र दिया है ।

स० ई०, ४

२० सत्य और अहिंसा अनादि काल से चले आये है ।

स० ई०, ६

२१. अगर आप सत्य के महासागर के तल पर तैरना चाहते है तो आपको शून्य बन जाना होगा ।

स० ई०, १६

२२ विचार मे, वाणी मे और आचार मे, सत्य का होना ही सत्य है, जो इस सत्य को सपूर्णतया समझ लेता है, उसे जगत मे दूसरा कुछ भी जानने को नही रहता ।

स० ई०, १६

२३ सत्य की खोज के साधन जितने कठिन है, उतने ही सरल भी है ।

स० ई०, ३१-३२

२४ सत्य का मार्ग जितना सीधा है, उतना ही तग भी है । यही बात अहिसा की है । यह खाडे की धार पर चलने के बराबर है ।

स० ई०, ३५

२५ सतत साधना के द्वारा ही सत्य और अहिसा को सिद्ध किया जा सकता है ।

स० ई०, ३५

२६ सत्य और असत्य अक्सर एक साथ रहते है, भलाई और बुराई बहुधा एक साथ पाई जाती है ।

स० ई०, ३५

२७ सत्य इतिहास से परे है ।

य० श्र०, ६३

२८ निर्मल अत करण को जिस समय जो प्रतीत हो, वह सत्य है । उसपर दृढ रहने से शुद्ध सत्य की प्राप्ति हो जाती है ।

बा० प० ज०, २६

२९ सत्य मे से प्रेम की प्राप्ति होती है।

वा० प० ज०, २६

३० सत्य मे मृदुता मिलती है।

वा० प० ज०, २६

३१ सत्यनिष्ठ का पतन सभव ही नही।

वा० प० ज०, १६२

३२ जहा सत्य का साम्राज्य है, वहा सफलता हाथ बाधे खडी रहती है।

प० वा०, ६

३३ सत्य-मार्ग पर चलने वाले को सकट के समय हमेशा सत्य-मार्ग सूझ जाता है।

गा० सा०, १४०

३४ स्वभाव से सत्य स्वत प्रत्यक्ष है। ज्योही तुम उस अज्ञान के जालो को दूर कर देते हो, जो उसके इर्द-गिर्द फैले हुए है, वह स्पष्ट रूप से चमकने लगता है।

सि० गा०, ७

३५ कोई असत्य से सत्य को नही पा सकता। सत्य को पाने के लिए हमेशा सत्य का आचरण करना ही होगा।

मे० स० भा०, २८

३६ जरा-सा असत्य भी महारोग है, इस बात का भान सदा रहना चाहिए।

स० ई०, १२

३७ जिस लगन के साथ प्रेमी मेहनत करता है, उससे भी ज्यादा लगन सत्य के दर्शन के लिए चाहिए और सत्य के दर्शन के अत मे परमानद है। फिर भी आशिक की-सी लगन थोडे ही जिज्ञासुओ मे पाई जाती है।

स० ई०, ४४

३८ हमारे विचार मे सत्य होना चाहिए, हमारी वाणी मे सत्य होना चाहिए और हमारे कर्म मे भी सत्य होना चाहिए। जिस मनुष्य ने इस

सत्य को पूर्णतया समझ लिया है, उसके लिए दूसरा कुछ जानने को बाकी नही रह जाता ।

मो० मा०, २५

३९ सबसे अच्छी बात तो यही है कि झूठ का कोई जवाब ही न दिया जाय । झूठ अपनी मौत मर जाता है । उसकी अपनी कोई शक्ति नही होती , विरोध पर वह फलता-फूलता है ।

गा० वा०, ९०

४० तीखी चटपटी भाषा सत्य के नजदीक उतनी ही विजातीय है, जितनी कि नीरोग जठर के लिए तेज मिर्चिया ।

गा० वा०, १४

४१ सत्य के दर्शन बगैर अहिसा के हो ही नही सकते । इसीलिए कहा गया है कि 'अहिसा परमो धर्म ।'

बा० आ०, ५

४२ थोडा-सा झूठ भी मनुष्य का नाश करता है, जैसे दूध को एक बूद जहर भी ।

बा० आ०, ५५

४३ अपना सादा ज्ञान और पाडित्य तराजू के एक पलडे पर और सत्य तथा पवित्रता को दूसरे पलडे पर रखकर देखो; सत्य और पवित्रता वाला पलडा पहले पलडे से कही भारी पडेगा ।

मे० स० भा०, १६१

४४ जानता हुआ आदमी सत्य कहने से क्यो झिझकता है ? शर्म के मारे ? किसकी शर्म ? अफसर है तो क्या ? नौकर है तो क्या ? बात यह है कि आदत आदमी को खा जाती है । हम सोचे और बुरी आदत से छूट जाय ।

बा० आ०, १६३

४५ सत्य-निष्ठा से किये गए कामो के परिणाम अवश्य आयगे, इस बारे मे शका ही नही हो सकती । इतना विश्वास न हो तो हम नीति की रक्षा कभी कर ही नही सकते ।

बा० प० प्रे०, २४६

४६ अहिसक सत्य के बारे मे ऐसा हो सकता है कि बोलते समय वह कठोर लगे, परतु परिणाम मे वह अमृतमय लगना ही चाहिए। यह अहिसा की अनिवार्य कसौटी है।

वा० प० प्रे०, ७२

४७ सत्य जहा प्रस्तुत हो, वहा कोई भी कुर्वानी करके उसे कहना चाहिए।

म० डा० १, ७०

४८ किसी भी हालत मे रहकर जो सत्य का आचरण कर सकता है, वही सत्यार्थी माना जायगा। व्यापार मे किसी को झूठ बोलने की मजबूरी नही है और न नौकरी मे। जहा मजबूरी दीखे वहा नही जाना चाहिए, भले ही भूखो मर जाय।

म० डा० १, २२७

४९ किसी का दुख दूर करने के लिए भी कोई झूठ नही बोल सकते।

म० डा० १, २६६

५० सत्य ईश्वर का केवल एक गुण या एक विभूति नही है, बल्कि सत्य ही ईश्वर है। अगर सत्य नही है, तो कुछ भी नही है।

म० डा० १, २७५

५१ जो मनुष्य सासारिक वस्तु की प्राप्ति के लिए या और किसी कारण असत्य का सहारा लेता है, राग-द्वेष से भरा है, उसको भगवत-प्राप्ति हो ही नही सकती।

म० डा० १, ३१८

५२ सच बात से किसी का भी जी दुखे, तो उसमे हिसा नही है। हमारी इच्छा न होने पर भी किसी का जी दुखे तो उसमे हिसा नही है।

म० डा० १, ३३०

५३ सत्य लाखो लोगो के जीवन से बढकर है।

म० डा० २, १८९

५४ जबतक अपने जीवन का अतिम श्वास चले, तबतक पूरी सचाई से ही रहना चाहिए।

अ० झा०, १८१

५५ मनुष्य का धर्म है कि साधना के पश्चात् जो अपने को सत्य लगे उसी चीज को कहना, भले ही जगत को वह भूल-सी प्रतीत हो।

गां० छ०, ३२

५६ सत्य से ही धर्म बढता है।

प्रा० प्र० १, २१

५७. सच्चा बनने के लिए चाहिए कि हम एकमात्र ईश्वर के ही गुलाम बने, और किसी के गुलाम न बने।

प्रा० प्र० १, ८९

५८ दुनिया मे सत्य और अहिसा के बिना काम नही चलता।

प्रा० प्र० २, १९

५९ जीते-जागते सत्य के बिना ईश्वर कही नही है।

प्रा० प्र० २, ३१६

३—अहिसा

१ कुविचार-मात्र हिंसा है। उतावलापन—जल्दीपन—हिंसा है। मिथ्या भाषण हिंसा है। किसी का बुरा चाहना हिंसा है। जिसकी दुनिया को जरूरत है, उस पर कब्जा रखना भी हिंसा है।

य० म०, १५

२ अहिंसा के बिना सत्य की खोज असभव है।

य० म०, १६

३ मनुष्य को पशु-पक्षियो पर जो प्रभुत्व प्राप्त हुआ है, वह उन्हे मारकर खाने के लिए नही, बल्कि उनकी रक्षा के लिए है, अथवा जिस प्रकार मनुष्य एक-दूसरे का उपयोग करते है, पर एक-दूसरे को खाते नही, उसी प्रकार पशु-पक्षी भी उपयोग के लिए है, खाने के लिए नही।

गा० क०, ४७

४ बकरी के जीवन का मूल्य मनुष्य के जीवन से कम नही है।

गा० क०, २०४

५ जो जीव जितना अधिक अपग है उतना ही उसे मनुष्य की क्रूरता से बचने के लिए मनुष्य का आश्रय पाने का अधिक अधिकार है।

गा० क०, २०५

६ अहिसा मेरा ईश्वर है और सत्य मेरा ईश्वर है। जब मैं अहिसा को ढूढता हू तो सत्य कहता है, उसे 'मेरे द्वारा खोजो।' जब मैं सत्य की तलाश करता हू तो अहिसा कहती है, 'मेरे जरिये उसे खोजो।'

स० ई०, ५

७ अहिसा और प्रेम एक ही चीज है।

स० ई०, १६

८ मैं अपने तमाम प्रयोगो के परिणामस्वरूप विश्वासपूर्वक इतना कह सकता हू कि सत्य के सपूर्ण दर्शन अहिसा के सपूर्ण पालन के बाद ही हो सकते है।

स० ई०, ३३

९ अहिसा के बिना सत्य की खोज और प्राप्ति असभव है।

स० ई०, ३५

१० अहिसा और सत्य आपस मे इतने गथे हुए है कि उन्हे एक-दूसरे से सुलझाकर अलग करना लगभग असभव है।

स० ई०, ३६

११ अहिसा सर्वोच्च प्रकार की सक्रिय शक्ति है। वह आत्म-बल या हमारे भीतर विराजमान भगवान की शक्ति है।

स० ई०, ३६

१२ हम जिस हद तक अहिसा को सिद्ध करते है, उतनी ही हद तक ईश्वर के सदृश बनते है, परतु हम पूरी तरह ईश्वर कभी नही बन सकते।

स० ई०, ३६

१३ अहिसा रेडियम की तरह काम करती है। रेडियम की छोटी-से-छोटी मात्रा भी किसी रुग्ण अग के बीच मे रख दी जाय तो वह लगातार चुपचाप और बिना रुके काम करता रहता है और अत मे सारे रोग-ग्रस्त अग को नीरोग बना डालता है, इसी प्रकार थोडी-सी भी सच्ची अहिसा सूक्ष्म और अदृश्य रूप मे चुपचाप काम करती है और सारे समाज मे व्याप्त हो जाती है।

स० ई०, ३६

१४ मानव-जाति के हाथ मे अहिसा सबसे बडा बल है। मनुष्य की

सज्ञ ने विनाश के जो प्रवल-से-प्रवल हथियार निकाले है, उनसे भी यह प्रवल है।

स० ई०, ३७

१५ विनाश मानव का धर्म नही है।

स० ई०, ३७

१६ दया, अहिसा, प्रेम और सत्य के सद्‌गुणो की परीक्षा किसी मनुष्य मे तभी हो सकती है, जब उनका मुकाबला क्रूरता, हिसा, वैर और असत्य आदि से होता है।

स० ई०, ३७

१७ अहिसा एक व्यापक सिद्धात है।

स० ई०, ३८

१८ प्रेम और अहिसा का प्रभाव अद्वितीय है, परतु वे अपना काम विना शोरगुल, दिखावे या प्रदर्शन के करते है।

स० ई०, ५४

१९ जो एकमात्र सच्ची और प्राप्त करने योग्य स्वतत्रता है, उसकी ईश्वर हमसे सपूर्ण आत्मसमर्पण से कम कीमत नही मागता, और जब कोई मनुष्य इस प्रकार अपने-आपको ईश्वर मे खो देता है, तो वह तुरत अपनेको सब प्राणियो की सेवा मे सलग्न पाता है।

स० ई०, ५४

२० मानव-जाति को अहिसा के द्वारा ही हिसा से छुटकारा पाना होगा। घृणा को प्रेम से ही जीता जा सकता है। वदले मे घृणा करने से घृणा का विस्तार और गहराई दोनो वढते है।

स० ई०, १३१

२१ मै एक साप की जीव-हानि करके भी जिदा नही रहना चाहता। मुझे उसके काटने से मर जाना मजूर है, मगर उसे मारना मजूर नही।

स० ई०, १८८

२२ अहिसा और सत्य मेरे दो फेफडे है। मै उनके विना जी नही सकता।

स० ई०, २१०

२३ अहिसा का अर्थ हे विश्व-प्रेम। अगर कोई पुरुप एक स्त्री को या कोई स्त्री एक पुरुप को अपना प्रेम प्रदान कर देती है तो फिर बाकी सारी दुनिया के लिए रह ही क्या जाता हे ?

म० प्र०, ११२

२४ यह मानना गहरी भूल हे कि अहिसा केवल व्यक्तियो के लिए ही अच्छी हे और जनसमूह के लिए नही।

सर्वो०, १०

२५ मै यह जरूर महसूस करता हू कि किसी मजिल पर आध्यात्मिक प्रगति का यह तकाजा अवश्य होता हे कि हम अपनी शारीरिक आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए अपने साथ रहनेवाले प्राणियो की हत्या बद कर दे।

सर्वो०, ७१

२६ सत्य और अहिसा की जितनी अनुभूति होगी, उतना ही ज्ञान बढेगा।

सर्वो०, ७७

२७ हिसा या अहिसा की अतिम कसौटी तो आखिर उस कृत्य के पीछे रहा हेतु ही होगा।

सर्वो०, ७८

२८ आमतौर पर जानवरो को न मारने का, और इसलिए उन्हे बचाने का कर्तव्य, निर्विवाद सत्य माना जाना चाहिए।

सर्वो०, ७७

२९ मै जानवरो को न मारने का सिद्धात पूरी तरह स्वीकार नही कर सकता। जो पशु मनुष्य को खा जाते ह या नुकसान पहुचाते हे, उनकी जान बचाने की मुझमे कोई भावना नही है। उनकी वश-वृद्धि मे सहायक होना मै अनुचित समझता हू।

सर्वो०, ७८

३० अच्छे उपायो से ही अच्छे परिणाम निकल सकते है और सब मे नही, तो कम-से-कम अधिकाश मामलो मे प्रेम और दया का बल

शस्त्र-बल से कही बडा होता है। पशुबल के प्रयोग मे हानि है, मगर दया-बल के प्रयोग मे कभी नही।

सर्वो०, १३०-१३१

३१ अहिसा कोई ऐसी-वैसी चीज नही है। उसकी कल्पना कमजोरो के हथियार के रूप मे कभी नही की गई, वल्कि मजवूत-से-मजबूत हृदयो के अस्त्र के रूप मे की गई है।

सर्वो०, १३६

३२ अहिसा मेरे धर्म का पहला मत्र है, और वही मेरे धर्म का आखिरी मन्त्र है।

य० अ०, १३

३३ आघात के वदले मे आघात न करना ही मनुष्य के लिए स्वाभाविक स्थिति है।

य० अ०, २०

३४ एक व्यक्ति और दूसरे व्यक्ति के वीच मे, एक समाज और दूसरे समाज के वीच मे, अथवा सरकार और जनता के वीच मे चलने वाले सभी अहिसात्मक प्रयोगो का परिणाम सदा हार्दिक सहयोग मे ही आता है।

य० अ०, ४२

३५ हिसा से हिसा के परिणाम पैदा होते है और जव तुम एक वार इसको आरभ कर देते हो, तव कोई सीमा नही खीची जा सकती।

हिं० स्व०, ११

३६ अहिसा अप्रत्यक्ष होती है। तुम्हे तो अहिसा का वना हुआ शरीर होना पडेगा। तुम्हे अहिसा का जीवन वनाना चाहिए।

ग्ली० वा० फी०, १४

३७ हिसा का स्थिर जीवन नही होता, यह तो निषेधार्थक वस्तु है। हिंसा केवल वहा ही रह सकती है, जहा रुकावट हो।

ग्ली० वा० फी०, १४

३८ अहिसा शक्ति को नही हथियाती। यह शक्ति चाहती भी नही। शक्ति तो इसे प्राप्त हो जाती है।

ग्ली० वा० फी०, १५

३९ अहिसा ही निरपवाद-रूप मे जीवन का असली तत्त्व है।

टे० वा०, ९५

४० हमे अपने और शेष सजीव सृष्टि के बीच अधिक-से-अधिक सजीव सबध अनुभव करना चाहिए।

टे० वा०, ११३

४१ पौरुष का सार यह है कि पशु-जगत और वनस्पति-जगत के सभी प्राणियो का ज्यादा-से-ज्यादा खयाल रखा जाय। जो सुख की खोज मे दूसरो का खयाल नही रखता, वह जरूर इसान से कुछ घटिया है। वह विचारहीन है।

टे० वा०, ११४

४२ अहिसा-धर्म केवल ऋषियो तथा सतो के लिए नही है। यह जन-साधारण के लिए भी है।

फा० पे० ४

४३ जो अपनी या अपने अति निकट-सबधियो या प्रिय जनो की या उनके मान की अहिसा के द्वारा मौत का सामना करके रक्षा नही कर सकता, वह विरोधियो से हिसा द्वारा ऐसा कर सकता है, या उसे करना चाहिए। जो दोनो मे से एक भी नही कर सकता, वह भार-रूप है।

फा० पे०, १३

४४ अहिसा कोई ऐसा गुण तो है नही, जो गढा जा सकता हो। यह तो एक अदर से बढनेवाली चीज है, जिसका आधार आत्यतिक व्यक्तिगत प्रयत्न है।

गा० वा०, ७

४५ सारा समाज अहिसा पर उसी प्रकार कायम है जिस प्रकार कि गुरुत्वाकर्पण से पृथ्वी अपनी असली स्थिति मे बनी हुई है।

गा० वा०, ३१

४६ अहिसा श्रद्धा और अनुभव की वस्तु है, एक सीमा से आगे तर्क की चीज वह नही है।

गा० वा०, ४२

४७ अपने यथार्थ रूप मे अहिसा का अर्थ अत्यत बडा प्रेम है, अत्यत बडी दानशीलता है ।

सि० गां०, १५७

४८. अहिसा का शुद्ध ध्यान रखनेवाला अत मे हिसा करने मे असमर्थ हो जाता है---यानी शरीर से नही, बल्कि विचार से ।

बा० प० म०, ४०

४९ अहिसा का रिवाज पड गया है, उसी के अनुसार बगैर सोचे जहा तक अपने को बहुत दिक्कत महसूस न हो, वहा तक हिदुस्तान के हिंदू अपना आचरण करते है ।

स० ई०, ३७

५० अहिसा का ज्ञानपूर्वक पालन मनुष्य को नया जन्म देता है । उसे बदलता है ।

स० ई०, ३८

५१ अहिसा का अर्थ है मारने या हानि पहुचाने की इच्छा को मिटा देना । अहिसा ऐसे ही मनुष्यो के प्रति बरती जा सकती है, जो हमसे सब तरह घटिया हो । इसका अर्थ यह हुआ कि पूर्ण अहिसाधर्मी को अतिम पूर्णता प्राप्त करनी चाहिए ।

म० डा० १ न०, ६

५२ मनुष्य मारना सीखे, उससे पहले उसमे मरने की शक्ति होनी चाहिए ।

म० डा० १ न०, १२८

५३ जो मारने की शक्ति गवा बैठा हो, वह अहिसा का आचरण नही कर सकता । अहिसा मे अत्यत ऊचे प्रकार का त्याग समाया हुआ है । कमजोर और कायर बनी हुई जनता त्याग का यह भव्य आचरण नही कर सकती ।

म० डा० १ न०, २२१

५४ दुष्कृत्य करनेवाल को मारने की जोखिम उठाकर भी अपने स्त्री-बच्चो की रक्षा करने मे सच्ची अहिसा समायी है ।

म० डा० १ न०, २३७

५५ अहिसा सबका भला सोचती है।

म० डा० ८ न०, ३३३

५६ निर्बल की अहिसा को अहिसा का नाम देकर हम उस शक्ति की निदा करते है। ऐसी अहिसा को हम डरपोक की युक्ति कह सकते ह।

ध० च०, १९

५७ हिसा से कभी प्रतिहिसा करने से हिसा का अत हरगिज नही आयगा।

वि० को० आ० ४५

५८ मरने मे मारने से ज्यादा बहादुरी है।

वि० को० आ०, १२६

५९ अहिसा-धर्म किसी का नाश नही करेगा, बल्कि शुद्ध करेगा।

वि० को० आ०, १५३

६० कोई भी धर्म यह नही सिखाता कि हम किसी भी जीव का खून करे।

प्रा० प्र० १, १०५

६१ अहिसा का दिवाला कभी नही निकल सकता।

प्रा० प्र० १, १६२

६२ आज की बदली हुई हालत मे कमजोरो की अहिसा के लिए जगह नही है।

प्रा० प्र० १, १६२

६३ इस दुखी जगत की पीडा मिटाने के लिए, कठिन होने पर भी, सिवा अहिसा के और कोई सीधा और साफ रास्ता नही है। मेरे-जैसे लाखो आदमी इस सत्य को भले ही जीवन मे सिद्ध न कर पाय, यह उनकी कमजोरी तथा नाकामयाबी होगी, न कि अहिसा की।

प्रा० प्र० १, १६४

६४ अहिसा कोई हल्दी-मिर्च तो है नही, जो बाजार से मोल आ जायगी।

प्रा० प्र० १, १६९

६५ अहिसा से वदबू कभी आ ही नही सकती, क्योकि उसमे खुशबू ही भरी पडी है।

प्रा० प्र० १, १९८

६६ सच्ची अहिंसा यह नही है कि बलवान के सामने तो हम अहिंसा का उपयोग करे, लेकिन कमजोर पर हिसा करे।

प्रा० प्र० १, ३९३

६७ जो आदमी जीव को बना नही सकता, उसको लेने का कोई अधिकार कैसे आया !

प्रा० प्र० १, ४४४

६८ क्या पुराने ऋषि-मुनियो ने हमे यह नही बताया है कि जो आदमी अहिसा का पुजारी है, उसका दिल फूल से भी कोमल और पत्थर से भी कठोर होना चाहिए !

प्रा० प्र० २, ४१

६९ अहिसा कमजोरो का हथियार नही, वह बहादुरो का हथियार है। बहादुरो के हाथ मे ही वह सुशोभित रह सकता है।

प्रा० प्र० २, १६८

७० मगर जो आदमी आत्मा से लूला हे, पगु है, अधा है, वह अहिसा को समझ नही सकता। अहिसा का पालन कर नही सकता।

प्रा० प्र० २, २३६

७१ दूसरो को मिटाने की चेष्टा करनेवालो को खुद मिटना होगा। यह जीवन का कानून है। यह अपने-आपको और अपने धर्म को मिटाने की बात है।

प्रा० प्र० २, २४१

७२ अहिसा का नियम है कि मर्यादा पर कायम रहना चाहिए, अपमान नही करना चाहिए, नम्र होना चाहिए।

प्रा० प्र० २, ३१२

७३ अहिसा से भरा आदमी मरता है तो उसका नतीजा अच्छा ही होगा।

प्रा० प्र० २, ३२१

४—ब्रह्मचर्य

१ ब्रह्मचर्य के पालन मे उपवास अनिवार्य है।

आ० क०, १८१

२ ब्रह्मचर्य का अर्थ है मन, वचन, काय से समस्त इद्रियो का सयम।

आ० क०, १८१

३ ईश्वर-दर्शन के लिए ब्रह्मचर्य अनिवार्य है।

आ० क०, ७७६

४ ब्रह्मचर्य-रहित जीवन मुझे शुष्क और पशुओ-जैसा प्रतीत होता है।

आ० क०, ७७६

५ शारीरिक अकुश से ब्रह्मचर्य का आरभ होता है। पर शुद्ध ब्रह्मचर्य मे विचार की मलिनता भी न होनी चाहिए। सपूर्ण ब्रह्मचारी को तो स्वप्न मे भी विकारी विचार नही आते।

आ० क०, ७७७

६ मन को विकारपूर्ण रहने देकर शरीर को दवाने की कोशिश करना हानिकर है।

य० म०, २४

७ विषय-मात्र का निरोध ही ब्रह्मचर्य है।

य० म०, २६

८ ब्रह्मचर्य की सकुचित व्याख्या से नुकसान हुआ है।

य० म०, ७७

९ ब्रह्मचर्य अर्थात् ब्रह्म की—सत्य की—शोध मे चर्या, अर्थात् तत्सवधी आचार।

य० म०, २८

१० सबसे बडे अनुशासनो मे से शील एक है, जिसके विना मन आवश्यक दृढता प्राप्त नही कर सकता।

हिं० स्व०, ८५

११ काम अधा होता है, उसमे विवेक नही होता। वह तो जिस तरह हो सके, अपनी तृप्ति चाहता है।

स्त्रि० स०, ५५

१२ कामाग्नि की तृप्ति के कारण किया हुआ सभोग त्याज्य है।

स्त्रि० स०, ७६

१३ जो मनुष्य अपने जीवन को धार्मिक वनाना चाहता है, जो जीव-मात्र की सेवा को आदर्श समझकर ससार-यात्रा पार करना चाहता है, उसके लिए ही ब्रह्मचर्य-मर्यादा का विचार किया जा सकता है।

स्त्रि० स०, ७७

१४ ब्रह्मचर्य का पालन भी ब्रह्म को ढूढने का एक जरिया है। उसके विना ब्रह्म नही मिलता और ब्रह्म के मिले विना ब्रह्मचर्य का पूरा पालन नही हो सकता।

स० ई०, ४५

१५ ब्रह्मचर्य के पालन के लिए रामवाण उपाय तो इस बात का अनुभव होना है कि यह जीव परमात्मा का ही अश है और परमात्मा का हमारे हृदय मे वास है।

म० डा० १, ११६

१६ ब्रह्मचर्य मन की स्थिति है। अलवत्ता सव तरह के निग्रह से उसे मदद जरूर मिलती है।

म० डा० १, ११६

१७ किसी को ब्रह्मचर्य पालने के लिए मजवूर नही किया जा सकता। वह तो भीतर से पैदा होना चाहिए।

म० डा० २, २५

१८ स्त्री का परिग्रह अगर आप काम-वासना की तृप्ति के लिए करते हो, तो यह वुरे-से-बुरा परिग्रह है।

म० डा० २, २८१

१९ ब्रह्मचर्य पालन करने का अर्थ है निर्विकार होना। जो निर्विकार हो, उसके सामने अप्सरा भी आकर क्यो न खडी रहे, उसकी दृष्टि दूषित नही होती।

ए० च०, ६६

२० निर्दोप यौवन ऐसी अमूल्य सपत्ति है, जिसे क्षणिक उत्तेजना के लिए, झूठे आनद के लिए, नष्ट नही करना चाहिए।

मो० मा०, ५४

२१ हृदय पवित्र हो, तो विकारेंद्रिय के विकारी होने की बात नही रहती।

गा० सा०, १६१

२२ पुरुष को कवियो ने सिंह की उपमा दी है। चितन करने से हम सबको इद्रिय-वन के राजा बनने का सामर्थ्य प्राप्त होगा।

गा० सा०, १४२

२३ विपयासक्ति जगत मे जरूर रहेगी, परतु जगत की प्रतिष्ठा ब्रह्मचर्य पर निर्भर है और रहेगी।

दा० प० प्रे०, २६२

२४ मनुष्य का पतन विपयो के गुप्त सेवन से होता है। ऐसा करने से मर्यादा नही रहती।

दा० प० पे०, २७५

५—अस्तेय

१ दूसरे की वस्तु को उसकी अनुमति के बिना लेना चोरी है ही, परतु मनुष्य अपनी कही जानेवाली चीज भी चुराता है। उदाहरणार्थ, किसी पिता का अपने बालको के जाने बिना, उन्हे मालूम न होने देने की इच्छा से, चुपचाप किसी चीज का खाना।

य० म०, ४४

२ किसी चीज के लेने की हमे आवश्यकता न हो, उसे जिसके पास वह है, उसकी आज्ञा लेकर भी लेना चोरी है। ऐसी एक भी चीज न लेनी चाहिए, जिसकी जरूरत न हो।

य० म०, १६

३ प्राय हममे से सब अपनी आवश्यकताओ को, जितनी होनी चाहिए, उससे अधिक बढा लेते है। विचार करने से हमे मालूम होगा कि हम अपनी बहुतेरी आवश्यकताओ को कम कर सकते है। अस्तेय-व्रत

का पालन का निश्चय करनेवाला उत्तरोत्तर अपनी आवश्यकताओ को कम करेगा ।

य० म०, ४६

४ सूक्ष्म और आत्मा को नीचे गिरानेवाली या पतित बनाये रखने वाली चोरी, मानसिक है । मन से किसी चीज को पाने की इच्छा करना या उसपर झूठी नजर डालना चोरी है ।

य० म०, ४७

५ अस्तेय-व्रत का पालक भविष्य मे प्राप्त होनेवाली चीजो के लिए हवाई किले नही बाधा करता ।

य० म०, ४८

६ अस्तेय-व्रत का पालन करनेवाले को बहुत नम्र, बहुत विचार-शील, बहुत सावधान और बहुत सादगी से रहना पडता है ।

य० म०, ५०

७ मैं तो कहूगा कि एक तरह से हम सब चोर है । अगर मै कोई ऐसी चीज लेता हू, जिसकी मुझे तात्कालिक आवश्यकता नही है और उसे अपने पास रखता हू, तो मैं उसे किसी दूसरे से चुराता ही हू ।

स० ई०, २६

८ मनुष्य अपनी कम-से-कम जरूरत से ज्यादा जितना भी लेता है, वह चोरी करता है ।

स० ई, ३६

९ जो चीज हमे जिस काम के लिए मिली हो, उसके सिवा उसे दूसरे काम मे लेना, या जितने वक्त के लिए मिली है उससे ज्यादा वक्त तक काम मे लेना, यह भी चोरी ही है ।

स० ई०, ४७

१० अस्तेय का अर्थ 'चोरी नही करना', इतना ही नही है, जिस वस्तु की हमे आवश्यकता नही है, उसे रखना—लेना भी चोरी है । चोरी मे हिंसा तो भरी ही है ।

बा० आ०, ५७

११ जरूरत से ज्यादा चीजे इस्तेमाल करना भी हिंसा है, चोरी है, परिग्रह है ।

वि० कौ० ग्रा०, ६६

६—अपरिग्रह

१ अपरिग्रही वनने मे, समभावी होने मे हेतु का—हृदय का—परिवर्तन आवश्यक है।

आ० क०, २२८

२ सत्य-शोधक अहिसक परिग्रह नही कर सकता ।

य० म०, ५१

३ यदि सव अपनी आवश्यकतानुसार ही सग्रह करे, तो किसी को तगी न हो ओर सव सतोप से रहे ।

य० म०, ५३

४ हम आदर्श को ध्यान मे रखकर नित्य अपने परिग्रह की जाच करते रहे और जैसे वने, वैसे उसे घटाते रहे । सच्ची सस्कृति, सुधार और सभ्यता का लक्षण परिग्रह की वृद्धि नही, वल्कि विचार और इच्छा-पूर्वक उसकी कमी है ।

य० म०, ५४

५ अभ्यास द्वारा आदमी अपनी आवश्यकताओ को कम कर सकता है, और जैसे-जैसे कम करता जाता है, वैसे-वैसे वह सुखी ओर सव तरह आरोग्यवान वनता है ।

य० म०, ५६

६ जो मनुष्य अपने दिमाग मे निरर्थक विचार ठूस रखता है, वही परिग्रही है । जो विचार हमे ईश्वर से विमुख रखते है या ईश्वर की ओर नही ले जाते, वे इस परिग्रह मे शुमार होते है, और इसलिए त्याज्य है ।

य० म०, ५८

७ सुवर्ण नियम यह है कि जो चीज लाखो को नही मिल सकती, उसे लेने से हम दृढतापूर्वक इकार कर दे ।

स० ई०, १२३

८ अगर हम आज की चिंता कर लेंगे, तो कल की चिंता भगवान कर लेगा।

स० ई०, १२३

९ अपरिग्रह से मतलब यह है कि हम ऐसी कोई चीज संग्रह न करें जिसकी हमें आज दरकार नहीं है।

वा० आ०, १३

१० शुद्ध सत्य की दृष्टि से यह शरीर भी एक परिग्रह है।

मो० मा०, ३१

११ परिग्रही के लिए स्थूल अहिंसा का भी पूरा पालन असंभव-सा है। जो अपनी जायदाद रखता है, वह उसकी रक्षा का भी उपाय करेगा ही। उसमें कहीं-न-कहीं सजा की गुंजाइश जरूर रहेगी। जो सब चीजों से अपनापन हटाकर, उदासीन होकर, व्यवहार करता है, वही स्थूल अहिंसा का पूरा पालन कर सकता है।

स० ई०, ३९

१२ अपरिग्रह-व्रत के पालन में ध्यान रखने की मुख्य बात यह है कि अनावश्यक कुछ भी संग्रह न किया जाय।

गा० सा०, १६३

७—अभय

१ लोगों के लिए सच्ची दवा तो उनके डर को भगाना है।

आ० क०, ३५५

२ भय-मात्र से तो वही मुक्त हो सकता है, जिसे आत्म-साक्षात्कार हुआ हो। अभय अपूर्व स्थिति की पराकाष्ठा—हद—है।

य० म०, ६४

३ शक्ति भय के अभाव में रहती है, न कि मांस या पुट्ठों के गुणों में, जो कि हमारे शरीर में होते हैं।

हिं० स्व०, ४४

४ जिस आदमी ने अपने आप को पा लिया है और जो केवल परमात्मा से डरता है, वह किसी दूसरे से नही डरेगा ।

हिं० स्व०, ८०

५ श्मशान मे सोते हुए भी निडर रहना मनुष्य का कर्त्तव्य है। परतु सभव है कि श्मशान मे सोना शुरू करनेवाला आदमी सोते ही डर के मारे मर जाय ।

गा० मा०, ८५

६ खतरे का डर छोडना जरूरी होता है। वह आ पडे तो उसे उठा लेना जरूरी होता है। लेकिन विना कारण जो उसकी ओर दौडता है, वह सिपाही नही, वल्कि मूर्ख है ।

वा० प० स०, ६३

७ निर्भयता का अर्थ समस्त वाहरी भयो से स्वाधीनता है, जैसे रोगो का भय, शारीरिक चोट या मृत्यु का भय, अपने अत्यत प्रियो अथवा निकटवर्तियो को खोने का भय, ख्याति-नाश का भय, या अप्रसन्न करने का भय, आदि ।

सि० गा०, १५

८ जव हम धन, कुटुव तथा शरीर के मोह को त्याग देते है, तव हमारे हृदयो मे भय का कोई स्थान नही रहता ।

सि० गा०, १८

९ दूसरे श्रेष्ठ गुणो के विकास के लिए निर्भयता अनिवार्य है ।

सि० गा०, २४३

१० अविश्वास भी डर की निशानी है ।

गा० वा०, २५५

११ निर्भयता—अभय—आध्यात्मिकता की पहली शर्त है। कायर मनुष्य कभी सदाचारी और नीतिमान हो ही नही सकता ।

मो० मा०, ६६

१२ हमे सब बाह्य डरो को छोड देना चाहिए, परतु आतरिक शत्रुओ से हमे सदा डरना चाहिए ।

सि० गा०, १५

८—अस्वाद

१ जिस मनुष्य मे विषय-वासना रहती है, उसमे जीभ के स्वाद भी अच्छी मात्रा मे होते है।

आ० क०, २७६

२ मनुष्य को स्वाद के लिए नही, बल्कि शरीर के निर्वाह के लिए ही खाना चाहिए।

आ० क०, २८०

३ किसी पदार्थ का स्वाद बढाने, बदलने या उसके अस्वाद को मिटाने की गरज से उसमे नमक वगैरा मिलाना व्रत का भग करना है।

य० म०, ३१

४ थोडा भी स्वाद किया कि शरीर भ्रष्ट हुआ।

य० म०, ३४

५ जो-कुछ बना है और जो हमारे लिए त्याज्य नही है, उसे ईश्वर की कृपा समझकर, मन मे भी उसकी टीका न करते हुए, सतोषपूर्वक, शरीर के लिए जितना आवश्यक हो, उतना ही खाकर हम उठ जाय। ऐसा करनेवाला सहज ही अस्वाद-व्रत का पालन करता है।

य० म०, ३८

६ जीभ को जीत लेना सब वस्तुओ को जीत लेने के बराबर है।

म० डा० १ न०, २८०

७ जिस चीज के लेने की जरूरत न हो या इच्छा न हो, उसका स्वाद हमे क्यो जानना चाहिए!

बा० प० मी, २३

९—हृदय-शुद्धि

१ शुद्ध हृदय तो स्वर्ग और नरक दोनो का पार पा सकता है।

म० डा० १, २८८

२ जैसे-जैसे मनुष्य ज्यादा पवित्र होगा, वैसे-वैसे वह अधिक प्रवृत्ति-मय होगा। अधिक-से-अधिक कर्मशील मनुष्य ज्यादा-से-ज्यादा सयमी होता है। इसे तुम समाधि की हालत भी कह सकते हो।

म० डा० २, २४६

३ शुद्ध हृदय से निकला हुआ वचन कभी निष्फल नही होता ।

बा० आ०, १३३

४ जिस आदमी का हृदय पवित्र नही है, उसे ईश्वर की प्राप्ति नही हो सकती ।

मि० गा०, ९८

५ शुद्ध भावना से—शुद्ध हृदय से, इस परमात्मा-रूपी आत्मा को सतोष देना ही मनुष्य का प्रथम कर्तव्य है ।

ध० च०, १४३

६ शुद्ध चित्त को किसी का दुख नही लगता । उसमे किसी का दोप नही ठहरता, वह किसी का बुरा नही देखता । यह भव्य स्थिति है ।

बा० प० म०, ३८

७ बलवान हो या निर्बल, गरीब हो या पूजीपति, लेकिन जिसका मन साफ है, उसके पास सभी-कुछ है ।

अ० भा०, १७८

१०—विकार पर विजय

१ विकारो के लिए तालीम कैसी ! वे तो अपने-आप फूट निकलेगे ।

बा० प० प्रे०, १७७

२ यह विकार ऐसी सूक्ष्म वस्तु है कि हम उसे हमेशा पहचान नही सकते ।

बा० प० प्रे०, २४१

३ जो स्त्री या पुरुष मन से भी विकार को पोपण देता है, वह व्यभिचारी है ।

म० डा० २, ४६

४ विकार को वश मे करने के लिए अतर्मुख बनने की जरूरत है । उन्नति का मूल आत्मसमर्पण है, उन्नति का अर्थ है आत्म-ज्ञान ।

म० डा० ३, ८१

५ विकार आग की तरह है। वह मनुष्य को घास की तरह जलाता है।

गा० वा०, ८९

६ विकारी विचार भी बीमारी की निशानी है। इसलिए हम सब विकारी विचार से बचते रहे।

बा० आ०, ७७

७ जो निर्विकार है, उसमे क्रोध, मोह, असत्य, हिंसा, चोरी, झूठ, परिग्रह आदि कुछ भी नही हो सकता। उस आदमी मे ऐसे अवगुण प्रवेश ही नही कर सकते।

ए० च०, ६६

११—संयम

१ मनुष्य किसी भी निमित्त से संयम क्यो न पाले, उसमे उसे लाभ ही है।

आ० क०, २८६

२ योगी और संयमी के आहार भिन्न होने चाहिए, उनके मार्ग भिन्न-भिन्न होने चाहिए।

आ० क०, २८७

३ आत्म-संयम वही रख सकता है जो सदाचार के नियमो का पालन करता है, किसी को धोखा नही देता, सत्य का त्याग नही करता और अपने माता-पिता, पत्नी-बच्चो, नौकरो और पड़ोसियो के प्रति अपना फर्ज़ अदा करता है।

सर्वो०, ९१

४ संयम पालन करना हो तो वह स्वाभाविक रीति से पालन करना चाहिए।

दा० प० ज०, २४०

५ संयम मे ही सुख है।

दा० प० ज०, २४५

६ जीवन संयम के लिए है।

दा० प० ज० २५२

७ सर्वोच्च पूर्णता की प्राप्ति सर्वोच्च सयम के विना सभ्व नही है।

गा० वा०, ३८

८ सयम-हीन स्त्री या पुरुप तो गया-वीता समझिये। इद्रियो को निरकुश छोड देनेवाले का जीवन कर्णवार-हीन नाव के समान है, जो निश्चय ही चट्टान से टकराकर चूर-चूर हो जायगी।

गा० वा०, ११६

९ जो आदमी सयम से मुक्त रहने का, अर्थात इद्रियो के भोग का, रास्ता चुन लेता है, वह विकारो का क्रीत दास रहेगा, और जो आदमी अपने को नियमो और पावदियो से वाध लेता हे वह मुक्त हो जाता है।

वि०, ३८

१० कुदरत वडी कठोर है ओर अपने कानूनो के ऐसे किसी भग के लिए पूरा वदला लेगी। नैतिक परिणाम केवल नैतिक नियत्रणो से ही उत्पन्न किये जा सकते हैं। दूसरे सारे नियत्रण उस हेतु को ही खत्म कर देते है, जिसके लिए वे लगाये जाते है।

मो० मा०, १०५

११ काम-वासना की विजय किसी पुरुप या स्त्री के जीवन का सबसे ऊचा पुरुषार्थ है। काम-वासना पर विजय प्राप्त किये विना मनुष्य अपने पर शासन करने की आशा नही रख सकता।

मो० मा०, १०६

१२ दुनिया मे रहते हुए भी सेवा-भाव से और सेवा के लिए ही जो जीता है, वह सन्यासी है।

स० ई०, ४८

१३ जिस समाज मे प्रौढ सन्यासी विचरते हो, जिस समाज मे धर्म की, और अर्थ की कगाली नही होती, वह पराधीन नही होता।

स० ई० ६८

१४ सन्यास-आश्रम जिदा होता तो दूसरे पासवाले धर्मो पर भी सन्यासियो का असर पडे विना न रहता। सन्यासी हिंदूधर्म का ही नही, सभी धर्मो का है।

स० ई०, ६८

१५ असली गुफा हृदय मे है और श्मशान भी वही है। हम इस गुफा मे रहकर विकार-मात्र की राख कर डालें, तब सच्चा सन्यास कहलायेगा।

म० डा० २, ८९

१२—मन पर नियत्रण

१ मन को वश मे करना तो वायु को वश मे करने से भी कठिन है।

आ० क०, १८२

२ अकुश अदर का ही लाभदायक हो सकता है।

आ० क०, २४८

३ भावना शुद्ध हो तो सकट का सामना करने के लिए सेवक और साधन मिल ही जाते है।

आ० क०, २५२

४ मनुष्य का मनुष्यत्व स्वेच्छा से अकुश मे रहने मे है।

आ० क०, २७७

५ मन का मैल तो विचार से, ईश्वर के ध्यान से और आखिर ईश्वरी प्रसाद से ही छूटता है। विकारयुक्त मन विकारयुक्त आहार की खोज मे रहता है। विकारी मन अनेक प्रकार के स्वादो और भोगो की तलाश मे रहता है और वाद मे उन आहारो तथा भोगो का प्रभाव मन पर पडता है।

आ० क०, २८८

६ मन के विकारो को जीतना, ससार को शस्त्र-युद्ध से जीतने की अपेक्षा, मुझे कठिन मालूम होता है।

आ० क०, ४३३

७ अवाछनीय विचारो को दूर रखने की भी कोई कुजी है। परन्तु वह हरएक को अपने-अपने लिए स्वय ही ढूँढ लेनी होती है।

स० ई०, ११७

८ सदाचार का पालन करने का अर्थ अपने मन और विकारो पर प्रभुत्व पाना।

स० ई०, ४५

९ हम अपने विकारो का जितना पोपण करते हे, वे उतने ही निरकुश वनते ह ।

सर्वो०, ४५

१० हम अपनी लालसाओ को जितना तृप्त करते ह, वे उतनी ही वेलगाम वन जाती हे ।

हिं० स्व०, ६१

११ जो मनुप्य मन जिधर ले जाय उधर इद्रियो को भी जाने देता है, उसका नाश ही होता है ।

वा० प० ज०, ३७

१२ मानव-विकार हवा से भी जल्दी चलने वाले होते है और उन्हे पूरी तरह वश मे रखने के लिए धीरज की जरूरत होती है ।

खा०, ११

१३ मन को जीतना सरल नही है, लेकिन प्रयत्न से वह जीता जा सकता है, ऐसी अटल श्रद्धा रखनी चाहिए ।

वा० प० प्रे०, १६

१४ अपने मन को मदिर वनाओ और उस मदिर मे प्रीति वसाओ, तो इसमे भी अहिसा का शिक्षण है ।

प्रा० प्र० ७, २२

१५ अगर तू केवल अपने मन-मदिर मे ज्योति जगा लेगा तो तेरा सारा काम वन जायगा । उसके वाद तो सारी दुनिया मे ज्योति या प्रकाश ही देखेगा । अधेरा कही रहेगा ही नही । इसी तरह का चमत्कार सत्य और अहिसा मे भरा है ।

प्रा० प्र० ७, ७२

१६ कोई मिस्कीन हो, अनपढ हो, या पढा-लिखा हो, मन है तो सव-कुछ है । मन चगा तो भीतर मे गगा ।

प्रा० प्र० ७, ३२८

१३—त्याग

१ त्याग के क्षेत्र की सीमा ही नही है ।

आ० क०, १८१

२ जहा अमुक वस्तु के प्रति सपूर्ण वैराग्य उत्पन्न हो गया है, वहा उसके विषय मे व्रत लेना अनिवार्य हो जाता है ।

आ० क०, १७८

३ भोग का परिणाम नाश है । त्याग का फल अमरता है ।

आ० क०, १३४

४ त्याग का अर्थ ससार से भाग कर अरण्यवास करना नही, बल्कि जीवन की समस्त प्रवृत्तियो मे त्याग की भावना का होना है ।

य० म०, १३०

५ निष्कामता या त्याग सिर्फ उसकी बात करने से नही आता । वह बुद्धिबल से प्राप्त नही होता। वह सतत हृदय-मथन से ही सिद्ध हो सकता है।

स० ई०, ६२

६ त्याग की प्राप्ति के लिए सम्यक ज्ञान जरूरी है ।

स० ई०, ६२

७ जिस त्याग से पीडा होती है, उसकी पवित्रता नष्ट हो जाती है और अधिक जोर पडने पर वह खत्म हो जाती है ।

सर्वो०, २०

८ शाति और आत्म-त्याग का मार्ग लोक-मत को शिक्षित करने का छोटे-से-छोटा रास्ता है, और इसलिए उसकी जीत दुनिया की दृष्टि मे सत्य की जीत होती है ।

य० अ०, ७१

९ त्याग तथा कष्ट का नियम विश्वव्यापी नियम है, जिसमे किसी अपवाद की गुजाइश नही है ।

सि० गा० १३७

१० प्रेम जिस न्याय को प्रदान करता है, वह है त्याग, और कानून जिस न्याय को प्रदान करता है, वह है सजा ।

गा० वा०, ११४

११ मनुष्य की देह भोग के लिए हर्गिज नही है, मात्र सेवा के लिए है । त्याग मे रहस्य है, जीवन है, भोग मे मृत्यु है ।

गा० वा०, १७२

१२ वैराग्यहीन त्याग, त्याग नही है ।

म० डा० १ न०, ४११

१३ व्यक्ति अगर समझ के साथ त्याग करेगा तो वह समस्त मानव-जाति को अपनी सेवा के क्षेत्र मे अवश्य समा लेगा ।

ए० च०, १७६

१४ त्याग से प्रसन्नता न हो तो वह किसी काम का नही । त्याग करने और मुह फुलाने का मेल नही वैठता ।

वि०, ८८

१५ त्याग की कोई हद नही है । ज्यो-ज्यो हमारा त्याग वढेगा, त्यो-त्यो आत्मा के दर्शन हम अधिक करेगे । मन की गति परिग्रह छोडने की तरफ होगी और शरीर की शक्ति के अनुसार हम त्याग करेगे, तो अपरिग्रह-व्रत का पालन हुआ माना जायगा ।

गा० सा०, १६३

१६ कोई भी इसान, जो पवित्र है, अपनी जान से ज्यादा कीमती चीज कुरवान नही कर सकता ।

प्रा० प्र० २, २९०-९१

१४—तपस्या

१ हमे अपने जीवन मे तपश्चर्या ओर प्रायश्चित्त की आदत डालनी चाहिए । कोई ऐसी वस्तु नही, जिसे तपस्या से प्राप्त न किया जा सके ।

खा०, ३२३

२ तपस्या जीवन की सबसे वडी कला है ।

गा० वा०, १११

३ यदि तप आदि के साथ श्रद्धा, भक्ति, नम्रता न हो तो तप एक मिथ्या कष्ट है । वह दभ भी हो सकता है ।

गा० वा०, १११

१५—क्षमा

१ क्षमा मे सजा से अधिक वहादुरी है । दड देने की शक्ति होने पर भी दड न देना सच्ची क्षमा है ।

सर्वो० ९८

२ क्षमा दड से अधिक पुरुषोचित है।

गा० वा०, ४०

३ जीवन-दान सब दानो से महानतम है। जो आदमी इसे देता है, वह वास्तव मे वैर-विरोध को बेकार कर देता है।

सि० गा०, १५७

१६—दया

१. यदि हम स्वय मानवीय दया से शून्य है तो उसके सिहासन के निकट दूसरो की निष्ठुरता से मुक्ति पाने की याचना हम नही कर सकते।

मे० स० भा०, २६६

२. दया अहिंसा की विरोधी नही है और विरोधी हो तो वह दया नही है। दया को अहिसा का मूर्त स्वरूप मान सकते है।

म० डा० १, १४८

३ जब आत्मा शरीर धारण करती है, तब उसमे अहिसा दया के रूप मे मूर्तिमान होती है।

म० डा० १, १४६

४ स्नेहियो के प्रति वीतराग स्थिति उत्पन्न हो जाय, तभी हृदय सचमुच दयावान बनता है और स्नेहियो की सेवा करता है।

गा० सा०, १४१

५. स्वय अपने ऊपर दया करके हम सब जीवो को समान माने, उन पर दया करे तथा अपने किसी भी सुख के लिए जीव-हानि करते हुए चौके।

गा० सा०, १४४

६. असत्य आचरण करने वाले मे दयाभाव हो, तो उसे अपने दोष का भान होता है, वह खुद शर्माता है और दुबारा न करने का निश्चय करता है।

स० ई०, १४

७. जुल्म करनेवाला जुल्म छोडे तो उसका श्रेय होता है, और दबाया हुआ अपने-आप छूट जाता है।

१७—परोपकार

१ परोपकार का अर्थ है पडौसी की सेवा अथवा यो कहे कि ईश्वर-भक्ति ।

ए० च०, ४८

२ मनुष्य जीते-जी अपने-जैसे मनुष्यो के प्रति जो भलाई करता है, वही उसकी सच्ची पूजी हे ।

ए० च०, १७०

३ जिसका मन परोपकार मे रमा रहता हे और जो अत तक ऐसी हालत मे वना रहता है, उसका जन्म सफल हुआ हे ।

म० डा०१, २२६

४ जो मनुष्य किसी का भी वोझ हल्का करता है, वह निकम्मा नही है ।

वा० आ०, १४५

१८—सेवा

१ ईश्वर की पहचान सेवा से ही होगी—यह मानकर मैंने सेवा-धर्म स्वीकार किया था ।

आ० क०, १३७

२ सेवा के दाम नही लिये जा सकते ।

आ० क०, १६०

३ सार्वजनिक सेवक के लिए निजी भेटे नही हो सकती ।

आ० क०, १६२

४ सेवा की अभिरुचि कुकुरमुत्ते की तरह वात-की-वात मे तो उत्पन्न होती नही । उसके लिए इच्छा चाहिए और वाद मे अभ्यास ।

आ० क०, १६३

५ सेवा के लिए ब्रह्मचर्य आवश्यक है ।

आ० क०, १६३

६ शुद्ध लोक-सेवा मे प्रत्यक्ष नही तो परोक्ष रीति से राजनीति मौजूद ही रहती है ।

आ० क०, २६१

७ यह शरीर हमे इसलिए दिया गया है कि इससे हम सारी सृष्टि की सेवा कर सके ।

म० प्र०, १४

८ निष्काम सेवा परोपकार नही, अपना उपकार है ।

य० म०, १२६

९ सेवा मे अपनी सुविधा के विचार को कोई स्थान ही नही है । सेवक की सुविधा को देखने वाला स्वामी ईश्वर है ।

य० म०, १३६

१० जो अपने मानव-बधुओ की सेवा करता है, उसके हृदय मे निवास करने की भगवान स्वय इच्छा करते है ।

स० ई०, ४६

११ सेवा और अत्यत सादगी का जीवन उत्तम उपदेश है । गुलाब के फूल को कोई उपदेश देने की जरूरत नही पडती, वह सिर्फ अपनी सुगध फैलाता है । यह सुगध ही उसका अपना उपदेश है ।

स० ई०, ६८

१२ मनुष्य-विजय तब हुई मानी जायगी, जब हमारे जीवन का नियामक उसूल, जीवन-सग्राम के बजाय, पारस्परिक सेवा की प्रतियोगिता हो जाय ।

स० ई०, १२५

१३ दुखी और पीडित कौन है? दलित और गरीबी के मारे लोग। इसलिए जो भक्त बनना चाहता है उसे इन लोगो की तन, मन और आत्मा से सेवा करनी पडेगी ।

स० ई०, १७५

१४ सेवा तबतक सभव नही, जबतक उसका मूल प्रेम या अहिंसा न हो ।

स० ई०, १७७

१५ जब कोई पुरुष या स्त्री सेवा के खातिर शरीर-श्रम करे, तभी उसे जीने का हक होता है ।

सर्वो०, १६२

१६ जो स्वार्थ को छोडने और मनुष्य-जन्म की शक्ति की आवश्यकता स्वीकार करने के लिए तैयार नही, उसके लिए सेवा का मार्ग दुर्गम है।

स० ई०, १२८

१७ जो सेवा करना चाहता है, वह अपने आराम का विचार करने मे एक क्षण भी व्यर्थ खर्च नही करेगा, क्योकि उसे वह प्रभु की मर्जी पर छोड देता है।

सर्वो०, १६

१८ राज्य के द्वारा बनायी गई सीमाओ के बाहर अपने पडोसियो की सेवा करने की कोई मर्यादा नही है। ईश्वर ने उन सीमाओ का कभी निर्माण नही किया।

सर्वो०, १७४

१९ सच्चे दिल और सेवा की भावना से किये हुए काम का अत मे तो सभी पर असर पडेगा।

स्त्रि० स०, ४

२० जिनमे सेवा की जीती-जागती भावना भरी है, वे किसी भी हालत मे रहे, सदा सेवा करेंगे।

स्त्रि० स०, ८२

२१ जो मानव-जाति की सेवा करने का दावा करे उसका यह कर्त्तव्य है कि वह उनसे नाराज न हो, जिनकी वह सेवा कर रहा है।

सि० गा०, २४४

२२ दृश्य ईश्वर क्या है ? गरीब की सेवा।

गा० वा०, १०६

२३ सेवा भी उसकी करो, जिसे सेवा की जरूरत है। जिसे सेवा की जरूरत नही है, उसकी सेवा करना ढोग है। वह तो दभ है।

गा० वा०, १०८

२४ धर्म तो कहता है, "मैं सेवा हूँ, मुझे विधाता ने अधिकार दिया ही नही है।"

गां० वा०, १०४

२५ सेवा करने वाले को तो अपनी लाज, आवरू, मान, सर्वस्व होम करके ही प्रजा की सेवा का इरादा करना चाहिए ।

गा० वा०, २५३

२६ शून्यवत होकर रहने का मतलब है अच्छा लेने मे सबसे पीछे रहना । सबकी सेवा करना, उपकार की आशा न रखना, और कष्ट सहन करने मे दूसरो से पहल करना । जो इस तरह शून्यवत रहेगा, वह अपने कर्त्तव्यो मे तो डूबा ही रहेगा ।

म० डा०१, २६६

२७ हम खुद दिन-दिन शुद्ध होते जाय, एक भी गदा विचार मन मे न आने दे, तो यह भी मेरे खयाल से सेवा ही है ।

म० डा०१, ३१८

२८ सब तरह की निःस्वार्थ सेवा का फल आत्म-शुद्धि होता है ।

म० डा०२, ६४

२९ जो लोग सेवा-कार्य मे लगे हुए है उनके सामने हमेशा नही, पर अक्सर कठिनाइया होती ही है ।

म० डा०२, १४१

३० बीमार सेवा लेते है और सेवा नही कर सकते, इस बात का अफसोस करते है । यह वडी भूल है । बीमार शुद्ध विचारो से सेवा करते है । कम-से-कम सेवा ले कर सेवा करनेवालो को अपने प्रेम से नहला कर सेवा करते है । खुद मुफलिस होकर भी सेवा करते है । हमे यह कभी न भूलना चाहिए कि भगवान का शुद्ध चितन भी सेवा ही है ।

मा० डा०२, २३६

३१ परमार्थ की दृष्टि से की हुई सारी वृत्ति निवृत्ति है और मोक्ष का कारण है । दूसरो की सेवा ही परम अर्थ है ।

म०डा०१ न०, २३४

३२ मानव जाति की सेवा भी अत मे तो अपनी ही सेवा है और अपनी सेवा का अर्थ है आत्म-शुद्धि ।

म० डा०१ न०, २८३

३३ अपनी सेवा किये बिना कोई दूसरे की सेवा करता ही नही

और दूसरे की सेवा किये विना जो अपनी ही सेवा करने के इरादे मे कोई काम शुरू करता है, वह अपनी और ससार की हानि करता है।

स० ई०, ५५

३४ शरीरधारी की सेवा करने की शक्ति की मर्यादा होती है।

स० ई०, ५४

३५ सत पुरुष के लिए एकात मे रहकर विचार-मात्र से भी सेवा कर सकना सभव है। ऐसा लाखो मे एक निकल सकता है।

म० डा०२, १५

३६ तन, मन, धन से चुपचाप सेवा करनेवाले की सेवा निष्फल कभी जाती ही नही। अपनी आत्मा को, अपने ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए उसकी दी हुई शक्ति का सदुपयोग करने के खातिर ही सेवा है, वाकी तो दभ ही कहलायगा।

वि० कौ० आ०,१७१

३७ जिसे सेवा करनी है, उसे अपने शरीर की रक्षा पहले करनी चाहिए।

वि० कौ० आ०, २०

३८ जो सच्ची सेवा करनेवाला है, उसका प्रचार तो अपने-आप होनेवाला है।

वि० कौ० आ०, ११३

३९ जो मनुष्य-जाति की सेवा करता है, वह ईश्वर की सेवा करता है।

प्रा० प्र०१, ९८

४० अगर मैं किसी आदमी की सेवा करता हू, तो इसी भावना से प्रेरित होकर करता हू कि वह सिर्फ हिंदुस्तान का या किसी एक धर्म का ही नही, वल्कि सारी मनुष्य-जाति का अग है।

प्रा० प्र०२, ४३

४१ आत्मा अमर होती है और सेवा के द्वारा अपनी मुक्ति के लिए नये-नये चोले धारण करती है।

प्रा० प्र०१, ३३२

४२ हकूमत का क्षेत्र--सरकार का क्षेत्र--वह तो बहुत छोटा रहता है, लेकिन सेवा का क्षेत्र वहुत वडा रहता है।

प्रा० प्र०१, ३६५

१९--यज्ञ

१ जिस कर्म से अधिक-से-अधिक जीवो का विशाल क्षेत्र मे व्यापक रूप से कल्याण हो, जो कर्म अधिक-से-अधिक सरलता के साथ किया जा सके और जिससे अधिक-से-अधिक सेवा होती हो, वह महायज्ञ है।

य० म०, १२३

२ शुद्ध जीवन व्यतीत करने की इच्छा रखनेवाले के समस्त कार्य यज्ञ-रूप होने चाहिए।

य०म०, १२४

३ यज्ञमय जीवन कला की पराकाष्ठा है। इसी मे सच्चा रस और सच्चा आनद है। जो यज्ञ बोझ-रूप मालूम होता है, वह यज्ञ नही है।

य० म०, १३४

४ सद्भाग्य से जिसका हृदय स्वस्थ है, शुद्ध है, उसके लिए यज्ञ सरल वस्तु है, और यज्ञ के लिए न धन की आवश्यकता है, न बुद्धि की और न पढाई की। यज्ञ का अर्थ है कोई भी परोपकारी कार्य। जिसका जीवन पूरी तरह यज्ञमय हो, उसके लिए कहा जा सकता है कि वह चोरी का धन नही खाता।

ए० च०, १५

५ याज्ञिक वेगार नही टालेगा। याज्ञिक यज्ञ मे भाव भरेगा, कला पूरेगा, रग भरेगा और तद्रूप हो जायगा। यज्ञ का द्रव्य शुद्धतम होना चाहिए।

म० डा०२, १४६

६ यज्ञ का अर्थ है काम करने मे कुशलता प्राप्त करना।

स० ई०, ५६

७ दिन के चौवीस घटे कर्तव्य का पालन करना या सेवा करना यज्ञ है।

श्र०, १४

२०—सर्व-धर्म-समभाव

१ कोई क्षण-भर के लिए यह डर न रखे कि दूसरे धर्मों के आदर-पूर्ण अध्ययन मे स्वय अपने धर्म के प्रति हमारी श्रद्धा कमजोर हो जायगी।

सर्वो०, ३१

२ मै सभी धर्मो का स्वागत करता हू। मेरी सभी धर्मो मे श्रद्धा है। परतु मुझे स्वय अपना धर्म छोडने का कोई कारण दिखायी नही देता।

दि० डा १०३

३ सब धर्मो के प्रति समभाव से देखने पर हम दूसरे धर्मो के प्रत्येक स्वीकार करने योग्य तत्त्व का अपने धर्म मे समन्वय करने मे कभी सकोच नही रखेगे, वल्कि ऐसा करना अपना धर्म समझेगे।

मो० मा०, ३५

४ जिस प्रकार किसी वृक्ष का तना एक होता है, परतु शाखाए और पत्ते अनेक होते है, उसी प्रकार सच्चा ओर पूर्ण धर्म तो एक ही है, परतु जब वह मानव के माध्यम से व्यक्त होता है तव अनेक रूप ग्रहण कर लेता है।

मो० मा०, ३५

५ असल मे तो अपने धर्म पर कायम रहकर किसी भी दूसरे धर्म मे जो विशेषता दिखाई दे, उसे ले लेने का हमारा अधिकार है। इतना ही नही, ऐसा करना हमारा धर्म है। दूसरे धर्मो से कुछ भी न लिया जा सके, इसी का नाम धर्माधता है।

म० डा०१, १७०

६ जब हम सब धर्मो को समान दृष्टि से देखेगे, तब हमे अपने धर्म मे दूसरे धर्मो की सभी ग्राह्य बाते अपनाने मे न केवल कोई सकोच ही होगा, वल्कि हम उसे अपना फर्ज समझेगे।

स० ई०, ६१

७ धर्म का अर्थ है अलग-अलग नामो से पहचाने जानेवाले सब धर्मो का एक साथ सकलन करनेवाला ओर उन्हे एकरूप देखनेवाला परम-धर्म।

स० ई०, ४

८ जैसे हम अपने धर्म को आदर देते है, ऐसे ही दूसरे धर्म को दे; मात्र सहिष्णुता पर्याप्त नही है ।

बा० आ०, १७

९ अहिसा हमे दूसरे धर्मो के प्रति समभाव सिखाती है ।

य० म०,७

१० सब धर्मो के प्रति समभाव प्राप्त होने पर ही हमारे दिव्य चक्षु खुल सकते है ।

य० म०, ९१

११ अहिसा हमे यह सिखाती है कि हम दूसरो के धर्म का उतना ही आदर करे, जितना अपने धर्म का करते है ।

स० ई०, ६०

१२ सभी मजहब अच्छे है । विश्वास रखे कि जितने भी धर्म है, सब-के-सब ऊचे है । धर्म मे कसर नही है । कसर है तो उनके आदमियो मे है ।

प्रा० प्र०१, ६३

१३ हरएक धर्म मे जो रत्न की-सी बात हाथ आवे, उसको ले ले, और अपने धर्म की अच्छाई को बढाते चले ।

प्रा० प्र०१, ६३

१४ सब मजहब एक है ।

प्रा० प्र०१, ६५

१५ दुनिया मे जितने आदमी है, उतने ईश्वर के नाम है । ईश्वर, भगवान, खुदा, गॉड, होरमस——जो-कुछ भी कह लो, उसी के नाम है । और इन सब नामो से भी वह ज्यादा है ।

प्रा० प्र०१, ६८

१६ सब धर्मो की जड मे एक ईश्वर का नाम है । सब के धर्म-शास्त्र एक-सी बात कहते है ।

प्रा० प्र०१, १०५

१७ जो सब धर्मों को समान माने, वही हिंदू धर्म है ।

प्रा० प्र०२, २३२

२१—राम-नाम

१ मेरी कल्पना के राम-नाम मे और जतर-मतर मे कोई सवध नही है।

ऐ० वा०, ५१

२ हृदय से राम-नाम लेने का अर्थ एक अतुलनीय सत्ता से महायता प्राप्त करना है। उस सत्ता मे सव प्रकार की पीडा मिटाने का सामर्थ्य है।

ऐ० वा०, ५१

३ मनुष्य किसी भी रोग से पीडित हो, अगर वह हृदय से राम-नाम ले, तो रोग अवश्य नष्ट होगा।

स० ई०, १०४

४ राम-नाम किसी अच्छे उद्देश्य के लिए ही काम मे लिया जाता है, न कि बुरे काम के लिए।

स० ई०, १०५

५ राम-नाम शुद्ध हृदयवालो के लिए है और उन लोगो के लिए है जो शुद्धता प्राप्त करना चाहते हैं। वह कभी भोग का साधन नही बन सकता।

स० ई०, १०५

६ सिर्फ मुह से राम-नाम रटने से कोई ताकत नही मिलती। ताकत पाने के लिए जरूरी है कि सोच-समझकर नाम जपा जाय और जप की शर्तों का पालन करते हुए जिदगी विताई जाय। ईश्वर का नाम लेने के लिए इसान को ईश्वरमय होना चाहिए।

गा० वा०, ७२

७ राम-नाम के विना चित्त-शुद्धि नही हो सकती।

मे० स० भा०, १४१

८ राम-नाम का एक कानून यह है कि कुदरत के नियम न टूटने चाहिए।

ए० च०, १३६

९ रोना-हसना दिल मे से निकलता है। मनुष्य दुख मानकर रोता है। उसी दुख को सुख मानकर हसता है। इसलिए ही राम-नाम का सहारा चाहिए। सब उसके अर्पण करना हो तो आनद-ही-आनद है।

वा० आ०, १६

१० जो लोग कृष्ण-कृष्ण कहते हैं वह उसके पुजारी नही हैं। जो उसका काम करते हैं, वे ही पुजारी है। रोटी-रोटी कहने से पेट नही भरता, रोटी खाने से भरता है।

वा० प० प्रे०, २०४

११ यदि श्रद्धापूर्वक कोई भी आदमी जप जपेगा, तो अत मे वह स्थिर-चित्त होगा ही।

म० डा० २, २३७

१२ शरीर की खुराक जैसे अन्न है, वैसे ही शरीर मे पडी आत्मा की खुराक राम-नाम है।

प्रा० प्र० १, १७६

१३. जो मनुष्य राम-नाम को अपने हृदय मे अकित करता है उसको मरना है ही कहा? यह शरीर क्षणभगुर है। आज है, कल नही, अभी है, दूसरे क्षण नही। तो इसका मै अहकार करु?

प्रा० प्र० १, ३५३

१४ राम-नाम ही सब कुछ है और उसके सामने दूसरे देवताओं का कोई महत्व नहीं है।

प्रा० प्र० २, ७८

२[illegible]—प्रार्थना

१ जब हम सारी आशा छोड़कर बैठ जाते है, हमारे दोनो हाथ टिक जाते है, तब कहीं-न-कहीं से मदद आ पहुचती है। स्तुति, उपासना प्रार्थना वहम नहीं है, बल्कि हमारा खाना-पीना, चलना-बैठना जितना सच है, उससे भी अधिक सच यह चीज है।

[illegible], ६२

२ विकार-रूपी भूलो की शुद्धि के लिए हार्दिक उपासना एक राम-वाण औपधि हे ।

आ० क०, ६३

३ प्रार्थना धर्म का प्राण हे और सार हे, और इसलिए मनुष्य के जीवन का मर्म होनी चाहिए, क्योकि कोई आदमी धर्म के विना जी ही नही सकता ।

स० ई०, ३९

४ प्रार्थना जैसे धर्म का सबसे मार्मिक अग है, वैसे ही मानव-जीवन का भी हे ।

स० ई०, ३९

५ प्रार्थना शब्दो या कानो का व्यायाम-मात्र नही हे, खाली मत्र-जाप नही है ।

स० ई०, ४०

६ आप कितना ही राम-नाम जपिये, अगर उससे आत्मा मे हलचल नही मचती, तो वह व्यर्थ हे ।

स० ई०, ४०

७ जैसे कोई भूखा आदमी मनचाहे भोजन मे मजा लेता है, ठीक वैसे ही भूखी आत्मा को हार्दिक प्रार्थना मे आनद आता है ।

स० ई०, ४०

८ हमारे दैनिक कार्यो मे व्यवस्था और शाति सवाद लाने का एकमात्र उपाय प्रार्थना है ।

स० ई०, ४१

९ प्रार्थना एक प्रकार का आवश्यक आध्यात्मिक अनुशासन हे । अनुशासन और सयम ही हमे पशुओ से अलग करता है ।

स० ई०, ४१

१० हमारी प्रार्थना तो अपने ही हृदय की छानवीन है । वह तो हमे ही यह स्मरण दिलाती है कि हम प्रभु के सहारे के विना लाचार है ।

स० ई०, १२

११ प्रार्थना नम्रता की पुकार है। वह आत्म-शुद्धि का, आत्म-निरीक्षण का आह्वान है।

स० ई०, ४२

१२ जो प्रार्थना नही करता, वह जरूर घाटे मे रहता है।

स० ई०, ४३

१३ ईश्वर की पूजा करना ईश्वर का गुणगान करना है। प्रार्थना अपनी अयोग्यता और दुर्बलता को स्वीकार करना है।

स० ई०, ४५

१४ पूजा या प्रार्थना वाणी से नही, हृदय से करने की चीज है।

स० ई०, ४६

१५ जिन लोगो की वाणी मे तो अमृत है, परतु जिनके हृदय विष से परिपूर्ण है, उनकी प्रार्थना कभी नही सुनी जाती।

स० ई०, ४६

१६ सच्चे हृदय से की हुई प्रार्थना चमत्कार कर सकती है।

स० ई०, ४८

१७ यह मान लेना सबसे बडी भूल है कि गायत्री का जप, नमाज या ईसाई-प्रार्थना अज्ञानियो या विचारहीनो के करने लायक कोई अध-विश्वास है।

स० ई०, ४८

१८ प्रार्थना या उपवास शुद्धि की एक अत्यत शक्तिशाली प्रक्रिया है।

स० ई०, ४८

१९ सच्ची प्रार्थना वह है जो बुद्धि-सगत और निश्चित है। हमे उसके साथ एकाकार होना पडता है। जबान पर अल्लाह का नाम लेते और माला जपते हुए हमारा मन इधर-उधर भटकता हो, तो वह बेकार है।

स० ई०, ४९

२० हार्दिक प्रार्थना निस्सदेह सबसे प्रबल अस्त्र है, जो कायरता और अन्य सब बुरी आदतो पर विजय प्राप्त करने के लिए मनुष्य के पास है।

स० ई०, ५२

२१ हार्दिक प्रार्थना जीभ का जप नही है। यह तो एक आतरिक अभ्यर्थना है, जो मनुष्य के एक-एक शब्द मे, एक-एक काम मे, नहीं-नही, एक-एक विचार मे प्रकट होती है।

स० ई०, ५०

२२ प्रार्थना करनेवाले मनुष्य के लिए पीछे हटने की तो कोई वात ही नही होती।

स०ई०, ५३

२३ मूर्तिया ईश्वर की उपासना मे सहायक होती हैं। कोई भी हिंदू किसी मूर्ति को ईश्वर नही समझता। मै मूर्ति-पूजा को पाप नही मानता।

स० ई०, ७२

२४ किसी-न-किसी रूप मे मूर्ति-पूजा को माने विना आपका काम नही चल सकता।

स० ई०, ७७

२५ मै किसी मदिर का होना पाप या अधविश्वास नही मानता। किसी-न-किसी रूप मे सर्वमान्य पूजा और सर्वमान्य पूजा स्थान मनुष्य के लिए जरूरी है। मदिर मे मूर्तिया हो या न हो, यह अपने-अपने स्वभाव और रुचि की बात है।

स० ई०, ८०

२६ मदिर जाना आत्मा की शुद्धि के लिए है। पूजा करनेवाला पूजा करने मे अपने उत्तम गुणो को वाहर लाता है।

स० ई०, ८१

२७ जब मूर्ति-पूजा विगडकर पत्थर-पूजा हो जाती है और उस-पर झूठे विश्वासो और सिद्धातो की काई चढ जाती है, तव उसे घोर सामाजिक वुराई समझकर उसके साथ लडना जरूरी हो जाता है। दूसरी ओर अपने आदर्श को कोई ठोस रूप देने के अर्थ मे मूर्ति-पूजा मानव-स्वभाव का अभिन्न अग रही है, और भक्ति के लिए वह एक मूल्यवान सहायता भी है।

स० ई०, ८४

२८ व्यक्तिगत स्वार्थ-पूर्ण प्रार्थना बुरी ही है, चाहे वह किसी मूर्ति के सामने की जाय या अदृश्य ईश्वर के सामने ।

स० ई०, ८५

२९ प्रार्थना सच्ची होगी और नम्र हृदय से होती होगी तो मैं जानता हू कि कितने ही आदोलनो की अपेक्षा उसका असर कही अधिक होगा ।

य० श्र०, ८०

३० एक तीव्र इच्छा प्रार्थना का रूप धारण करती है ।

ग्ली० वा० फी० १५

३१ अणुबमो का मुकाबला प्रार्थनामय कर्म से किया जा सकता है ।

ऐ० वा०, ३९

३२ श्रद्धा और प्रार्थनाहीन कार्य उस बनावटी फूल की तरह है जिसमे सुगध नही होती ।

वि०, ३५

३३ प्रार्थना धर्म की आत्मा और उसका सार है, और, इसलिए प्रार्थना मनुष्य के जीवन का मर्म वन जानी चाहिए ।

वि०, ३५

३४ जो मनुष्य प्रार्थनामय हृदय के विना दुनियादारी के काम मे लगा रहेगा, वह स्वय दुखी होगा और दुनिया को भी दुखी करेगा ।

वि०, ३७

३५ प्रार्थना भगवान से एकता स्थापित करने के लिए हृदय की चाह है, उसके आशीर्वाद की माग है। इस मामले मे महत्त्व वृत्ति का है, न कि बोले हुए या गुनगुनाये हुए शब्दो का ।

वि०, ७८

३६ जैसे व्यक्ति के विना समाज हो ही नही सकता, उसी तरह निजी प्रार्थना के बिना सामूहिक प्रार्थना सभव नही ।

स० ई०, ३२

३७ असल मे प्रार्थना का अर्थ ही सदाचरण होना चाहिए ।

वा० प० मी०, ३०९

३८ हम जिसकी आराधना करते है, वैसे ही वन जाते हैं। प्रार्थना का अर्थ इससे ज्यादा नही है।

मा० डा० १, २११

३९ जो दिल से प्रार्थना करेगा, वह अत मे ईश्वरमय ही हो जायगा, यानी निष्पाप वन जायगा।

म० डा० १, २९२

४०. प्रार्थना से इच्छित फल मिला या नही, इसका हमे पता नही चलता।

म० डा० १, २९३

४१ किसी मनुष्य या वस्तु को लक्ष्य मे रखकर प्रार्थना हो सकती है, उसका फल भी मिलता है, मगर ऐसे उद्देश्य से रहित प्रार्थना आत्मा और जगत के लिए ज्यादा कल्याणकारी हो सकती है। प्रार्थना का असर अपने ऊपर होता है यानी उससे अतरात्मा ज्यादा जाग्रत होती है, और ज्यो-ज्यो ज्यादा जाग्रत होती है, त्यो-त्यो उसका असर ज्यादा फैलता है।

म० डा० १, २९३

४२ उल्टा नतीजा निकले, तो यह मानने का कारण नही कि वह प्रार्थना निष्फल ही गई।

म० डा० १, २९३

४३ सच्ची प्रार्थना केवल मुह के वचनो से नही होती। वह कभी झूठी नही पडती।

म० डा० २, २४

४४ भोजन सबके लिए आवश्यक है तो प्रार्थना भी सबके लिए आवश्यक है।

म० डा० २, ९६

४५ हृदय की सच्ची प्रार्थना से हमे सच्चे कर्त्तव्य का पता चलता है। आखिर मे कर्त्तव्य करना ही प्रार्थना वन जाती है।

म० डा० २, १३६

४६ सामुदायिक प्रार्थना की जड वैयक्तिक प्रार्थना ही हो सकती

है। सामुदायिक प्रार्थना पर मैंने वजन दिया है, उसका यह अर्थ कभी नही है कि वह वैयक्तिक प्रार्थना से अधिक महत्त्व रखती है।

म० डा० २, १४९

४७ प्रार्थना तो आत्मा की खुराक है। जिस तरह खुराक के बगैर शरीर कमजोर होता जाता है, उसी तरह प्रार्थना के बगैर हम लोग दिनोदिन असस्कारी बनते जायगे।

अ० झा०, १०

४८ प्रार्थना तो आत्मा को साफ करने की झाड़ू है।

अ० झा०, २३८

४९ दीर्घाभ्यास और प्रयोग की पवित्रता के कारण, शब्दो मे, अत मे एक शक्ति आ जाती है।

वि०, २५

५० प्रार्थना का उपयोग बुद्धि से किसने पहचाना है ? उसका तो अभ्यास से अनुभव होता है। ससार-भर की यही शहादत है।

वि०, ३३

५१ जब काम-क्रोध आदि आवेग तुम पर सवारी करने की धमकी दे, तब घुटनो के बल झुककर ईश्वर की शरण मे जाओ और उससे सहायता की भीख मागो।

मो० मा०, ५४

५२ प्रार्थना प्रात काल का आरभ है और सध्या का अत है।

मो० मा०, ४३

५३ बडे-से-बडे अपवित्र या पापी मनुष्य की प्रार्थना भी सुनी जायगी। यह मै अपने व्यक्तिगत अनुभव पर से कहता हू।

मो० मा० ४४

५४ प्रार्थना लाजिमी हो ही नही सकती। प्रार्थना तभी प्रार्थना है, जब वह अपने-आप हृदय से निकलती है।

गा वा, ७५

५५ हमारी गदगी हमने जवतक नही निकाली है, तवतक प्रार्थना करने का हमे कुछ हक हे क्या ?

वा० आ०, १९१

५६ प्रार्थना वियोगी का विलाप है, उसके विना देहवारी जी ही नही सकता ।

वा० प० प्रे०, २३५

५७ प्रार्थना की आवश्यकता के वारे मे सारे जगत का अनुभव है। उसपर विश्वास रखे तो मन लगता है।

वा० प० प्रे०, १९

५८ प्रार्थना का मूल अर्थ तो मागना होता है। ईश्वर से या वडो से नम्रता के साथ की गई माग ही प्रार्थना हे। यहा इस अर्थ मे प्रार्थना यानी ईश्वर की स्तुति, भजन, कीर्तन, उपासना, सत्सग, अतर्ध्यान, अन्त शुद्धि ।

स० ई०, ३०

५९ प्रार्थना का अर्थ भीतरी शुद्धि भी किया गया है।

स० ई०, ३०

६० हृदय मे उतरी हुई प्रार्थना मे तो फकत इतना अतर्ध्यान रहना चाहिए कि उस वक्त उसे किसी दूसरी चीज का भान ही न हो।

स० ई०, ३१

६१ शरीर के लिए किसी दिन उपवास जरूरी होता हे, लेकिन आत्मा को प्रार्थना से वदहजमी हुई, ऐसा कभी सुना नही।

स० ई०, २९

६२ शाति भी प्रार्थना ही है।

प्रा० प्र० १, १६

६३ ईश्वर को तो मन की प्रार्थना चाहिए। मुह की बात को मान लेने जैसा वह भोला नही है। प्रार्थना का मतलब यह नही है कि जिह्वा से जो उचारा जाय, उसे ही प्रार्थना कहा जाय।

प्रा० प्र० १, ७५

६४. सामूहिक प्रार्थना हमारा खास फर्ज है। इसे झट-से छोडा नही जा सकता।

प्रा० प्र० १, ८७

६५ आकाश से गोले भी क्यो न बरसाए जाय और कैसा भी उपद्रव क्यो न हो, ईश्वर-भजन के समय हमारी शाति भग नही होनी चाहिए।

प्रा० प्र० १, १३७

६६ ईश्वर की प्रार्थना का फल नही मागा जा सकता और न उसकी प्रार्थना छोडी ही जा सकती है। खाने-पीने का उपवास भले ही हम करे, समय-समय पर करना भी चाहिए, पर प्रार्थना का फाका नही हो सकता।

प्रा० प्र० १, १७६

६७ पृथ्वी मे कोई कार्य ऐसा नही होता, जिसका फल न हो, और प्रार्थना तो सबसे उत्तम कार्य है। इसलिए अगर हम मदिर जाते है, माला फेरते है, जो थोडा-सा ढोग भी होता है, उसके पीछे भी अत मे अच्छाई आनेवाली है, यह विश्वास रखे।

प्रा० प्र० १, १८०

६८ श्रद्धा से जो प्रार्थना सुनते है, उन पर असर होता है।

प्रा० प्र० १, ४२६

६९ प्रार्थना करना तो हमारा धर्म है।

प्रा० प्र० २, २४३

७० प्रार्थना ही आत्मा की खुराक है। भगवान के पास से हमे जो खुराक मिल सकती है वह और जगह नही मिल सकती।

प्रा० प्र० २, २५८

२३—भक्त और भक्ति

१ भक्त चाहे तो माला, तिलक और अर्घ्यादि का उपयोग कर सकता है, परतु ये वस्तुए उसकी भक्ति की कसौटी नही है।

स० ई०, ९३

२ भक्त वह है, जो किसी से ईर्ष्या नही रखता, जो दया का भडार है।

स० ई०, ९३

३ वडे-से-वडे कर्मयोगी भी भजन, कीर्तन या पूजा नही छोडते ।

स० ई,० ८२६

४ सकट के समय ईश्वर अपने भक्तो की मदद करता है, यह विश्वास उपयोगी है, ऐसे उदाहरण सग्रह करने-योग्य है। लेकिन अगर कोई ऐसी सहायता की शर्त लगाकर ईश्वर की भक्ति करे, तो वह निरर्थक है।

वा० पा०, प्रे० १

५ भक्त और अभक्त मे भेद यह है कि एक पारमार्थिक दृष्टि से प्रवृत्ति मे रहता है ओर प्रवृत्ति मे रहते हुए सत्य को कभी छोडता ही नही है और राग-द्वेपादि को क्षीण करता है। दूसरा अपने भोगो के ही लिए प्रवृत्ति मे मस्त रहता है और अपना कार्य सिद्ध करने के लिए असत्यादि आसुरी चेप्टाओ से अलग रहने की कोशिश तक भी नही करता है।

म० डा० १, ३१८

६ भक्त के पापो को भगवान क्षमा करता है। शास्त्र की भापा मे इसका अर्थ यह है कि भक्त जव भगवान मे लीन हो जाता है तव शुद्ध हो जाता है। शुद्ध होना पाप का क्षय ही है, जैसे सुवर्ण मे से कुधातु का निकलना।

म० डा० २, १५

७ ईश्वर के भक्तो को काम ढूढना नही पडता। वह ईश्वरपर भरोसा

१० मनुष्य-मात्र मे थोडी-बहुत भक्ति रहती है, इसलिए वह किसी-न-किसी रूप मे भगवान की उपासना कर लेता है ।

म० डा० २, २७२

११ राम के भक्त को तो जगत मे जितने भी जीव-जतु है, उन सब पर प्रेम ही रखना चाहिए ।

वि० कौ० आ०, २५४

१२ जो ईश्वर का डर रखकर चलते है, उन्हे रुपये-पैसे का या और किसी नुकसान का डर रखने का कारण नही है। भगवान के भक्तो के लिए अक्सर ऐसी मुश्किले छिपे हुए आशीर्वाद के समान साबित होती है ।

म० डा० १, २३४

१३ भगवान तो तरह-तरह से अपने भक्त की परीक्षा लेना चाहता है ।

प्रा० प्र० १, २६

१४ जो कोई ईश्वर का भक्त बन जाता है, वह अपने भीतर बैठकर ईश्वर की आवाज सुन लेता है ।

प्रा० प्र० १, ४७

२४—गुण-पूजा

१ गुण की पूजा सदा ही होगी । मगर गुणवान आदमी ने अपने को जहा इससे ऊचा माना कि तुरत उसके गुण निकम्मे हो जाते है । जिसमे कुछ भी गुण है या शक्ति है, वह उसका रक्षक है और उसे उसका उपयोग समाज के लिए करना चाहिए ।

स० ई०, ७०

२ व्यक्ति की पूजा के बजाय गुण-पूजा करनी चाहिए । व्यक्ति तो गलत साबित हो सकता है और उसका नाश तो होगा ही, गुणो का नाश नही होता ।

म० डा० १ , ३३१

३ मोती तो जहा से मिले, वहा से ले लेने चाहिए ।

प्रा० प्र० १, १११

४ सद्गुण और दुगुण आखिर सव मे भरे है।

प्रा० प्र० २, ४६

२५—मूर्ति पूजा

१ मूर्ति-पूजा के मैं दो अर्थ करता हू, एक मे मनुष्य मूर्ति का ध्यान करते हुए गुणो मे लीन होता है। यह अच्छी पूजा है। दूसरे मे गुणो का विचार न करके वह मूर्ति को ही मूल वस्तु मानता है। यह वुतपरस्ती नुकसान करती है।

वा० प० प्रे०, २८

२ मूर्तिपूजा की जरूरत है या नही, यह प्रश्न उठता ही नही, क्योकि यह अनादि काल से है और रहेगी। देहधारी-मात्र मूर्तिपूजक ही होता है।

म० डा० १, २५०

३ मदिरो मे जाने से हमे कोई लाभ होता है या नही होता, यह हमारी मानसिक स्थिति पर निर्भर रहता हे। इन मदिरो मे हमे नम्रता और पश्चात्ताप की भावना से जाना चाहिए। ये सव ईश्वर के निवास हे।

मो० मा० ३९

४ हमे प्रार्थनामय वृत्ति से मदिर मे प्रवेश करना चाहिए। और ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए कि वह वहा आने के फलस्वरूप हमे अधिक पवित्र पुरुप और अधिक पवित्र स्त्रिया वनावे।

मो० मा०, ३९

५ पत्थर की मूर्ति-पूजा का एक तरीका ही तो है। पूजा पैर से हो सकती है, हाथ से हो सकती है और जिह्वा से हो सकती है। पूजा का तरीका कुछ भी हो, पूजा सच्ची होनी चाहिए।

प्रा० प्र० १, ७२

६ मदिर मे जाने से पाप का नाश होता है, यह माना जाता है। अगर सच्चे दिल से पूजा करे तो पाप का नाश होगा ही। ऐसा थोडे ही है कि पापी मदिर मे नही जा सकते और पुण्यशाली ही जा सकते है। तव वहा पाप धुलेंगे किसके? जिन हरिजनो को हमने ही अछूत माना है, वे क्या पापी हो गये?

प्रा० प्र० २, २५५

२६—हिंदू धर्म

१ यही तो हिंदू धर्म की खूबी है कि वह बाहर से आनेवालो को अपना लेता है।

प्रा० प्र० १, २१

२ हिंदू धर्म बहुत बडा धर्म है, वह पुराना धर्म है।

प्रा० प्र० १, २४

३ अहिंसा हिंदू धर्म का असली सार है।

प्रा० प्र० १, ४०

४ धर्म का पालन धैर्य से ही किया जा सकता है। हिंदू धर्म नेसहिष्णुता को बडे महत्त्व का स्थान दिया है।

प्रा० प्र० १, ७४

५ हिंदू सब एक हो। कोई ऊचा, कोई नीचा नही।

प्रा० प्र० १, १६१

६ अगर हिंदू धर्म को आगे बढाना है तो उसमे घृणा और अस्पृश्यता कैसे रह सकती है ? अस्पृश्य तो वे है जो पापात्मा होते हैं। एक सारी जाति को अस्पृश्य बनाना एक बडा कलक है।

प्रा० प्र० १, ४६९-७०

७ हिंदू धर्म एक महासागर है। जैसे सागर मे सब नदिया मिल जाती है, वैसे हिंदू धर्म मे सब धर्म समा जाते हैं।

प्रा० प्र० २, १६८

खंड ३ चरित्र

१—नीति और नैतिकता

१ यह ससार नीति पर टिका हुआ हे। नीति-मात्र का समावेश सत्य मे हे।

आ० क०, २४

२ नैतिक परिणाम नैतिक प्रतिवधो से ही आ सकते हे।

स० ई०, १२०

३ नैतिकता का पालन करना ही अपने मन तथा लालसाओं को जीतना है।

हिं० स्व०, ६१

४ जो आदमी अनीति अपनाता है वह सग करने योग्य नही है।

ए० च०, १४६

५ नैतिक बल के सामने पशु-बल की कोई कीमत ही नहीं है।

प्रा० प्र० १, २००

६ नीति उस समय तक धर्म रह सकती हे जवतक कि उसे चलाया जाय। उसके बाद नही।

प्रॉं० प्र० १, २४७

२—स्वभाव

१ फूटे बरतन को कितना ही पक्का क्यो न जोडा जाय, वह जोडा हुआ ही कहलायगा, सपूर्ण कभी नही होगा।

आ० क०, १४२

२ स्वभाव को कौन वदल सकता है। वलवान सस्कारो को कौन मिटा सकता है!

आ० क०, २२६

३ एक वार वनी हुई आदतो को छोडना कठिन है । ऐसे वहुत कम व्यक्ति है, जो उससे छुटकारा पाने मे सफल होते है ।

शा०, अ०,११

४ हम कुछ आदते डालते है, फिर उनसे उलटा करना शक्ति के बाहर हो जाता है । अच्छी आदतो के लिए यह गुण पैदा करने लायक है ।

वा० प० म०, ४०

५ हम सवमे दैवी और आसुरी प्रकृति काम कर रही है ।

गा० छ०, २६

६ आदमी स्वभाव से जैसा बना है, वैसा ही कर सकता है । इसमे कृत्रिमता को कोई स्थान नही है ।

प्रा० प्र० १, ४२६

३—आचरण

१ वडो की आज्ञा का पालन करना चाहिए। वे जो कहे सो करना, उसके काजी न वनना ।

आ० क०, ४

२ गुण ग्रहण करने के लिए प्रयास की आवश्यकता है ।

आ० क०, १५

३ दूसरो को अपमानित करके लोग अपने को कैसे सम्मानित समझ सकते है ।

आ० क०, १३४

४ आत्मा का विकास करने का अर्थ है चरित्र का निर्माण करना, ईश्वर का ज्ञान पाना, आत्म-ज्ञान प्राप्त करना ।

आ० क०, २९६

५ कथनी की नही, करनी की आवश्यकता है ।

आ० क०, ३५७

६ मनुष्य के वाहरी आचरण से उसके गुणो की जो परीक्षा की जाती है, वह अधूरी और अनुमान-मात्र होती है ।

आ० क०, १६६

७ जव हम दूसरो के गज-जैसे दोषो को रजवत मानकर देखते है

और अपने रजवत प्रतीत होने वाले दोपो को पहाड-जैसा देखना सीखते है, तभी हमे अपने और पराये दोनो का ठीक-ठीक अदाज हो पाता हे। सत्याग्रही वनने की इच्छा रखनेवाले को तो इस साधारण नियम का पालन वहुत अधिक सूक्ष्मता के साथ करना चाहिए।

आ० क०, ४०६

८ सिर्फ इसलिए हम भलाई करना नही छोड सकते कि कभी-कभी भलाई की आड मे वुराई की जाती हे।

म० ई०, ५०

९ ईश्वर का सारा कानून शुद्ध सदाचारी जीवन मे मूर्त्तिमान होता है।

म० ई०, १०५

१० कई वार वुराई से भलाई निकल आती है, परतु यह ईश्वर की योजना हे, मनुष्य की नही। मनुष्य तो यही जानता हे कि जैसे भलाई से भलाई पैदा होती है, वैसे वुराई से वुराई ही उत्पन्न हो सकती है।

स० ई०, १३०

११ धर्म मे कहने की गुजाइश नही होती। उसे जीवन मे उतारना होता है। तव वह अपना प्रचार स्वय कर लेता है।

सर्वो०, ३१

१२ मेरा यह अचूक अनुभव है कि इस दुनिया मे भलाई से भलाई उत्पन्न होती है और वुराई से वुराई।

य० अ०, २०

१३ वुराई केवल वुराई के आचार पर ही पनप सकती है। पुराने ऋषि इस सत्य को जानते थे और, इसलिए वुराई का वदला वुराई से देने के वजाय जान-वूझकर भलाई से देते थे और इस प्रकार वुराई का नाश करते थे।

य० अ०, ७०

१४ ईश्वर हमसे यह पूछेगा—आज भी यही पूछता है—कि हम कैसे है, न कि हमारा नाम और पता क्या है ? उसे तो केवल आचरण

ही चाहिए। आचरण-रहित मान्यता नही चाहिए। वह आचरण को ही मान्यता मानता है।

य० श्र०, ५७

१५ शिक्षा से भी अच्छा यह है कि कार्यकर्त्ता उदाहरण पेश करे।

खा०, ६७

१६ जिस सदाचार का आधार किसी स्त्री या पुरुप की लाचारी हो, उस सदाचार मे क्या धरा है! सदाचार की जडे हमारे दिलो की पवित्रता मे है।

स्त्रि० स०, ९

१७ स्वेच्छा से स्वीकार की हुई पाबदिया ही लाभ पहुचाती है।

स्त्रि० स०, २१

१८ सच्चा रहना, सच्चा विचारना, सच्चा वोलना।

वा० प० ज०, २५७

१९ कृत्रिम कभी मत वनो।

वा० प० ज०, २५७

२० डूवता हुआ एक आदमी दूसरे को कभी नही वचायेगा।

हि० स्व०, ६५

२१ हम जनता को वल द्वारा सदाचारी नही वनाना चाहते।

हि० स्व०, ७०

२२ आपको विचार, वाणी और कार्य का सुदर मेल साधने का ध्येय सदा अपने सामने रखना चाहिए।

मो० मा०, ५५

२३ जिस प्रकार कोई भव्य और सुदर महल अपने निवासियो द्वारा छोड दिये जाने पर वीरान खडहर-जैसा दिखाई देता है, उसी प्रकार चरित्र के अभाव मे मनुष्य भी टूटे-फूटे खडहर-जैसा दिखाई देता है, भले ही उसके पास भौतिक सपत्ति कितनी ही वडी मात्रा मे क्यो न हो।

मो० मा०, ५८

२४ जैसे समुद्र पानी की एक-एक वूद से वना है, वैसे ही देश एक-एक मनुष्य के उत्तम चरित्र से वनेगा ।

विo कीo आo, ८६१

२५ दूसरो का अवलोकन करके हम उनके गुणो का अनुकरण करे और अवगुणो को सहन करे, क्योकि अवगुणो को दूर करने का सव से अच्छा उपाय यही है ।

वाo पo मo, १३८

२६ जव अपने ऊपर वीतती है, तभी हमेशा आदमी को हर वात की समझ आती है ।

अo भाo, १८

२७ जैसा एक आदमी है, उसका ज्ञान सदा जनता को लाभ देता है, कभी हानि नही करता ।

सिo गाo, २४६

२८ हमारे शब्दो की अपेक्षा हमारे जीवन को हमारे सवध मे वताने देना वेहतर है ।

सिo गाo, २५६

२९ महान पुरुष जो-कुछ करते है, वह सभी को करने का अधिकार हो, सो वात नही है ।

मo डाo १, १३७

३० विचार जवतक आचरण के रूप मे प्रकट नही होता, वह कभी पूर्ण नही होता । आचरण आदमी के विचार को मर्यादित करता है । जहा विचार और आचार के वीच पूरा-पूरा मेल होता है, वही जीवन भी पूर्ण और स्वाभाविक वनता है ।

गाo वाo, १०८

३१ सच्चा जीवन विताना खुद ऐसा सवक है, जिसका आसपास के लोगो पर जरूर असर पडता है ।

गाo का पुनo, १०४

३२ अक्सर हम वुरी मिसालो का अनुकरण करके भयकर गलतिया कर वैठते है । सव से सुरक्षित मार्ग यह है कि जिनके

बारे मे हमे पूरी जानकारी नही है, ऐसे उदाहरणो की हम नकल न करे।

ह०, १४

३३ लोगो ने अपने लिए जरूरत के बहाने पापाचरण तक की गुंजाइश बना ली है।

बा० प० मी०, ६०

३४ अमल करने का साधारण आग्रह हो तो अमल आसान है।

स० ई०, ५१

३५ क्या करना है, मनुष्य यह जानता है, लेकिन जानता है, वह करता नही।

बा० आ०, २७३

३६ धर्म के बिना नैतिक जीवन बालू की भीत के समान है। और सदाचार-रहित धर्म उस पीतल की तरह है, जो केवल शोर मचाने और सिर फोडने के लिए ही अच्छा है।

वि०, ६

३७ जो बाहर से बुरा दीखता है, वह अंदर से भी बुरा ही हो, ऐसा कोई नियम नही है।

बा० प० प्रे०, १३१

३८ आचार के बिना बौद्धिक ज्ञान उस निर्जीव देह की तरह है, जिसे मसाला भरकर सुरक्षित रखा जाता है। वह शायद देखने मे अच्छा लग सकता है, परतु उसमे प्रेरणा देनेकी शक्ति नही।

मे० स० भा०, १६४

३९ अधानुकरण भी बुद्धि का लकवा है। क्या कभी बुरी वस्तु का भी अनुकरण किया जा सकता है?

अ० भा०, ११

४० आदमी की अपने को धोखा देने की शक्ति इतनी है कि वह दूसरो को धोखा देने की शक्ति से बहुत अधिक है। इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण हरएक समझदार आदमी है।

बा० आ०, १७७

४१ कम वोलो, पर ज्यादा करके दिखाओ ।

अ० भा०, ६८

४२ स्वेच्छा और आनद के साथ किये गए काम का दवाव नही मालूम होता ।

म० डा० १, २१८

४३ हमारे रोजमर्रा के काम कितने ही छोटे हो, मगर उनसे हम पूरा सतोष माने, तो इसके वरावर ओर कोई अच्छी वात नही हे। जो राह देखते है, जाग्रत रहते है और प्रार्थना करते ह, उनके लिए ईश्वर वडे काम और वडी जिम्मेदारिया जुटा देता है ।

म० डा० १, २१९

४४ जिसे अपने काम मे तन्मयता है, उसे वोझ या थकावट महसूस नही होती । जिसे रस नही, उसे थोडा काम भी ज्यादा लगता है । जैसे कैदी को एक दिन भी एक साल लगता है, और भोगी को एक वर्ष एक दिन लगता है ।

म० डा० १, २२१

४५ आचरण-रहित विचार कितने ही अच्छे क्यो न हो, तो भी उन्हे खोटे मोती की तरह समझना चाहिए ।

म० डा० २, १५

४६ ठोस परिणाम तो लगन के साथ और चुपचाप किये गए ठोस काम से ही लाये जा सकते है ।

म० डा० २, १६१

४७ एक चीज पूरी हो जाय तो फिर दूसरी देखेगे, यह काम क्रम-वद्ध हुआ है। धर्म जैसे मार्ग वताता जाय, वैसे काम करते जाना चाहिए ।

म० डा० १, २७९

४८ शक्ति शारीरिक समता से नही उत्पन्न होती, वह अजेय सकल्प(या इच्छा) से उत्पन्न होती है ।

गा० वा०, ४०

४९ सकल्प तो सकल्पकर्ता-रूपी नाविक के लिए दीपक-रूप है ।

दीपक की ओर लक्ष्य रखे तो अनेक तूफानो मे से गुजरते हुए भी मनुष्य उभर सकता है।

गां० वा०, ६२

५० जो मनुष्य किसी एक चीज पर एकनिष्ठा से काम करता है वह आखिर सब चीज करने की शक्ति हासिल करेगा।

बा० आ०, ३६

५१ सही चीज के पीछे वक्त देना हमको खटकता है, निकम्मी के पीछे जलील होते है और खुश होते है।

बा० आ०, ५७

५२ पवित्रता सजीव वस्तु है। वह रोग के जतुओ से भी अधिक चिपकनेवाली है। जिसकी इच्छा न हो, उसपर भी रोग के कीडे जिस तरह असर करते है, उसी तरह पवित्रता का भी असर मनुष्य पर उसकी इच्छा के विरुद्ध होता है।

म० डा० २, २२०

५३ हमे अपनी भलाई नही छोडनी चाहिए।

प्रा० प्र० १, ३०

५४ बदमाश को देखकर भी हमे बुराई पर नही उतरना चाहिए।

प्रा० प्र० १, ३१

५५ जबरदस्ती और मारपीट से कुछ हासिल होनेवाला नही है। अगर किसी ने मारपीट करके कुछ ले लिया या दूसरे से कुछ करवा लिया तो वह टिकनेवाली बात नही होगी। ऐसा तो चोर-डाकू करते है। दूसरे लोग डाका डाले, तो क्या हम भी डाकू बन जायगे! नही, हम उनके रास्ते पर नही चलेगे।

प्रा० प्र० १, ३७

५६ अगर हम दूसरो की गदी बातो का अनुकरण करेगे तो मर जायगे।

प्रा० प्र० १, ६५

५७ हरएक बात मीठी भाषा मे कही जा सकती है। अगर हम असभ्यता बरतते है तो अपना ही गला काट लेते है।

प्रा० प्र० १, ७०-७१

५८ असत्य और हिंसा पर जीत केवल सत्य और अहिंसा से ही हो सकती है ।

प्रा० प्र० १, १४१

५९ असत्य और वुराई के साथ तो कभी समझौता नही करना चाहिए ।

प्रा० प्र० १, १४१

६० मुश्किल या उलझन मे पुराने नमूने या कठिनाई और उलझन के समय पुराने उदाहरण और अनुभव काम आते हे, लेकिन इसान को यन्त्र वनकर काम नही चलाना है ।

प्रा० प्र० १, १६४

६१ कडवी चीज को मीठी वनाने से वह मीठी नही वन जाती ।

प्रा० प्र० १, १७३

६२ यदि कोई आदमी वुरा भी होता है तो उसकी वुराई उसके साथ चली जाती है, केवल भलाई ही पीछे रहती है ।

प्रा० प्र० १, २००

६३ एक आदमी यदि अच्छा काम करता है तो वह उस भले काम मे सारे जगत को हिस्सेदार वना लेता है । जो आदमी वुरा काम करता है,उसमे सारा जगत हिस्सेदार नही वनता, परतु जगत को उससे दुख तो पहुचेगा ही ।

प्रा० प्र० १, २०२

६४ वुरा वरताव करनेवाला कोई भी क्यो न हो, वह ईश्वर के सामने गुनाह करता है ।

प्रा० प्र० १, २३७

६५ जो किसी के साथ धोखा करता है, वह किसी का कुछ नही विगाड सकता । वह केवल अपना ही वुरा करता है ।

प्रा० प्र० १, २६९-७०

६६ भलाई की निशानी यह है कि हम दुष्टता का वदला दुष्टता से न दे कर साधुता से दे ।

प्रा० प्र० १, ३७२

६७ मनुष्य को उसके कार्य से जाचना चाहिए, न कि उस भावना से, जिससे वह प्रेरित हुआ है। केवल परमात्मा ही मनुष्य के हृदय को जानता है।

प्रा० प्र० १, ३८८

६८ हम अपना भगवान कहा देखे ? उसको हम अपने कामो मे देखे।

प्रा० प्र० १, ४३८

६९ इसान क्या चोरी या लूट करने से या किसी के मकान जलाने से कभी अपना भला कर सकता है ?

प्रा० प्र० २, २१४

७० ख्याल एक चीज का करे, उच्चारण दूसरे का और आचरण तीसरी चीज का करे तो वात वनती नही।

प्रा० प्र० २, २४४

४—प्रेम और मित्रता

१ शुद्ध प्रेम के लिए कुछ भी असंभव नही हे।

आ० क०, १०

२ प्रेम किन वधनो को नही तोड सकता !

आ० क०, १५६

३ जहा प्रेम है, वहा जीवन है। द्वेप नाश की ओर ले जाता है।

स० डि०, १६

४ सार्वत्रिक और सर्वव्यापी सत्य की भावना का प्रत्यक्ष दर्शन करने के लिए, हममे छोटे-से-छोटे जीव मे अपनी ही तरह प्रेम करने की सामर्थ्य होनी चाहिए।

स० डि०, १३६

५ मेरा ध्येय सारी दुनिया के साथ मित्रता का सबध कायम करना है और मै बडे-से-बडे प्रेम के साथ अन्याय के बडे-से-बडे विरोध का मेल बैठा सकता हू।

स्पी०, ९५

६ प्रीति कोई कानून से पैदा होनेवाली अथवा नियमो म रहने वाली वस्तु नही ।

य० अनु०, १८

७ यदि सब हालतो मे न हो तो कम-से-कम बहुत-सी हालतो मे प्रेम तथा दया की शक्ति हथियारो की शक्ति से अनतगुना अधिक होती है ।

हिं० स्व०, ७५

८ जब शस्त्र-शक्ति का प्रेम या आत्मा की शक्ति से मुकाबला होता है, तब वह शक्तिहीन होती है ।

हि० स्व० ७६

९ प्रेम की शक्ति वही है, जो कि आत्मा या सत्य की शक्ति है ।

हिं० स्व०, ७७

१० प्रेम तो हृदय का होना चाहिए । हृदय के प्रेम का प्रदर्शन करने की जरूरत नही होती ।

प० च०, १४९

११ सच्चा प्रेम समुद्र की तरह निस्सीम होता है और हृदय के भीतर ज्वार की तरह उठकर बढते हुए वह बाहर फैल जाता है तथा सीमाओ को पार करके दुनिया के छोरो तक जा पहुचता है ।

मे० स० भा०, ६८

१२ प्रेम-तत्त्व ही ससार पर शासन करता है ।

गा० वा०, ८६

१३ शुद्ध प्रेम देह का नही, आत्मा का ही सभव है । देह का प्रेम विषय ही है ।

गा० वा०, ८७

१४ हम विरोधी को केवल प्रेम से अपना कर सकते है, न कि घृणा से । घृणा तो हिसा का अत्यत सूक्ष्म रूप है । अपने मे घृणा रखते हुए हम असल मे अहिसक नही हो सकते ।

सि० गा०, १५७

१५ प्रेम मे बहुत प्रेम को खीचने का विशेष गुण है ।

सि० गा०, १५८

१६ ससार के हाथ मे प्रेम अत्यत बलवान शक्ति है, और फिर भी यह कल्पनातीत रूप से अत्यत नम्र है ।

सि० गा०, १५८

१७ जहा प्रेम है, वहा ईश्वर भी है ।

मो० मा०, १५

१८ भारी-से-भारी चीज पख-जैसी हलकी वन जाती है, जव प्रेम उसे उठानेवाला होता है ।

म० डा० ३, ३

१९ प्रेम का दवाव विशुद्ध वनाता है और प्रेमी तथा प्रेम-पात्र को ऊचा उठाता है ।

म० डा० ३, १२५

२० प्रेम तो बल का सत्व है, सर्वत्र भय का सर्वथा अभाव हो जाय, तभी प्रेम का मुक्त प्रवाह हो सकता है । प्रेमी जनो की सजा तो आत्मा पर ठडे मरहम के वरावर है ।

म० डा० १ न०, १५५

२१ प्रेम सत्य का सक्रिय रूप है ।

म० डा० १ न०, ३५९

२२ प्रेम कहो या दया, वह बलवान मनुष्य की निशानी है ।

म० डा० १ न०, ३९७

२३ प्रेम तो त्याग से ही पनपता है ।

वा० प० मी०, १७३

२४ ज्ञानपूर्ण प्रेम मे सदा धैर्य होता है ।

वा० प० मी०, २२६

२५ असली प्रेम का आधार सर्वथा उसके आध्यात्मिक अश पर होता है, यद्यपि शुरू मे वह इद्रियो के द्वारा पैदा होता है ।

वा० प० मी, २७०

२६ यदि प्रेम जीवन का नियम नही होता तो मृत्यु के वीच जीवन टिक नही सकता था । जीवन मृत्यु पर एक शाश्वत, सनातन विजय है ।

मो० मा०, १६

२७ आदमी दो तरह से अपने दुश्मन को कैद करते है। एक सख्ती से और दूसरे मुहब्बत से।

प्रा० प्र० १, १०७

२८ मनुष्य को अपनी ओर खीचनेवाला अगर जगत मे कोई असली चुवक है तो वह केवल प्रेम ही है।

प्रा० प्र० १, १३१

२९ प्रेम और वैर का मेल किस तरह से हो सकता हे ?

प्रा० प्र० १, १४२

३० अगर कोई गाली देता है तो उसका जवाव हम मुहब्वत से दे।

प्रा० प्र० १, १५४

३१ जो आदमी बुरा काम करता है, वह बुरा तो लगता है, मगर आखिर तो वह हमारा ही भाई है।

प्रा० प्र० १, १९८

३२ इसान का बडे-से-बडा उद्योग भगवान को पाने की कोशिश करने मे है। वह मदिरो, मूर्तियो या इसान के हाथो बनाई हुई पूजा की जगहो मे नही मिल सकता और न उसे व्रतो और उपवासो के जरिये ही पाया जा सकता है। ईश्वर सिर्फ प्यार के जरिये मिल सकता है, और वह प्यार लौकिक नही, अलौकिक होना चाहिए।

प्रा० प्र० २, ८१

३३ दुनिया मे प्रेम सबसे ऊँची चीज है।

प्रा० प्र० २, ८४

३४ मित्रता मे अद्वैत भाव होता है।

आ० क०, १५

३५ मित्रता समान गुणवालो के बीच शोभती और निभती है।

आ० क०, १५

३६ जिसके साथ हृदय की गाठ बध गई है, केवल धन की कमी के कारण उसका वियोग सहना अनुचित कहा जायगा।

आ० क०, २६८

३७ सच्चा धर्म तो यही है कि मनुष्य को सब के साथ मैत्री रखना चाहिए और सब की सेवा करनी चाहिए ।

वि० कौ० आ०, २५७

३८ जैसे बिंदु का समुदाय समुद्र है, इसी तरह हम मैत्री करके मैत्री का सागर बन सकते है। और जगत मे सब एक-दूसरे से मित्र-भाव से रहे तो इस जगत का रूप बदल जाय ।

बा० आ०, ७१

५—उदारता और सहिष्णुता

१ उदारता ही दया मे निहित है और ऐसे उदारचित्त ही सच्चे मर्द है ।

म० डा० १न०, ३९२

२ दूसरे के प्रति उदारता रखनी चाहिए, अपने प्रति कृपणता ।

बा० प० प्रे०, १७६

३ हमे अपना हृदय दरिया की तरह विशाल रखना चाहिए । दरिया मे लोग कितना कूडा-करकट फेकते है, फिर भी उसमे नहाकर हम पवित्र हो जाते है । खारा होने पर भी उसकी कितनी ज्यादा जरूरत है, यह कभी सोचा हे ? अगर हम इस तरह उदार बने तो अपनी मानवता से दुनिया-भर मे दरिया-जैसी आवश्यकता वाले महत्त्वपूर्ण देश के नागरिक के नाते ख्याति प्राप्त करेगे ।

अ० झा०, ४

४ आचरण का सुनहरा नियम यह है कि आपस मे यह समझकर सहिष्णुता रखी जाय कि हम सबके विचार एक-से कभी नही होगे और हम सत्य को आशिक रूप मे और विभिन्न दृष्टियो से देख सकते है ।

स० ई०, ६२

५ अगर हम असहिष्णुता से दूसरो के मत का दमन करेगे, तो हमारा पक्ष पिछड जायगा ।

सर्वो०, १०५

६ असहिष्णुता बताती है कि अपने ध्येय की सच्चाई मे हमारा पूरा विश्वास नही है ।

मे० स० गा०, ८३

७ सीधी बात को भी मनुष्य टेढी समझे, उसे सहन करने मे कितनी भारी अहिसा चाहिए ।

वा० आ०, २७७

८ सहिष्णुता हमे आध्यात्मिक अतर्दृष्टि प्रदान करती है, जो धर्माधता से उतनी ही दूर है, जितना उत्तरी ध्रुव से दक्षिणी ध्रुव । धर्म का सच्चा ज्ञान एक धर्म और दूसरे धर्म के बीच की दीवारो को तोड देता है ।

मो० मा०, ३६

९ प्रत्येक मानव अपने दृष्टिकोण से सच्चा है, परतु यह अनभव नही कि प्रत्येक मानव गलत हो । इसीलिए सहिष्णुता की जरूरत पैदा होती है । इस सहिष्णुता-गुण का यह अर्थ नही कि हम अपने धर्म की उपेक्षा करे, वरन यह है कि अपने धर्म के प्रति हम अधिक ज्ञानमय, अधिक सात्त्विक और निर्मल प्रेम रखे ।

मो० मा०, ३६

१० दुनिया मे कई चीजे ऐसी होती रहती है, जो अपने मन की नही होती, फिर भी हम उन्हे सहन करते है ।

प्रा० प्र० १ १३४

११ सहिष्णुता के लिए यह जरूरी नही है कि जिस चीज को मै सहन करू, उसका मै समर्थन भी करू ।

मो० मा०, ३७

१२ असहिष्णुता भी एक प्रकार की गुडागिरी ही है ।

वि० कौ० आ०, ३२२

६—धैर्य

१ धैर्य से, या शाति से, क्या नही हो सकता ! इसका तजुरबा लेना चाहे, तो रोज मिल सकता है ।

बा० आ०, २३३

२ यदि धैर्य का कोई मूल्य है तो उसे अत तक सहन करना चाहिए, । और एक प्राणवान विश्वास कठोरतम तूफान के बीच मे भी बना रहेगा ।

सि० गा०, २४४

३ विपत्ति के लिए धैर्य के सिवा और कोई इलाज नही है।

गा० सा०, ८४

४ हम धीरज खो दे तो हम हार जायगे।

प्रा० प्र० १, २८५

५ अधीरज को धीरज से ही मारा जा सकता है और गरमी को सरदी से।

प्रा० प्र० १, १४८

६ जब हमारे दिल मे शक पैदा हो जाता है तो अच्छा तरीका यही है कि हम धैर्य रखकर बैठे रहे, बजाय इसके कि हम कोई पत्थर फेक कर मामले को और बिगाडे।

प्रा० प्र० १, १६५

७—विश्वास

१ अविश्वास आदमी को खा जाता है।

प्रा० प्र० १, २०७

२ जिस आदमी ने दूसरे व्यक्तियो मे विश्वास पैदा कर दिया है, उसने इस ससार मे कुछ नही खोया है।

हिं० स्व०, ५३-५४

३ जब विश्वास शक्तिमान होता है तो बुद्धि के मारफत चमकता है।

खा०, १०४-०२

४ एक आदमी को दृढ विश्वास बनाने मे धीमा होने की आवश्यकता है, परतु एक बार बनाने के पश्चात बडी-से-बडी विषमता के विरुद्ध भी उसकी रक्षा की जानी चाहिए।

ग० श्र०, १८

५ दृढ विश्वास इसीलिए होते है कि उनके लिए हम जिये और मरे और उनपर अमल तो जरूर ही करे। मगर वह दृढ विश्वास, जिस पर कुछ भी अमल न हो, निरर्थक है।

दि० डा०, १४१

६ विश्वास या तो प्राप्त किया जाता है या अदर से पैदा होता है।

म० डा० १, १४

७ परस्पर विश्वास और सरल चित्त से दूसरो की वात समझ लेने की तैयारी, यही अहिंसा का राजमार्ग है।

गा० वा०, ४५

८ वह विश्वास कच्चा है, जिसे स्थिर रहने के लिए अनुकूल समय की अपेक्षा है। केवल वही सच्चा विश्वास है, जो विपरीत समय मे भी स्थिर रहता है।

सि० गा०, २४२

८—कायरता-निर्भीकता

१ किसी हिंसक मनुष्य के किसी दिन अहिंसक वन जाने की आशा हो सकती है, मगर वुजदिल के लिए ऐसी कोई आशा नही होती।

सर्वो०, ६७

२ मैं यह जरुर मानता हूं कि जहा केवल कायरता और हिंसा के वीच ही चुनाव करना हो, वहां मैं हिंसा की सलाह दूगा।

सर्वो०, ६८

३ जो पुरुष या स्त्री मौत का सारा डर छोड देता है, वह न सिर्फ अपनी ही रक्षा कर लेगा, वल्कि अपने प्राण देकर दूसरो को भी वचा लेगा।

सर्वो०, १३३

४ जो जान देता है, वही वचता है।

स्त्रि० स०, ६८

५ प्राणो का मोह छोड़ने से ही जीवन का आनद मिल सकता है। यह त्याग हमारे स्वभाव का अंग वनना चाहिए।

स्त्रि० स०, ६८

६ डरपोकपन से वड़ा कोई पाप नही है।

स्त्रि० स०, १०१

७ कोई औरत गुडो के सामने झुकने की वजाय यकीनन खुदकशी करना ज्यादा पसद करेगी। दूसरे शब्दो मे, जीवन की मेरी योजना मे झुकने को कोई जगह नही है।

स्त्रि०, स०, १०१

८ साहस तथा पराक्रम से शून्य कभी सत्याग्रही नही वन सकता ।

फा० पै०, ११

९ अहिंसा कायरता का वहाना नहीं है, बल्कि यह तो वीरो का सर्वोच्च गुण है ।

फा० पै०, १२

१० कायरता और अहिंसा पूर्णरूप से परस्पर विरोधी है ।

फा० पै०, १२

११ कायरता हिंसा से भी वुरी नामर्दी है ।

फा० पै०, १३

१२ कायरता से तो वहादुरी के साथ शारीरिक वल काम मे लाना हजार दरजे अच्छा है । कायरता की अपेक्षा लड़ते-लडते मारा जाना हजार गुना अच्छा है ।

गां० वा०, ५८

१३ जो मनुष्य मार के डर से गाली खाकर वैठ रहता है, वह न तो मनुष्य है, न पशु है ।

गा० वा०, ७५१

१४ डरनेवाले को सभी डराते है ।

वि० कौ० ग्रा०, १६८

१५ जो कमजोर है, निराधार हैं, उन्हें मारना वुजदिली है ।

ग्र० ग्रा०, ६६

१६ भाग जाने की अपेक्षा प्रहार करना कहीं अधिक अच्छा है ।

गा० ठ०, ३०

१७ गुंडे सिर्फ वुजदिल लोगो के वीच पनप सकते हैं ।

गा० वा०, ७७०

९—भूल मानना

१ मनुष्य कितना दुर्वल और भूलभरा प्राणी है ।

ए० वा०, ७७

२ भूल करना मनुष्य का काम है और उसे सुधारना भी उसी का काम है। परन्तु यह जानकर भी कि हम भूल कर रहे हैं उसे न सुधारना मनुष्यता का पतन है।

हि० वा०, १४२

३ तमाम उन्नति गलतियो और उनके सुधार के द्वारा प्राप्त होती है।

सि० गा०, ३६

४ भूल करने के अधिकार का अर्थ प्रयोगो को आजमाने की स्वाधीनता है और यह समस्त उन्नति की विश्वव्यापी शर्त है।

सि० गा०, ४१

५ भूल को मानना एक झाड़ू के समान है, जो कि गदगी को बुहारती है और फर्श को पहले से ज्यादा साफ कर देती है। ससार के सामने झूठा बनकर प्रकट होना अपने प्रति झूठा बनने की अपेक्षा लाखो गुना बेहतर है।

सि० गा०, २४६-४७

६ कोई अपयश भूल को मानने से इकार करने की अपेक्षा बड़ा नही है।

सि० गा०, २४७

७ गलती करना गलत नही है, क्योकि गलती कोई गलती समझकर नही करता, लेकिन गलती हमारे ध्यान मे आ जाय और फिर भी हम उसे सुधारे नही, यह गलती है।

गा० ना० स०, ९५

८ भूल करना मनुष्य का स्वभाव है। की हुई भूल को मान लेना और इस तरह आचरण करना, कि जिससे वह भूल फिर न होने पावे यह मर्दानगी है।

गा० वा०, १००

९ बडी-से-बडी सावधानी के बावजूद यदि मनुष्य से गलतिया हो जाय, तो उन गलतियो से ससार को सचमुच कोई क्षति नही होती, और न किसी व्यक्ति को हानि पहुचती है। जो मनुष्य ईश्वर से डरते हैं,

उनकी जान-बूझकर न की गई गलतियो के परिणामो से ईश्वर हमेशा ससार को बचा लेता है ।

मो० मा०, २७

१० हमेशा अपनी भूल स्वय ही स्वीकार करने मे जितनी श्रेष्ठता है, उतनी कागज पर लिखकर स्वीकार करने मे या किसी और की मारफत स्वीकार करने मे नही ।

ए० च०, १२

११ मनुष्य जो भूल करता है, उसका फल भोगना ही पडता है ।

ए० च०, ११४

१२ मनुष्य को हमेशा स्पष्ट रहना चाहिए । अपनी भूल को सूक्ष्म-दर्शक यत्र से देखना सीखना चाहिए और दूसरे की भूल को पहाड पर से देखना चाहिए । यदि हम यह नियम अपना ले, तो हजारो पापो से बच जाय ।

ए० च०, १८०

१३ मनुष्य जब अपनी भूल को पर्वत के समान मानकर दूसरे की भूल को अणु के समान समझे, तो ही उसका नाम मनुष्यता है ।

वि० कौ० आ०, १२६

१४ दूसरे की भूल के लिए भी हमे उसे पीडा नही पहुचानी चाहिए । हमे खुद कष्ट उठा लेना है । जो इस सुवर्ण नियम का पालन करता है, वह सब सकटो से बच जाता है ।

य० म०, १०१

१५ भूल करने से कोई मनुष्य बचा नही । इसलिए भूल तो मनुष्य से होती ही है, उसमे बहुत खतरा नही है । लेकिन उस भूल को छिपाने मे खतरा है, क्योकि एक भूल छिपाने के लिए जो झूठ बोलना पडता है वह दूसरी भूल होती है । इस तरह भूलो की परपरा चालू रहे तो बेशुमार नुकसान भोगने पड़ सकते है ।

वि० कौ० आ०, १६३

१६ भूलें अगर इरादे के साथ न की गई हो तो सदैव क्षमा के लायक है ।

अ० भा०, ६०

१७ भूल की माफी मागना अच्छा काम है, इसलिए उसकी शर्म कैसी ! माफी मागने का अर्थ है, फिर से भूल न करने का निश्चय ।

म० डा० १, २२६

१८ एक बार भूल मालूम हुई कि तुरत उसे सुधारना चाहिए ।

म० डा० २, ८४

१९ हम भूलें करके ही सीखते है । परतु जहा भूल होने का ज्ञान हो, वहा अधिकाश मामलो मे सुधार कर लेने की तैयारी ही काफी प्रायश्चित और इलाज है ।

बा० प० मी०, २२

२० इंसान तो भूलो की पोटली है, लेकिन हमे उन भूलो को धोना चाहिए ।

प्रा० प्र० १, ८

२१ हम कोई फरेब न करे । अपने मे कोई गलती न रहे । यही धर्म का मार्ग है ।

प्रा प्र० १, २१३

२२ आखिर मे गलतिया दुरुस्त करना भी इंसान का काम है । हम अपनी गलतिया दुरुस्त कर लेते है, तो हम इसान बन जाते है ।

प्रा० प्र० १, ४१४

२३ गलती सब करते है, उससे क्या ? लेकिन जब गलती पर कायम रहते है तब हम जो करते है, उसको शैतानियत मानता हू । उसी पर कायम रहे, तो वह इसानियत नही है ।

प्रा० प्र० २, १७६ ७७

१०—ईमानदारी और प्रतिज्ञा-पालन

१ इस दुनिया मे धोखेबाजी का कोई ईलाज नही है।

खा०, १६

२ कानून द्वारा या शिक्षा द्वारा जबतक ईमानदारी व्यापारिक सदाचार का पूर्ण अश नही बन जाती, तबतक एक व्यक्ति को शुद्ध वस्तुए धीरज और उद्यम से प्राप्त करनी होगी।

शा० नै० आ०, १०

३ अगर किसी की बेवफाई या बेईमानी साबित हो जाय, तो उसे गोली से मारा जा सकता है, जो कि मेरा तरीका नही है। पर फिजूल की बेऐतबारी जहालत और बुजदिली की निशानी है।

प्रा० प्र० २, २६०

४ ईमानदारी से काम करने मे ही हमारी मुक्ति और हमारी सभी जरूरतो की पूर्ति भरी है।

प्रा० प्र० २, ३५५

५ वचन का पालन करो तो मन और कर्म से। मन से तो वचन पालन करने से जी चुराओ और कर्म से पालन करने का पुण्य प्राप्त करो, यह असभव बात है।

बा० प० ज०, २५४

६ जिसे अपने वचन का मूल्य नही, वह दो कौडी का है।

अ० झा०, ६८

७ अगर कोई जानबूझकर अपना वचन-भग करता है, तो बुरा करता है। ऐसा नही होना चाहिए। इसके लिए जहा तक हो सके, वहा तक मौन ही रखना चाहिए। कभी बेकार एक शब्द भी नही कहना चाहिए। अगर एक बार दिल की बात निकाल दी तो उसके मुताबिक काम करना चाहिए। हम ऐसा करेंगे, तभी हम एकवचनी बन सकते है।

प्रा० प्र० २, १६०

८ सब वचन पर कायम रहे, बोले तो तौलकर बोले, आवेश मे तो

कुछ कहना ही नही चाहिए।

प्रा० प्र० २, १६८

११—अनुशासन

१ प्रत्येक सग्राम मे ऐसे मनुष्यो की टोलिया चाहिए जो अनुशासन माने।

बा० आ०, ७२

२ बगैर नियम के एक भी काम नही बनता। नियम एक क्षण के लिए टूट जाय, तो सारा सूर्य-मडल अस्त-व्यस्त हो जायगा।

बा० आ०, २६५

३ अनुशासन विपत्ति की पाठशाला मे सीखा जाता है।

मे० स० आ०, ३२१

४ अनुशासन और सयम ही हमे पशुओ से अलग करते है।

विच०, ३८

५ जो मनुष्य अपने पर काबू नही रख सकता है, वह दूसरो पर कभी सच्चा काबू नही रख सकता।

बा० आ०, १४१

६ दूसरे का डाला अकुश गिरानेवाला होता है और अपना बनाया उठानेवाला।

गा० बा०, २५३

१२—गुण-अवगुण

१ इस जगत मे बिना दूषण के तो कोई भी नही है। हम उसे दूर करने का प्रयत्न ही कर सकते है।

बा० प० ज०, ५३-५४

२ जिसके अदर जीवमात्र की सेवा-वृत्ति की लगन पैदा होती है, उसमे दोष रह ही नही सकते।

बा० प० ज०, २३६

३ हम दूसरो के दोष न देखे, अपने ही देखे, इसीसे जीवन सुखी

होता है और हम स्वच्छ रहते है ।

वा० प० ज०, २४७

४ किसी बुराई को केवल इसलिए रहने का नियमानुमोदित अधिकार नही है कि वह पुरानी है ।

फा० पै०, ६८

५ गुण अवगुण को दूर कर सकता है, पर अवगुण अवगुण को क्या दूर कर सकता है ।

ए० च०, ३५

६ जब मनुष्य अपनेमे निर्दोष होता है तो कुछ देवता नही बन जाता । तब वह सिर्फ सच्चा आदमी बनता है ।

गा० वा०, ३७

७ पानी का स्वभाव नीचे जाने का है । इसी तरह दुर्गुण नीचे ले जाता है, इसलिए सहल होना चाहिए । सद्‌गुण ऊचे ले जाता है, इसलिए मुश्किल-सा लगता है ।

बा० आ०, २१३

८ अधा वह नही जिसकी आख फूट गई है; अधा वह है जो अपने दोप ढाकता है ।

बा० आ०, २८५

९ अपना दोप सौ-गुना बढाकर देखो ।

म० डा० ३, १५४

१० कई बार मनुष्य अपने दोषो को वर्णन करके अपना गुण-गान करता हे ।

म० डा० १८०, ४७

११ यह कहना कि इस ससार मे पूर्णता प्राप्त करना सभव नही, ईश्वर से इकार करने के बराबर है । हमारे लिए सर्वथा निर्दोप होना असभव नही हे ।

म० डा० १८०, १७

१२ हम सब जिसे दुप्ट मानते हो, उसे सजा देने का हमारा अधिकार नही । जो सचमुच दुप्ट होगा, उसे सजा देने के लिए

भगवान बैठा ही है ।

अ० भा०, १७७

१३ भगवान् बैठा हरएक आदमी को अपनी कमज़ोरियो का अनुमान लगाना चाहिए । जो आदमी अपनी कमजोरियो को जानते हुए भीवलवानो की नकल करता है, वह अवश्य ही असफल होता है ।

सि० गा०, १७८

१४ अगर हम सारी दुनिया के सामने यह जाहिर करे कि हमारा ही सब दोष है, दूसरे सब भले आदमी हैं, तो वह बुजदिली नही है । इससे हम गिरते नही है, बढते ही है । हम बहादुर बनते हैं ।

प्रा० प्र० १, ४४०

१३—नम्रता और विनयशीलता

१ सत्य आदि का माप हम अपने पास रख सकते है, परतु नम्रता का माप नही होता । स्वाभाविक नम्रता छिपी नही रहती ।

य० म०, १०४

२ सच्ची नम्रता तो हम से जीव-मात्र की सेवा के लिए सर्वार्पण की आशा रखती है ।

य० म०, १०६

३ हमारी नम्रता शून्यता तक जानी चाहिए ।

य० म०, १०५

४ सत्य के शोधक को रजकण से भी नम्र होना चाहिए । दुनिया धूल को पैरो-तले रौंदती है, परतु सत्य के शोधक को इतना नम्र बन जाना चाहिए कि धूल भी उसे कुचल सके । तभी, और तभी, उसे सत्य की झाकी मिलेगी ।

स० ई०, ३२

५ नम्रता के बिना सत्य अहकार पूर्ण दिखावा-मात्र होगा ।

स० ई०, ३६

६ सत्य-परायण मनुष्य परीक्षाओ से गुजर कर शुद्ध और नम्र बन जाता है ।

स० ई०, ३७

७. सेवामय जीवन मे नम्रता होनी ही चाहिए।

म० प्र०, १२९

८. आम का पेड ज्यो-ज्यो बढता है, त्यो-त्यो झुकता है। उसी तरह बलवान का बल ज्यो-ज्यो बढता जाता है, त्यो-त्यो वह नम्र होता जाता है और त्यो-ही-त्यो वह ईश्वर का डर अधिक रखता जाता है।

गां० बा०, ११३

९ विनय से तात्पर्य है विरोधी के प्रति भी मन मे आदर, सरल भाव, उसके हित की इच्छा और तदनुसार व्यवहार।

आ० क०, ३७९

१० भाषा मे शिष्टता और विनय तो कभी छोडनी ही नही चाहिए।

ए० च०, ४२

१४—मौन

१ सत्य के शोधक को चुप रहना चाहिए।

स० ई०, ५५

२ सत्य के पुजारी के लिए मौन उसके आध्यात्मिक अनुशासन का एक अग है।

स० ई०, ५५

३ प्रतिक्षण अनुभव लेता हू कि मौन सर्वोत्तम भाषण है। अगर बोलना ही चाहिए तो कम-से-कम बोलो। एक शब्द से चले तो दो नही।

बा० आ, २४१

४ जहा बोलने के बारे मे शका हो, वहा मौन रहना ही सत्यव्रती का कर्त्तव्य है।

गा० सा०, १६४

५ यदि सब लोग सारा दिन न सही, सुविधानुसार कुछ घटे या कुछ मिनिट भी मौन ले सके और अतर्मुख होकर आत्ममथन करे, तो कितने ही पापो से बच सकते हैं।

बि० कौ० आ०, २२

६ मौन सत्य के शोधक के लिए बडा सहायक होता है। मौन की

स्थिति मे आत्मा अपना मार्ग अधिक स्पष्ट रूप से देख पाती है और जो समझ मे नही आता या कुछ भ्रम मे डालनेवाला होता है, वह स्फटिक के समान स्पष्ट हो जाता है।

मो० मा०, ३२

७ सत्य के पुजारी को मौन का सेवन करना चाहिए। जाने-अनजाने भी मनुष्य बहुत बार अतिशयोक्ति करता है, अथवा जो कहने लायक हो उसे छिपाता है, अथवा उसे बदलकर कहता है। ऐसे सकटो से बचने के लिए भी सत्य के पुजारी का अल्पभाषी होना जरूरी है।

मो० मा०, ३२

८ मौन का अर्थ न बोलना, न इशारा करना, न देखना, न सुनना, न खाना, न पीना अर्थात एकात मे रहकर अतर्ध्यान होना। मौन के दिन ईश्वर का ध्यान होना चाहिए और मौन का हेतु अतर्ध्यान होना है।

म० डा० २, ८१

१५—एकता और स्वावलबन

१ बिखरी हुई पानी की बूदे यो ही सूख जाती है, लेकिन वे एक-दूसरे मे मिलकर महासागर बनाती है, जिनकी चौडी छाती पर बडे-बडे जहाज चलते है।

सर्वो०, १८५

२ सबसे बडी चीज यह है कि करोडो के एक साथ काम करने से जो शक्ति पैदा होती है, उसका सामना कोई शस्त्र-बल नही कर सकता।

प्रा० प्र० २, २००

३ स्वावलबन स्वतत्रता की बुनियाद है और परावलबन गुलामी की निशानी है।

वि० कौ० प्रा०, १६०

४ अपने पैरो पर खडे होने का अर्थ है न बाप की कमाई खाना, न ससुर की और न पति की। अपनी ताकत से जो टुकडा मिल जाय, उसी को खाकर रहना।

म० डा० २, २०३

५ जो चीज आदमी खुद पैदा न कर सके, उसके बिना काम चला

लेना चाहिए। इससे स्वावलवन बढेगा और वह उत्तरोत्तर प्रगति करेगा।

बि० कौ० आ०,१६०

१६—प्रायश्चित

१ प्रायश्चित का अर्थ है आत्मशुद्धि।

म० डा० १, २४१

२ जो मनुष्य अधिकारी के समुख स्वेच्छा से और निष्कपट भाव से अपना अपराध स्वीकार कर लेता है और फिर कभी वैसा अपराध न करने की प्रतिज्ञा करता है, वह शुद्धतम प्रायश्चित करता है।

आ० क०, २३

३ पापी मनुष्य चाहे जितना पाप करे, लेकिन अतिम समय मे अपना पाप कबूल करके प्रायश्चित करे तो ईश्वर उसे माफ कर देता है। ईश्वर की इस सृष्टि मे प्रत्येक मनुष्य का ही नही, जीव-जतु और पशु-पक्षियो तक का कल्याण हो, ऐसी भावना मन मे रखनी चाहिए, और ऐसा वल प्राप्त करने का एकमात्र उपाय सुबह-शाम ईश्वर का ध्यान करना है।

वि० कौ० आ०, १९३

४ अपना गुनाह हरएक को कबूल कर लेना चाहिए।

प्रा० प्र० २, २३९

५ गुनाह कबूल करने से वह हलका हो जाता है।

प्रा० प्र०२, २४०

१७—द्वेष

१ जो द्वेष से रहित है, उसे किसी तलवार की आवश्यकता नही है।

हि० स्व०, ८६

२ यदि हिसा, अर्थात घृणा, हम पर राज करती होती, तो हम वहुत पहले ही नष्ट होगए होते।

फा० पै०, ४०

३ घृणा को केवल प्रेम से जीता जा सकता है। प्रतिहिसा केवल

घृणा की सतह और गहराई को बढाती है ।

फा० पै० ८४

४ अपने भाइयो से घृणा करना, किसी जाति या वर्ग के लोगो को बुरा कहना, रोगी मन का चिह्न है और वह कोढ से भी बुरा है ।

प्रा० प्र० १, ४५८

१८—क्रोध

१ जब आदमी क्रोध मे होते है तब वे मूर्खता के बहुत-से काम करते है ।

हि० स्व०, ५४

२ बीमार के गुस्से पर भला कोई ध्यान देता है ! बीमार की चिढ तो हमेशा पी ही ली जाती है ।

बा० प० ज०,१०५

३ सब मे एक ही जीव-आत्मा है । इसलिए किसी अन्य पर क्रोध करना अपने ऊपर क्रोध करने के समान ही है ।

बा० प० ज०,२३६

४ गुस्सा किसी पर नही करना चाहिए, अपने खुद के ऊपर भी नही ।

बा० प० ज०, २४७

५ क्रोध-रहित और द्वेष-रहित कष्ट-सहन का सूर्य जब उगता है, तब उसके सामने कठोर-से-कठोर हृदय भी पिघल जाता है और घोर-से-घोर अज्ञान भी नष्ट हो जाता है ।

मो० मा०,४३

६ गुस्सा एक प्रकार का क्षणिक पागलपन है । जो लोग जानबूझ कर या बिना जाने इसके वश मे अपने को होने देते है, उन्ही को उनका नतीजा भुगतना पडता है ।

गा० डा०, ६०

७ क्रोध करना भी एक विकार ही है । मन मे अनेक प्रकार की इच्छाए होते रहना भी विकार है ।

म० डा०२, १७

८ क्रोध के प्रति क्रोध नही, अवगुण के प्रति अवगुण नही । क्रोध के

सामने शाति, अवगुण के वदले गुण, गाली के वदले प्रेम और वुराई के वदले भलाई–– यह धर्म है ।

म० डा० ७, १७१

९ मन मे क्रोध भरा हो और मुह से प्रार्थना की जाय, तो उससे कुछ लाभ नही होता ।

वि० कौ० श्रा०, १२२

१० जिसमे क्रोध है, उसमे जहर तो है ही ।

वा० प० प्रे०, १७१

११ हमारे दिल मे ज्वालामुखी दहक रहा हो तब भी ठडा रहने मे हमारी अहिसा की परीक्षा है ।

प्रा० प्र० १, २८

१२ हमारे चारो ओर अगार जलते रहे तो भी हमे शात ही रहना है और चित्त स्थिर रखते हुए हमे भी इस अगार मे जलना है ।

प्रा० प्र० १, १०१

१३ गुस्सा करने का मतलव है थोडा पागलपन होना ।

प्रा० प्र० १, १२६

१४ गुस्सा करना पागलपन है । हमे अपनी वुद्धि शात रखकर सव वातो को समझना चाहिए ।

प्रा० प्र० १, १४६

१५ क्रोध से काम विगडते है ।

प्रा० प्र० १, २८६

१९––अहकार

१ शरीर की स्थिति अहकार को लेकर है । शरीर का आत्यतिक नाश मोक्ष है ।

वा० प० ज०, २७

२ जिसके अहकार का सर्वथा नाश हुआ है, वह साक्षात सत्य वन जाता है । उसे ब्रह्म कहने मे भी कोई वाधा नही हो सकती ।

वा० प० ज०, २७

३ मनुष्य मे जव एक तरह का घमड आ जाता हे तव वह अपने अवगुण नही देख सकता। गर्व मनुष्य-जाति का दुश्मन है।

ए० च०, १५१

४ शून्यवत होने का अर्थ हे, 'मैं करता हू' की वृत्ति छोडना। इसमे निराशावाद के लिए स्थान ही नही हे।

वा० प० स०, ८८

५ जवतक हम अपना अहकार भूलकर शून्यता की स्थिति प्राप्त नही करते, तवतक हमारे लिए अपने दोपो को जीतना सभव नही है। ईश्वर पूर्ण आत्म-समर्पण के विना सतुष्ट नही होता। वास्तविक स्वतत्रता का इतना मूल्य वह अवश्य चाहता हे।

मे० स० भा०, ६९

६ अहकार का वीज शून्यता अनुभव करने से ही जाता है। एक भी क्षण कोई गहरा विचार करे तो उसे अपनी अति तुच्छता मालूम हुए विना रह नही सकती।

म० डा० ?, १८

२०—गुप्तता

१ मै गुप्तता को पाप मानने लगा हू।

स० ई०, १४१

२ अहिसा भय और इसलिए गुप्तता से घृणा करती है।

रच० का०, १७

३ कितनी भी वडी कोई गुप्त सस्था कोई अच्छाई नही कर सकी। गुप्तता तुम्हारे आसपास बचाव की दीवार वनाने का उद्देश्य रखती है।

फा० पै०, ८६

४ छिपाव ही पाप है।

गा० ना० स०, ४६

५ मलिनता ही वह चीज है, जो गुप्तता और अधकार खोजती है।

मो० मा०, ५३

६ आप जो कुछ भी करे, उसमे अपने प्रति और दुनिया के प्रति सच्चे और प्रामाणिक रहे । अपने विचारो को कभी न छिपाय । अगर अपने विचार प्रकट करने मे आपको शरम मालूम हो, तो उन्हे मन मे लाने मे तो और अधिक शरम मालूम होनी चाहिए ।

मो० मा०, ५३

२१—बदला

१. बदला (प्रतिहिसा) भी दुर्बलता है ।

फा० पै०, १२

२ कत्ल का बदला कत्ल से या मुआवजे से कभी नही लिया जा सकता है ।

फा० पै०, २८

३ वैर का बदला हिंसा से न ले । सपने मे भी किसी का बुरा न चाहे ।

वि० कौ० आ०, १३७

४ बदला लेने की बात मीठी तो लगती है, लेकिन ईश्वर कहता है, बदला लेने का काम मेरा है ।

प्रा० प्र० १, ३४

५ हमारा काम नही है कि अगर किसी ने हमारे साथ बुरा किया हो तो हम उसका बुरा करके बदला ले । बुरे का बदला हम भला करके ले, यह सच्ची इसानियत है ।

प्रा० प्र० १, ३०१

६ अगर एक आदमी पाप करता है तो क्या हम भी करे ? सोचेगे तो मालूम होगा कि यह बुरा है। एक बुराई से दूसरी बुराई पैदा होती है ।

प्रा० प्र० २, ११२

२२—अतिशयोक्ति

१ अतिशयोक्ति भी असत्य है ।

गा० वा०, २६८

२ कोई भी बात बढा-चढाकर कहनी ही नही चाहिए । हमेशा अपनी

भूलो को पहाड-सी बतलाने और पराये की भूलो को राई-जैसी मानने-वाला ही आगे बढ सकता है। खुदा के दरवाजे तक पहुचने की यह एक बडी आसान तरकीब है।

अ० भा०, १६०

३ बुरी बात को भी ज्यादा बढाकर कहने से हम अपना मामला कम-जोर कर लेते है।

प्रा० प्र० २, २५७

४ कोई भी चीज बढाकर न बतावे। जब हम अपनी गलती बढाकर और दूसरो की कम करके कहेगे, तब यह माना जायगा कि हम आत्मशुद्धि के नियम का पालन करते हैं।

प्रा० प्र० २, ३३३

२३—कष्ट-सहिष्णुता

१ आनद दूसरो को कष्ट देने से प्राप्त नही होता, बल्कि स्वेच्छा से स्वय कष्ट सहने मे आता है।

सि० गा०, १७

२ खुशी से सहन किया हुआ कष्ट कष्ट नही रहता, वह सदा रहने-वाले आनद मे बदल जाता है।

सि० गा०, १७

३ क्रोधहीन तथा द्वेषरहित कष्ट के उदीयमान सूर्य के सामने कठोर-तम हृदय और बडे-से-बडा अज्ञान नष्ट हो जाता है।

सि० गा०, १८

४ कठिनाइया सामना करने या सहन करने को होती है, न कि हमे कायर बनाने के लिए।

खा०, १४६

५ विपरीत परिस्थिति पर विजय प्राप्त करना मनुष्य का विशेषा-धिकार है।

खा०, ३२३

६ प्रकृति ने आदमी के अत करण मे ऐसी किसी भी कठिनाई या कष्ट का सामना करने की योग्यता दी है जो कि उसके सामने बिना भडकाये आ जाय।

फा० पै०, १७

२४—प्रयत्न–परिश्रम

१ प्रयत्न करने का सपूर्ण क्षेत्र हमारे पास है, परिणाम का क्षेत्र ईश्वर ने अपने हाथ मे रखा है।

वा० प० ज०, ३०

२ प्रयत्नशील की दुर्गति नही है, ऐसा भगवान का आश्वासन है।

वा० प० ज०, ५४

३ प्रयत्न करते-करते मरने से अधिक शान की वात और क्या हो सकती है।

ऐ० वा०, ७६

४ प्रयत्न करने का एक भी मौका न छोडना हमारा कर्तव्य है। परिणाम लाना या चाहना, प्रभु के अधीन है। माता बालक को दूध पिलाते समय परिणाम का विचार नही करती, उसका परिणाम तो आता ही है।

गा० सा०, १६०

५ सतुष्टि प्रयत्न मे होती है, न कि प्राप्ति मे। पूर्ण प्रयत्न ही पूर्ण विजय है।

सि० गा०, २८

६ लडने मे आनद है। प्रयत्न मे और उसके कष्ट मे आनद है, न कि स्वय विजय मे, क्योकि ऐसे प्रयत्न का मतलव विजय ही है।

सि० गा०, २२५

७ हम प्रयत्न के मालिक है, फल के नही। मेहनत करके सपूर्ण सतोप माने, उसमे कभी हार न माने।

वा० प० म०, ३५

८ वूद-वूद करके सरोवर भरता हे और ककर-ककर करके पाल वधती हे। उद्यम के आगे कुछ भी असभव नही।

वा० प० म०, ६२

९ जागे वही से सवेरा, भूले वही से फिर गिने।

वा० प० म०, ७१

१० अभ्यासी के लिए तो असफलता अविक प्रयत्न का मुअवसर होती है।

वा० प० म०,७९

११ प्रयोग-मात्र मे ठोकर-ठेस तो यानी ही होती है। जिसमे सोलहो आने सफलता है, वह प्रयोग नही, वह तो सर्वज्ञ का स्वभाव कहा जायगा।

म० ई०, ४३-४४

१२ जिनके हृदयो मे ईश्वर निवास करता है, उनके लिए परिश्रम करना ही प्रार्थना है। उनका जीवन एक लगातार प्रार्थना या पूजा का काम है।

वि०,७५

१३ विना परिश्रम यानी वगैर तप, कुछ भी हो नही सकता है तो आत्मशोध ही कैसे हो सकता है ?

वा० आ०, ११६

१४ हार शब्द हमारे कोश मे होना ही नही चाहिए।

प्रा० प्र०७, १८५-८६

२५—बहादुरी शहादत

१ कोई पीछे से छुरा भोक दे, तो उसमे क्या वहादुरी है।

प्रा० प्र०१, १३

२ जो मरने को तैयार हो जाते हे, वहादुर वनते है, उनसे मौत हट जाती है।

प्रा० प्र० १, ३७

३ शहादत कभी वेकार नही जाती।

प्रा० प्र० १, ५८

४ मारकर मरने मे कोई वहादुरी नही है। वह झूठी है। न मारकर मरनेवाला ही सच्चा शहीद है।

प्रा० प्र० १, ५८

५ वहादुरी तलवार मे नही है।

प्रा० प्र० १, १४५

६ निहत्थे रहकर जो बहादुरी दिखाई जाय वही असली बहादुरी है।

प्रा० प्र० १, १८६

७ जो आदमी खुशी मे मर जाता है, वह मारनेवाले से कही ज्यादा बहादुर होता है।

प्रा० प्र० १, १६३

८ हमको बहादुर होना चाहिए। किसीसे न डरे, सिर्फ भगवान से डरे।

प्रा० प्र० १, २४८

९ अहिंसा बहादुरी की पराकाष्ठा है।

प्रा० प्र० १, २०१

२६—कर्तव्य और अधिकार

१ अधिकारो का सच्चा स्रोत कर्तव्य है। अगर हम सब अपने कर्तव्य पूरे करे तो अधिकारो को ढूढने कही दूर नही जाना पडेगा।

स० ई०, १४

२ कर्म कर्तव्य है, फल अधिकार।

म० ई०, १४१

३ जहा हरएक व्यक्ति अधिकार चाहता है वहा कौन किनको अधिकार देगा ?

हिं० स्व०, ७२

४ जीवन कर्तव्य है, न कि अधिकारो तथा विशेषाधिकारो की पोटली।

रि० स०, ४८

५ मैं विश्वास दिलाता हू कि जैसे शिशिर के बाद वसत आता है, वैसे ही कर्तव्यो के बाद अधिकार आप चले आयगे।

ए० दा०, १०७

६ अगर सब आदमी कर्तव्यो को छोडकर अधिकारो पर जोर दें, तो पूर्ण उपद्रव और गडबड हो जायगी।

फा० पै०, ६५

७ जो कर्तव्य है, उसके पालन मे किसी को दुख हो तो वह दुख

देना ही पडेगा ।

म० डा० २, २७३

८ जो कर्तव्य-कर्म को समझता है और उसपर आचरण करता है, उसकी तृष्णा तो मिटती ही है । जिसकी तृष्णा नही मिटी, उसे कर्तव्य-कर्म का भान ही नही है । तृष्णा का पर्वत तो इतना ऊंचा है कि उसे कोई पार कर ही नही सकता । उसे धराशायी किये विना अन्य कोई उपाय नही है । तृष्णा छोडना, अर्थात कर्तव्य का भान होना ।

डा० प० प्रे०, २५

९ जो व्यक्ति अपने कर्तव्य का उचित पालन करता है, उसे अधिकार अपने-आप मिल जाते है ।

मे० स० भा०, २१

१० अधिकार प्राप्त करने के लिए हिंसा का आश्रय लेना शायद आसान मालूम हो, किंतु यह रास्ता अत मे काटोवाला सिद्ध होता है ।

मे० स० भा, ४३

११ अगर हर आदमी हको पर जोर देने के वजाय अपना फर्ज अदा करे, तो मनुष्य-जाति मे जल्दी ही व्यवस्था और अपनत्व का राज्य कायम हो जाय ।

मे० स० भा०, ४८

१२ पूरी तरह अदा किये गए फर्ज से जो हक नही मिलते, वे प्राप्त करने और रखने लायक नही है ।

मे० स० भा०, ४९

१३ जो शक्ति कुदरती तौर पर फर्ज को अदा करने से पैदा होती है, वह सत्याग्रह से पैदा होनेवाली और किसी से न जीती जा सकनेवाली अहिसक शक्ति होती है ।

मे० स० भा०, ५१

१४ आदमी अपना कर्तव्य भूलकर हैवान वन जाय, यह दुख की ही वात है ।

प्रा० प्र० १, १९५

१५ मौलिक हक वही तो है, जिनको अमल मे लाने से लानेवाले

का भी भला हो और उसके पीछे सारे जगत का। आज हरआदमी यही सोचता है कि उसके हक क्या हैं। परतु यदि आदमी वचपन से ही धर्म-पालन करना सीख जाय और अपने धर्म-ग्रथो का अध्ययन करे तो उसको अपना हक भी साथ-साथ मिलता चला जाता है।

प्रा० प्र० १, २०२

१६ जो आदमी अपना फर्ज भूलकर सिर्फ हक की ही हिफाजत करना चाहता है, वह इस वात को नही जानता कि जो हक अपने कर्त्तव्य-पालन से पैदा नही होता, उसकी कोई हिफाजत कर नही सकता।

प्रा० प्र० १, २०५

१७ धर्म के साथ कर्म करने से हक पैदा होता है।

प्रा० प्र० १, २१६

१८ धर्म (कर्त्तव्य) अच्छी चीज है, हक अच्छी चीज नही।

प्रा० प्र० १, २१२

१९ सब को सिर्फ अपना फर्ज अदा करना चाहिए और नतीजे को भगवान के हाथ मे छोड देना चाहिए। भगवान की मर्जी के बगैर कुछ भी नही होता।

प्रा० प्र० २, ८०

२० हिसा से हम हक ले नही सकते। मैं तो कहूगा कि हिंसा से कुछ मिल ही नही सकता। लगता तो है कि मिल सकता है, लेकिन कैसे ?

प्रा० प्र० २, १०६

२१ हक तो तभी होता है, जव मजदूरी करने का इकरार कर दिया और वह दिल से किया, अर्थात मनसे, वचनसे, कर्म से किया, लेकिन अगर दिल से काम नही करता हू, सरदार (मालिक, काम करानेवाला) का विगाडता हू, सरदार देखता नही है, इसलिए धोखा दू, तो यह पाप है।

प्रा० प्र० २, ११०

२२ सच्चा हक तो वही है जो छीना न जा सके। वह तो धर्म के अमल से पैदा होता है।

प्रा० प्र० २, २७३

२७—वर्तमान का महत्त्व

१ यह विश्वास करना कि जो बात इतिहास मे नही हुई है, वह बिल्कुल न होगी, आदमी की प्रतिष्ठा मे अविश्वास की दलील देना है।

हि० स्व०, ६५

२ आओ, हम दूरवर्ती दृश्य की बात न सोचे, हम वर्तमान का ही उपयोग करे।

ली० बा० फी०, १७

३ समय पर जो बात सूझती है, वही शोभा देती है।

बा० प० स०, १०६

२८—विकास-प्रगति

१ विकास सदा प्रयोगात्मक होता है। गलतिया करने और उनको ठीक करने से ही सब प्रकार की प्रगति होती है।

स० ई०, १३८

२ कोई भलाई ईश्वर के हाथो घडी-घडाई नही आती, परतु हमको ही बार-बार प्रयोग करके और बार-बार असफलताए सहकर पैदा करनी होती है।

स० ई०, १३८

३ भूल करने का अधिकार, जिसका अर्थ प्रयोग करने की स्वतत्रता है, सभी प्रकार की प्रगति की सनातन शर्त है।

स० ई०, १३८

४ मनुष्य के विकास के लिए जीवन जितना जरूरी है, उतनी ही मृत्यु जरूरी है।

स० ई०, १३८

५ विश्व मे वस्तु-मात्र को जो विकासक्रम लागू होता है, उसी विकास-क्रम के पात्र धार्मिक विचार भी है।

य० प्र०, ५६

६ अवसर मिलने पर सभी आदमी आध्यात्मिक विकास कर सकते है।

सर्वो०, १६६

७ परिवर्तन प्रगति की एक शर्त है। जब मन किसी चीज़ को गलत मानकर उसके खिलाफ विद्रोह करता है, तब कोई ईमानदार आदमी यात्रिक सुसगतता का पालन नही कर सकता।

मो० मा०, २९

८ अपनी अपूर्णता महसूस करना प्रगति का पहला कदम है।

गा० वा०, २६९

९ आत्मा की गति बढती ही रहती है।

प्रा० प्र० २, १९

खड ४ : समाज

१—व्यक्ति

१ किसी भी व्यक्ति को अपने लिए जीने का हक नही । कोई अपनी शक्ति अपने लिए ही इस्तेमाल नही कर सकता । वह अपनी शक्ति का उपयोग समाज के लिए पूरी तरह कर सकता है ।

स० ई०, १७०

२ समाज को उसके अगभूत व्यक्तियो से अलग नही किया जा सकता ।

वि० कौ० आ०, १५३

३ व्यक्तिगत स्वतत्रता को प्रकट होने का पूरा अवकाश केवल शुद्ध अहिसा पर आधारित शासन मे ही मिल सकता है ।

मे० स० भा०, १२

४ वैयक्तिक आचरण और राजनैतिक आचरण मे कोई विरोध नही है । सदाचार का नियम दोनो पर लागू होता है ।

मे० स० भा०, १४

५ अगर व्यक्ति का महत्त्व न रहे तो समाज मे भी क्या सत्त्व रह जायगा ?

मे० स० भा०, २३

६ वैयक्तिक स्वतत्रता को अस्वीकार करके कोई सभ्य समाज नही बनाया जा सकता ।

मे० स० भा०, २४

२—मानव-जाति

१ सजातीय और विजातीय की भावनाए हमारे मन की तरगे है । वास्तव मे हम सब एक परिवार ही है ।

आ० क०, २६९

२ ईश्वर के सामने सब आदमी समान है। किसी आदमी को इसलिए तिरस्कार से देखना कि वह सहधर्मी नही है, ईश्वर और मनुष्य के सामने पाप है।

दि० डा०, २१६

३ मानवता की मागे किसी देरी को सहन नहीं करती।

दि० टा०, ३८६

३—समाज

१ हम यह भी न भूल जाय कि पशु-सृष्टि और मनुष्य मे यही भेद है कि मनुष्य समाज का लिहाज रखता है।

खा०, ६४

२ कोई अहकारी मनुष्य ही सबसे स्वाधीन और अपने-आप मे समाया हुआ रहने का दावा कर सकता है।

खा०, ६४

३ अहिंसा सामाजिक धर्म है।

गे० स०, ३५

४ मामूली इन्सान की कसौटी तो समाज मे ही हो सकती है।

स० ई०, १३

५ सपूर्ण समाज के भले के लिए स्वेच्छापूर्वक सामाजिक मर्यादाओ को स्वीकार करने मे व्यक्ति और समाज, जिसका व्यक्ति एक सदस्य है, दोनो की उन्नति होती है और दोनो का जीवन समृद्ध बनता है।

सी० सा०, १०७

६ मनुष्य की शांति की कसौटी समाज मे ही हो सकती है, हिमालय की टोच (चोटी) पर नहीं।

का आदर्श है, और होना चाहिए।

मो० मा०, ६४

९ मनुष्य का सामाजिक परावलंबन उसे अपनी श्रद्धा की परीक्षा करने तथा यथार्थता की कसौटी पर खरा सिद्ध होने की क्षमता प्रदान करता है।

मो० मा०, ६४

१० समाज पर मनुष्य की निर्भरता उसे नम्रता का पाठ सिखाती है।

मो० मा०, ६४

११ इसान साथ-ही-साथ रहने के लिए पैदा हुआ है।

प्रा० प्र० १, १३१

१२ इसान दूसरो पर निर्भर रहकर ही अपने-आप को इसान बनाता है।

प्रा० प्र० १, २०५

१३ किसी अच्छे संगठित समाज मे हमेशा पानी की कमी और अनाज की फसल बिगड़ने से होनेवाली आपत्ति से बचने का कामयाब इलाज पहले से ही सोच रखा जाता है।

प्रा० प्र० १, ३८२

१४ समाज क्या है ? आप सबसे समाज बना है। हम उसमे है तो समाज बनता है। समाज हमको नही बनाता है। हम उसको बनाते हैं।

प्रा० प्र० २, ३०३

४—स्त्री-पुरुष

१ मैने स्त्री को सदा सहनशीलता की मूर्ति के रूप मे देखा है।

आ० क०, २०

२ स्त्री अहिसा का अवतार है। अहिसा का अर्थ है असीम प्रेम और असीम प्रेम का अर्थ है असीम कष्ट सहने की शक्ति। यह शक्ति पुरुष की जननी, स्त्री के सिवा अधिक-से-अधिक मात्रा मे और कौन दिखा सकता है।

सर्वो०, २०

३ जहा मूल रूप मे स्त्री और पुरुष एक है, वहा यह भी उतना ही सच है कि शरीर-रचना की दृष्टि से दोनो मे गहरा अतर है। इसलिए दोनो का काम भी जुदा-जुदा ही रहेगा।

सर्वो०, ६६

४ मै स्त्री-पुरुष की समानता मे विश्वास रखता हू। इसलिए स्त्रियो के लिए उन्ही अधिकारो की कल्पना कर सकता हू, जो पुरुष को प्राप्त है।

सर्वो०, ७२

५ जहा अहिसक वातावरण है, जहा अहिसा की सतत शिक्षा है, वहा स्त्री अपने को आश्रित, कमजोर या नि सहाय नही समझेगी। जब वह शुद्ध होती है तब लाचार हो ही नही सकती। उसकी शुद्धता ही उसका बल, उसका कवच है।

सर्वो०, १३२

६ जब किसी स्त्री पर हमला होता है तब वह हिसा-अहिसा का विचार करने को नही ठहर सकती। उस समय आत्म-रक्षा ही उसका मुख्य कर्त्तव्य है। अपने शील की रक्षा करने के लिए जो भी उपाय या तरीका सूझे, उसे अपनाने की उसको स्वतंत्रता है।

सर्वो०, १३३

७ स्त्री का दमन अहिसा से इकार करना है।

सर्वो०, १५५

८ ससार भर की सारी स्त्रिया बहने है, माताए है, लडकिया है, यह विचार ही मनुष्य को एकदम ऊचा उठानेवाला है, बधन से मुक्त करनेवाला है।

द० म०, [illegible]

९ स्त्री-पुरुष मे चारित्र्य की दृष्टि से स्त्री का आसन ज्यादा ऊचा है क्योकि आज भी वह त्याग, मूक तपस्या, नम्रता, श्रद्धा और ज्ञान की प्रतीक है।

स्त्रि० म०, ६

१० स्त्री को अवला कहना उसकी मान-हानि करना है।

स्त्रि०, स०, ६

११ अगर अहिसा हमारे जीवन का धर्म है तो भविष्य स्त्री के हाथ मे है।

स्त्रि० स०, ६

१२ स्त्री-पुरुष दो अलग-अलग हस्तिया नही है, वल्कि एक ही हस्ती के दो हिस्से है।

स्त्रि० स०, ३१

१३ शाति और शालीनतापूर्ण तपस्या नारी-जाति का स्वभाव-सिद्ध लक्ष्य है।

स्त्रि० स०, ३०

१४ स्त्री त्याग की मूर्ति है। जव वह कोई चीज शुद्ध और सही भावना से करती है तो पहाडो को हिला देती है।

स्त्रि० स०, ३१

१५ मैने स्त्री को सेवा और त्याग की भावना का अवतार मानकर उसकी पूजा की है।

स्त्रि० स०, ३६

१६ स्त्री के हृदय मे इतनी दया भरी है कि वह दुख देखते ही पिघल जाता है।

स्त्रि० स०, ३६

१७ दिल को कारगर अपील स्त्री से ज्यादा दूसरा कौन कर सकता है ?

स्त्रि० स०, ४४

१८ कोई इसान कितना ही लपट क्यो न हो, स्त्री की उज्ज्वल पवित्रता की आग के सामने उसे सिर नीचा करना ही पडेगा।

स्त्रि० स०, ६७

१९ सतीत्व पवित्रता की पराकाष्ठा है।

स्त्रि० स०, ६५

२० आखिरकार जान पर खेल जाने की तैयारी ही हर हालत मे

औरत की इज्जत बचा सकती है।

स्त्रि० स०, १००

२१ जो स्त्री मृत्यु से नही डरती, उसकी बेइज्जती करने की हिम्मत कोई नही कर सकता।

स्त्रि० स०, १००

२२ साधु पति अपनी पत्नी के प्रति बेवफा होता ही नही।

बा० प० ज०, ३०

२३ यदि इस बुद्धि-प्रधान युग मे स्त्री धर्म की रक्षा करना चाहती है तो उसे दरिद्रनारायण की सेवा करनी होगी, उसका शिक्षण लेना होगा।

बा० प० ज०, १०७

२४ पति-पत्नी एक-दूसरे के गुण-दोषो के बराबर के भागीदार है।

डि० ड्र०, ७९

२५ स्त्री आत्म-बलिदान की मूर्ति है। लेकिन दुर्भाग्य से आज वह अपने इस जबरदस्त लाभ को नही समझती, जो पुरुष को प्राप्त नही है।

मो० मा०, १००

२६ पुरुष ने स्त्री को अपनी कठपुतली मान लिया है। स्त्री ने उसकी कठपुतली बनना सीख लिया है, और अत मे अनुभव से यह पाया है कि ऐसा बनने मे ही सुविधा और आराम है।

मो० मा०, १०१

२७ स्त्रिया, जीवन मे जो कुछ पवित्र और धार्मिक है, उसकी विशेष सरक्षिकाए है। स्वभाव से रक्षण-शील होने के कारण जिस प्रकार वे अधविश्वास-पूर्ण आदतो को धीरे-धीरे छोडती हे, उसी प्रकार जीवन मे जो कुछ पवित्र और उदात्त है, उसे भी वे जल्दी नही छोडती।

मो० मा०, १०१

२८ जो निडर स्त्री यह जानती है कि उसकी पवित्रता उसकी मजबूत ढाल है, उसकी आबरू कभी लूटी नही जा सकती।

मो० मा०, १०४

२९ स्त्रियो के प्रति पुरुषो की दृष्टि माता-जैसी मीठी हो जायगी, तभी हमारी भव्य सस्कृति स्थायी बन सकेगी ।

ए० च०, ८१

३० जिन देशो मे स्त्रियो को सम्मान प्राप्त होता है, वे देश गौरवान्वित माने जाते है ।

अ० भा०, १०

३१ ज्यो ही कोई स्त्री अपना विचार और जो लोग उससे गरीब और अभागे है उनका विचार अधिक करने लगती है, त्यो ही वह दया की देवी बन जाती है ।

वि०, १७६

३२ स्त्री पर कोई राक्षस बलात्कार करने आये तो वह मौका आत्महत्या का है, बशर्तेकि दूसरा कोई योग्य उपाय न हो ।

म० डा० १, ४७

३३ पुरुष की नकल से आज स्त्रिया न तो पूरी तरह उनकी नकल कर सकती है और न प्रकृति ने उन्हे जो देन दी है, उसका ही विकास कर सकती है ।

बि० कौ० आ०, १५५

३४ स्त्रियो मे ईश्वर ने ममतापूर्ण हृदय रख दिया है, इसका उन्हे सदुपयोग करना चाहिए । यह शक्ति मूक होने के कारण अधिक कारगर है ।

बि० कौ० आ०, १५५

३५ स्त्रिया अपने प्रति हुए दुर्व्यवहार को भूल जाने के लिए हमेशा तैयार रहती है । इस गुण से स्त्री-जाति सुशोभित हुई है, परतु स्त्री के इस गुण का पुरुष-जाति ने खूब दुरुपयोग किया है ।

बा० प० म०, ११८

३६ बहनो का सच्चा शृगार तो स्वच्छ और पवित्र हृदय ही है । और वह शरीर के किसी भी कीमती आभूषण से कई गुना अधिक मूल्यवान है ।

बि० कौ० आ०, ३२

३७ शाति की स्थापना मे स्त्रिया बहुत महत्त्वपूर्ण भाग ले सकती हैं। स्त्रियो को आजकल के वैज्ञानिक प्रवाह मे न बहकर अहिसा के विज्ञान मे बहना चाहिए, क्योकि स्त्रियो का स्वभाव कुदरती तौर पर क्षमा करने का है।

वि० कौ० आ०, १५५

३८ जिसे कुमारी रहने की इच्छा हो उसे वीरागना बनना चाहिए। उसे प्रफुल्लित रहना चाहिए।

बा० प० मी०, ४४

३९ घर की सभाल रखना भी देश-सेवा है।

ए० च०, ६७

४० कोई लडकी को ऐसा मानकर बैठे कि वह हमेशा के लिए अबला है, तो मै कहता हू कि जगत मे कोई अबला है ही नही, सब सबला है। जिनके दिल मे अपने धर्म की चोट पडी है, वे सब सबल है, वे दुर्बल नही है।

प्रा० प्र० १, ३६२

४१ भाइयो को चाहिए कि बहनो को पहले जगह देना सीखे। जिस देश मे औरतो की इज्जत नही, वह सभ्य नही। दोनो को अपनी मर्यादा सीखनी चाहिए।

प्रा० प्र० २, २५८

५—वर्ण-व्यवस्था

१ वर्ण का अर्थ है कर्तव्य—धर्म।

म० डा० ३, १६

२ खाने-पीने और विवाह के साथ वर्ण का कोई भी सबध नही है।

म० डा० २, २४०

३ वर्ण-व्यवस्था मे शक्ति का दुर्व्यय रोकने का हेतु है।

म० डा० ३, १६

४ कोई भी मनुष्य अपने को दूसरे से ऊचा मानता है, तो वह ईश्वर और मनुष्य दोनो के सामने पाप करता है। इस तरह जात-पात, जिस हद तक, दरजे का फर्क जाहिर करता है, उस हद तक वह

वुरी चीज है ।

मे० स० मा०, २६३

५ जो ब्राह्मण आदर से अभिमानी बनेगा या अपने को ऊचा मानेगा, वह उसी क्षण से ब्राह्मण नही रहेगा ।

स० ई०, १०

६ जिस धर्म का आधार ऊच-नीच की दरजे-वार व्यवस्था है, विनाश उसके भाग्य मे लिखा है ।

रि० श्र०, ४८

६—विवाह

१ मैं विवाह को एक पवित्र सस्था मानता हूं ।

सर्वो०, ६८

२ सामान्य नियम के तौर पर मैं जीवन-भर एक पुरुप के लिए एक पत्नी के और एक स्त्री के लिए एक पति के पक्ष मे हू ।

सर्वो०, ७०

३ एकपत्नी-व्रत का पालन पति का कर्तव्य है ।

आ० क०, ८

४ पत्नी पति की दासी नही, उसकी सहचरी है, सहधर्मिणी है । दोनो एक-दूसरे के दुख-सुख के साझेदार है ।

आ० क०, २०

५ विवाहित होते हुए भी ब्रह्मचर्य का पालन किया जाय, तो परिवार की सेवा समाज-सेवा की विरोधी न वने ।

आ० क०, २७६

६ पति के पापो मे शरीक होना पत्नी का धर्म नही है ।

स्त्रि० स०, ८४

७ विवाहित जीवन वैसी ही साधनावस्था है, जैसी कोई दूसरी ।

स्त्रि० स०, ८४

८ विवाह का उद्देश्य इस लोक और परलोक दोनो मे एक-दूसरे का कल्याण करना है ।

स्त्रि० स०, ८४

९ विवाह धार्मिक विधि है। वर-कन्या के लिए एक नया जन्म है।

वा० प० ज०, २०६

१० विवाह करने का अर्थ है कि स्त्री और पुरुष साथ मिलकर ससार का जो जीवन-चक्र चल रहा है, उसे जारी रखने मे, अर्थात ससार के दुख दूर करने मे सहायक हो।

प० च०, ६५-६६

११ थोडे ही लोग औरत और मर्द के पवित्र रिश्ते का स्वाद लेने के लिए, ईश्वर को पहचानने के लिए, शादी करते है।

गा० वा०, १२१

१२ आज हम जिसे विवाह कहते है, वह विवाह नही, उसका आडवर है। जिसे हम भोग कहते है, वह भ्रष्टाचार है।

गा० वा०, १२१

१३ विवाह जीवन की स्वाभाविक वस्तु है और उसे किसी भी अर्थ मे पतन-कारी या निदनीय समझना विल्कुल गलत है। आदर्श यह है कि विवाह को धार्मिक सस्कार माना जाय और, इसलिए, विवाहित स्थिति मे आत्म-सयम का जीवन विताया जाय।

मो० मा०, ९७

१४ विवाह का हेतु पति-पत्नी के हृदयो से गदे काम-विकारो को मिटाकर उन्हे शुद्ध वनाना और दोनो को ईश्वर के अधिक समीप ले जाना है। पति और पत्नी के वीच काम-विकार-रहित प्रेम का होना असभव नही है।

मो० मा०, ९८

१५ विवाह जिस आदर्श तक पहुंचाने के लक्ष्य सामने रखता है, वह है शरीरो के सयोग द्वारा आत्मा का सयोग साधना। विवाह जिस मानव-प्रेम को मूर्त्त रूप प्रदान करता है, उसे दिव्य प्रेम अथवा विश्व-प्रेम की दिशा मे आगे वढने की सीढी वन जाना चाहिए।

मो० मा०, १०६

१६ स्त्री-पुरुष के, पति-पत्नी के, सासारिक जीवन की जड़ में भोग है। हिंदू धर्म ने उसमे त्याग पैदा करने की कोशिश की है, या यो कहें

कि सव धर्मो ने की हे । पति व्रह्मा-विष्णु-महेश है तो पत्नी भी वही है । पत्नी दासी नही, वरावर के हकोवाली मित्र है, सहचरी है। दोनो एक-दूसरे के गुरु हैं ।

म० डा०१, २४३

१७ गृहस्थाश्रम भोग के लिए नही, वलिक धर्म के लिए वना है ।

म० ई०, ३

१८ वर्णाश्रम मे अतर्जातीय विवाह या खानपान की न कोई मनाही थी और न होनी चाहिए ।

सर्वो०, ६७

७—माता-पिता

१ मातृत्व का धर्म ऐसा है, जिसे अधिकाग स्त्रिया सदा ही धारण करती रहेगी ।

स्त्रि० स०, ६

२ आदर्श माता होना कोई आसान काम नही हे ।

स्त्रि० स०, ६

३ जो मा समझदार, तदुरुस्त, अच्छी तरह पाले-पोसे वच्चे देश को देती है, वह जरूर देश की सेवा करती है ।

स्त्रि०स०, १३

४ मा के गुणो का अनुकरण हो सकता हे, अवगुणो का थोडे ही हो सकता है ।

म० डा०२, ५

५ माता का धर्म वच्चो की त्याग-वृत्ति को प्रोत्साहन देने का है ।

म० डा० २, ५६

६ सच्चा पिता अपने से अधिक चरित्रवान पुत्र को जन्म देता हे । सच्चा पुत्र वह है, जो पिता के किये हुए मे वृद्धि करे ।

म० डा० १न०, ४४

७ वच्चो का पालन-पोषण करना एक वडी कला है । इसमे माता-पिता को भारी व्रतो का पालन करना पडता है ।

म० डा० १न०, २४८

८ वाप का धर्म प्रत्येक वालक के श्रेय के लिए जितना आवश्यक हो, उतना देना है। इससे आगे वढकर श्रेय को हानि न पहुचे, इस हद तक अधिक देने की भी उसे छूट है, परंतु ऐसा करना उसका फर्ज नही है।

वा० प० म०, १०३

८—सतान

१ माता-पिता को अपने स्वार्थ के लिए अपनी सतान की गति-विधि या इच्छा को न रोकना चाहिए।

वा० प० ज०, २६

२ वच्चे साथ रखने से ही अच्छे रहते है, यह सिद्धात रूप मे नही मान लेना चाहिए।

वा० प० ज०, ८५

३ जैसे हम, वैसी ही हमारी सतान।

वा० प० ज०, ६४

४ संतानोत्पत्ति पूरी जिम्मेदारी की भावना के साथ ही करनी चाहिए।

स्त्रि० स०, १७

५ माता-पिता की भक्ति के लिए सव सुखो का त्याग करना चाहिए।

आ० क०, ७

६ पिता की आज्ञा का स्वेच्छा से पालन किया जाता है, तव वह आज्ञा-पालन पुत्रत्व का गौरव वन जाता है।

श० अ०, ३०

७ वालक जन्म से वुरा नही होता।

मे० स० भा०, २५६

९—पडोसी

१ पडोसी का कर्तव्य हमेशा पडोसी की धार्मिक रीति से मदद करना है।

वा० प० प्रे०, १४६

२ अपने पडोसी के हमेशा गुण देखने चाहिए, अपने सदा दोप देखने चाहिए। तुलसीदास-जैसे भी अत मे अपने को कुटिल कहते है।

म० डा० २, १५

३ हर इसान का पहला फर्ज अपने पडोसी के प्रति है। इसमे परदेशी के प्रति द्वेष नही और स्वदेशी के लिए पक्षपात नही।

स ० ई०, ५४

४ पडोसी के प्रति धर्म-पालन करने का अर्थ है जगत के प्रति धर्म-पालन। और किसी तरह दुनिया की सेवा हो ही नही सकती।

स० ई०, ५५

५ अगर पडोसी के प्रति सब अपना धर्म ठीक-ठीक पालन कर सके, तो दुनिया मे कोई मदद के विना दुख न पाय। इसलिए यह कहा जा सकता है कि मनुष्य पडोसी की सेवा करके दुनिया की सेवा करता है।

स० ई०, ५५

६ इस दुनिया मे इसान को रोज जितना चाहिए उतना कुदरत रोज पैदा करती है। उसमे अगर कोई अपनी जरूरत से ज्यादा काम मे लेता है तो उसके पडोसी को भूखा रहना ही पडेगा। बहुत-से लोग अपनी आवश्यकता से अधिक लेते है, इसीलिए दुनिया मे भूखो मरने की नौबत आती है।

स० ई०, ५०

१०—मानव-समानता

१ किसी इसान को अपने से नीचा समझना कभी मनुष्य का काम नही हो सकता।

स्त्रि० स०, ३७

२ जब हम कुछ लोगो को अपने से नीचा मानने लगते है, तो समझना चाहिए कि हममे बुराई बहुत ज्यादा आ गई है।

स्त्रि० स०, ३७

३ जन्म से या बाहरी रिवाजो के पालन से ऊच-नीच का निर्णय

नही किया जा सकता ।

स्त्रि० स०, ३८

४ ईश्वर ने किसीको ऊच-नीच की छाप लगाकर पैदा नही किया ।

स्त्रि० स०, ३८

५ श्रेष्ठता और हीनता का भाव नैतिकता के अत्यंत प्रारंभिक सिद्धातो के विरुद्ध है ।

रि० अ०, ३७

६ इस ससार मे न कोई ऊचा है न नीचा । इसलिए जो अपने को ऊचा मानता है, वह कभी ऊचा नही हो सकता । जो अपने को नीच मानता है, वह सिर्फ अज्ञान के कारण से । उसे उसके नीचे होने का पाठ उससे ऊचापन भोगनेवालो ने सिखाया है ।

स० ई०, ६६

७ समानता तबतक नही होगी, जबतक कि एक आदमी दूसरे आदमी से छोटा या वडा अनुभव करता है । बराबरवालो मे सहायता के लिए कोई स्थान ही नही होता ।

सि० गा०, १३२

११—अस्पृश्यता-निवारण

१ यदि आत्मा एक ही है, ईश्वर एक ही है, तो अस्पृश्य कोई भी नही ।

य० म०, ६६

२ जो धर्म अस्पृश्यता को मानता या तदनुसार वरतता है, वह धर्म नही, अधर्म है, और नाश के योग्य है ।

य० म०, ७१

३ अस्पृश्यता हिंदू धर्म का अग नही है । यही नही, वह हिंदू धर्म मे घुसी हुई सडाद है, वहम है, पाप है और उसका निवारण करना प्रत्येक हिदू का धर्म है, उसका परम कर्तव्य है ।

य० म०, ७१

४ अस्पृश्यता-निवारण करनेवाला ढेढ-भगी को अपनाकर ही सतोप नही मानेगा, वरन जवतक जीव-मात्र को अपने मे नही देखता

और अपने को जीव-मात्र मे नही होम देता, तवतक वह शात होगा ही नही। अस्पृश्यता मिटाने का मतलव है जगत-मात्र के साथ मैत्री रखना, उसका सेवक वनना।

य० म०, ७४

५ जीव-मात्र के साथ का भेद मिटाना ही अस्पृश्यता-निवारण है।

य० म०, ७५

६ शूद्र का अर्थ आध्यात्मिक दृष्टि से असस्कृत और अज्ञानी मनुष्य है।

स० ई०, ८६

७ कोई भी जन्म से अछूत नही हो सकता, क्योकि सभी उस एक आग की चिनगारिया है। कुछ मनुष्यो को जन्म से ही अस्पृश्य समझना गलत है।

सर्वो०, ३२

८ यदि विश्व मे जो-कुछ है, सभी ईश्वर से व्याप्त है---अर्थात ब्राह्मण और भगी, पडित और मेहतर, भले ही वे किसी भी जाति के हो, यदि इन सवमे भगवान विद्यमान है---तो न कोई ऊचा है ओर न कोई नीचा, सभी सर्वथा समान हे। समान इसलिए कि सव उसी सृष्टा के प्राणी है।

सर्वो०, ६५

९ अस्पृश्यता धर्म की आज्ञा नही है, यह तो शैतान का आविष्कार है।

रि० आ०, १६

१० अछूतपन मिटाने का अर्थ यह है कि अछूतो के सार्वजनिक सस्थाओ मे जाने पर जो रुकावटे लगाई जाती है उन्हे दूर किया जाय, और उन्हे छूने पर जो छुआछूत मानी जाती है, उसे मिटाया जाय।

स० ई०, ६६

११ अस्पृश्यता ऐसा पाप है कि वह समाज की सारी रचना मे जहर भरता है। इसलिए उसे मिटा डालना चाहिए।

म० डा० ३, १२१

१२ चमार के पेशे को पवित्र मानने के बजाय गदा माना जाता है।

स० ई०, १३

१३ स्वर्ग जाने का जितना अधिकार वेद जाननेवाले को है, उतना ही भगी का काम करनेवाले को है। लेकिन वेद जाननेवाला केवल वेदिया या पाखडी हो, तो कितना ही विद्वान होने पर भी वह नरक मे पडेगा, और भगी ब्रह्म-अक्षर न जाने, तो भी ईश्वरार्पण बुद्धि से पाखाने साफ करे तो जरूर ऊचा चढ जायगा।

म० डा० २, ४४

१४ प्रीतिभोज अस्पृश्यता-निवारण का अग नही, तो भी वह उसका परिणाम है।

म० डा० २, १०७

१५ अछूतपन का पाप धोने के लिए कोई भी कष्ट अधिक नही।

म० डा० २, ५०

१६ मदिर-प्रवेश अस्पृश्यता-निवारण का आवश्यक अग है।

म० डा० २, ११३

१७ अस्पृश्यता आत्मा का हनन करनेवाला पाप है। जातपात सामाजिक बुराई है।

म० डा० २, १०४

१८ अस्पृश्यता तो तमाम सत्य की, धर्म की और प्रगति की दुश्मन है।

म० डा० २, १०३

१९ अस्पृश्यता-निवारण मे रोटी-बेटी का व्यवहार नही आता। लेकिन जो भी अछूत माने जानेवाले हरिजनो के साथ रोटी-बेटी का व्यवहार रखता है, वह अधर्म करता है, ऐसा मै नही मानता।

म० डा० २, ११७

२० हरिजनो के बहुत ही बडे समुदाय की जाहिरा दुर्दशा का सारा कसूर सवर्ण हिंदुओ का ही है और अस्पृश्यता चली जायगी, तो उसके साथ ये सुधार अपने-आप हुए बिना नही रहेगे।

म० डा० २, ३९८

२१ अछूतपन का जड से नाश तो तभी होगा, जब अछूतपन का नाम ही न रहे। मदिरो का प्रश्न हिंदू जाति के उद्धार की बात है, आज तक किये गए पाप धो डालने की बात है, फिर भले ही अछूत मदिरो मे भी न जाना चाहे।

म० डा० ?, १८७

२२ औरो को मूर्ति छूने का अधिकार न हो, तो अस्पृश्य भी न छुए। मगर अछूतो को अछूतपन के कारण न रोका जाय। यह ब्राह्मणो के अधिकार की बात नही, बल्कि ज्ञान की बात है।

म० डा० ?, १८७

२३ नापाक से नापाक मदिरो मे भी पाक दिल से जानेवाले भावुको को जरूर ईश्वर के दर्शन होते है। यही उसकी अजीव कुदरत है, या यो कहिये कि यही उसकी माया है।

म० डा० ?, २०८

२४ देश की आबादी के पाचवे भाग को अछूत रखकर हिंदू लोग सस्कार और नीति मे बहुत ही गिर गए है।

म० डा० ?, ?२१

२५ हरिजनो मे जो भी कुटेवे पाई जाती है, उनके लिए सवर्ण हिंदू ही जिम्मेदार हैं। ऊचे माने जानेवाले वर्णो ने उनकी साफ रहने की सुविधाए छीन ही नही ली है, बल्कि उनकी सफाई की प्रवृत्ति को ही मार डाला है।

म० डा० २, ३८?

२६ जैसे सूर्य के प्रकाश का प्रतिबिंब चद्रमा पर पडता है, वैसे ही हरिजनो पर हमारी पवित्रता का प्रतिबिब पडेगा। आज तो उनपर हमारी अपवित्रता और गदगी का ही प्रतिबिब पड रहा है।

म० डा० २, ?५५

२७ मदिर-प्रवेश का प्रश्न केवल धार्मिक है।

म० डा० ?, २६१

२८ सवर्ण हिंदू अगर अपने को हरिजनो पर उपकार करनेवाले

आश्रयदाता मानेगे, तो हम वडी भूल करेंगे।

म० डा० २, ३८२

२९ भगी हम सबसे ऊचे है, क्योकि उनकी सेवा सबसे बडी है।

प्रा० प्र० १, ११४

३० हममे से हरएक को भगी बनकर सेवा करनी चाहिए। जो मनुष्य पहले भगी नही बनता, वह जिदा नही रह सकता है। और न रहने का उसे हक है।

प्रा० प्र० १, २०४

३१. मदिर-प्रवेश सुधार तबतक अपूर्ण रहेगा जवतक मदिर जरूरी अदरूनी सुधार से, वास्तविक रूप मे पवित्र न हो जाय।

प्रा० प्र० १, २१०

१२—सुधार

१ जबतक एक आदमी अपनी वर्तमान स्थिति से सतुष्ट रहता है तबतक उससे निकलने की प्रेरणा करना कठिन है। इसलिए ही हरएक सुधार से पहले असतोष होता है।

हि० स्व०, २७

२ सुधारक समय से कभी हार नही मानता।

खा०, २२

३ समय और परिस्थितियो से तरीके वदल जाते है।

खा०, ६०

४ जबतक निडर व्यक्तियो ने अमानुषिक रस्म-रिवाजो को नही तोडा है, तवतक कभी कोई सुधार नही हुआ है।

स्त्रि० स०, ७२

५ महापुरुष या समर्थ लोग विना किसी हानि के जो कर सकते है, वह हम नही कर सकते।

स्त्रि० स०, १०

६ सुधारक लोग हुक्म देकर समाज से सुधार नही करा सकते। उन्हे समाज के दिल और दिमाग को समझाना होगा।

स्त्रि० स०, ११८

७ कोई आदमी कितना ही पतित क्यो न हो, यदि उसका इलाज कुशलता से और सहानुभूति के साथ किया जाय तो उसे सुधारा जा सकता है ।

गा० वा०, ६३

८ रिवाज के कुए मे तैरना अच्छा है, उसमे डूबना आत्महत्या है।

गा० वा०, २६५

९ कुरीति के अधीन होना पामरता है। उसका विरोध करना पुरुषार्थ है।

गा० वा०, २६५

१३—सस्थाए

१ किसी भी सस्था का बारीकी से रखा गया हिसाब उसकी नाक है ।

आ० क०, १३१

२ किसी भी सार्वजनिक सस्था को स्थायी कोष पर निर्भर करने का प्रयत्न नही करना चाहिए। इसमे उसकी नैतिक अधोगति का बीज छिपा रहता है ।

आ० क०, १७०

३ स्थायी सपत्ति के भरोसे चलनेवाली सस्था लोकमत से स्वतत्र हो जाती है और कितनी ही बार वह उल्टा आचरण भी करती है ।

आ० क०, १७०

४ लोग जिस सस्था को मदद देने के लिए तैयार नही हो, उसे सार्वजनिक सस्था के रूप मे जीवित रहने का अधिकार ही नही है ।

आ० क०, १७०

५ सार्वजनिक सस्थाओ के दैनिक खर्च का आधार लोगो से मिलने-वाला चदा ही होना चाहिए ।

आ० क०, १७०

६ जिसे गिन्नियो मे गिनती करने की आदत हो, उसे पाइयो मे हिसाब लगाने को कहिये, तो वह झट से हिसाब कर सकेगा ।

आ० क० २१२

७ कोई सस्था सफलता के साथ नही चल सकती अगर उसके सदस्य, विशेषरूप से उसके अधिकारी, उसकी नीति को मानने से इकार कर दे और उसका विरोध करते हुए भी उससे चिपटे रहे ।

सि० गा०, २३२

८ जो मनुष्य सस्था मे रहकर स्वतत्र व्यवहार करता है, वह सस्था का घातक बनता है । काम करनेवाले सब लोग सस्था के नियमो का अक्षरश पालन करे और एक तत्र के अधीन रहकर चले, तो ही सस्था बन सकती है, टिक सकती है और रह सकती है ।

बि० कौ० आ०, १८०

९ कोई भी शक्तिशाली आदोलन या सस्था वाहरी आक्रमणो से नही मर सकती । आतरिक विनाश ही मृत्यु का कारण हो सकता है ।

गा० का पुन०, ६५

१० कोई भी सुपात्र सस्था जनता से मिलनेवाली मदद के अभाव के कारण नही मरती ।

मे० स० भा०, ३८६

११ अगर कार्यकर्त्ता मे कही भी दोप न हो तो आसपास का वायुमडल शुद्ध ही रहेगा ।

स० ई०, ८१

१२ जब नेता न रहे तब आचार-भ्रष्टता नही आनी चाहिए और अग्नि के सामने भी आत्म-समर्पण नही होना चाहिए ।

सि० गा०, २३६

१३ मुख्य कार्यकर्त्ता तो जाने-अनजाने अपनी सस्था मे होनेवाले दोप के लिए जिम्मेदार है ही । असत्य जहरीली हवा से भी ज्यादा जहरीला और ज्यादा सूक्ष्म है । जहा मुखिया की आध्यात्मिक दृष्टि है, जहा वह जाग्रत है, वहा यह सूक्ष्म जहर घुस नही सकता ।

स० ई०, १०

१४ अच्छे स्वास्थ्य और निर्मल चरित्रवाला कोई आदमी मिल जाय, तो उसे सव काम सौप देना ।

म० डा० ३, ४६

१५ यदि सार्वजनिक सेवक मे थोडा भी आडवर या अभिमान होगा तो वह एक क्षण भी नही टिक सकेगा।

ए० च०, ४३२

१६ प्रत्येक महान उद्देश्य मे लडनेवालो की सख्या का महत्त्व होता है, परतु वह गुण ही निर्णायक तत्त्व सिद्ध होता हे, जिससे उन लडाको का निर्माण हुआ है। ससार के वडे-से-वडे पुरुप हमेगा अकेले ही खडे रहे है।

मो० मा०, ६६

१७ जव सस्थाओ का पूरा उत्तरदायित्व सिर पर आता हे तभी सबसे अच्छे और सबसे वुरे आदमी की परीक्षा होती है। कोई सब से अच्छा आदमी तभी साबित होता है जव वह निर्लेप होकर काम करे।

गा० छ०, १२७

१८ हरएक शुद्ध आदोलन के नेताओ को यह देखना पडता है कि वे उसमे शुद्ध लडनेवालो को भरती करे।

सि० गा०, २३५

१९ उस आदोलन मे यथार्थता का अभाव होता है, जिसे कार्यकर्त्ता दबाव के अधीन चलाते है।

मि० गा०, १४७

२० जीवन के सारे पहलुओ को अपने मे समा लेनेवाला रचनात्मक काम करोडो जनता के सारे अगो की शक्ति को जगाता है।

मे० स० मा०, ३०५

२१ श्रमप्रधान सस्थाओ मे नौकर होते नही या थोडे ही होते है। पानी भरना, लकडी फाडना, दिया-बत्ती तैयार करना, पाखाने और रास्ते साफ करना, मकानो की सफाई रखना, अपने-अपने कपडे धोना, रसोई करना वगैरा अनेक काम तो ऐसे है, जो होने ही चाहिए।

स० ई०,५

२३ कही कोई सभा हो रही हो और वहा कही जानेवाली बात हम नही सुनना चाहते हो तो हमे उठकर चले जाना चाहिए। चीखने-चिल्लाने की जरूरत नही है।

प्रा० प्र० १, ७

खंड ५ : ज्ञान और संस्कृति

१—ज्ञान

१ जो मानते है कि वे जानते हैं,, लेकिन उसपर अमल नही कर सकते, वे जानते ही नही, या जानने पर भी नही जानते ।

बा० प० प्रे०, १३५

२ एक ही वस्तु को भिन्न-भिन्न मनुष्य भिन्न-भिन्न रीति से देखे, यह ठीक है । एक ही शक्ति का उपयोग भिन्न-भिन्न प्रकार से होता है, यह हम रोज देखते है ।

बा० प० प्रे०, १६५

३ मिथ्या ज्ञान से हम हमेशा डरते रहे । मिथ्या ज्ञान वह है, जो हमको सत्य से दूर रखता है या करता है ।

बा० आ०, २७

४ समस्त ज्ञान का अतिम लक्ष्य चरित्र-निर्माण ही होना चाहिए ।

मो० मा०, ५८

५ चरित्र के अभाव मे ज्ञान केवल बुराई को जन्म देनेवाली शक्ति बन जाता है, जैसा कि ससार के अनेक 'प्रतिभाशाली चोरो' और 'सभ्य दुष्टो' के उदाहरणो मे देखा जाता है ।

मो० मा०, ५६

६ हमारे तत्त्व-ज्ञान की खाक के बराबर कीमत नही, अगर वह शनै -शनै प्रेममय सेवा मे नही बदल जाता ।

म० डा० १, ३३१

७ ज्ञान का अर्थ है सारासार का विवेक । जिस अक्षर-ज्ञान के परिणाम-स्वरूप यह विवेक-शक्ति न आये, वह ज्ञान नही ।

म० डा० २, २५८

८ अच्छा और पूरी तरह प्राप्त किया हुआ ज्ञान यम-नियम के पालन से मिल सकता है ।

म० डा०३, १५५

९ ज्ञान किसी एक देश या जाति के एकाधिकार की वस्तु नही है ।

मे० स० भा०, ५

१० जरूरत से अधिक ज्ञान ने अधिक अज्ञान और जडता पैदा की है । जैसे हमारे यहा जो समझदार जरूरत से ज्यादा समझदारी वताता है तो उसे अकलमद दादा कहा जाता है, उसी तरह इस आवश्यकता से अधिक ज्ञान ने वरबादी ही की है ।

ए० च०, १७२

२—बुद्धि

१ बडे-से-बडे वैज्ञानिक या अध्यात्मवादी का ज्ञान भी रजकण-जितना है ।

स० ई०, २१

२ जैसे गलत जगह पर रखे हुए पदार्थ ही कचरा वन जाते है, ठीक वैसे ही वुद्धि का दुरुपयोग करने पर वह पागलपन बन जाती है ।

स० ई०, ८५

३ वुद्धि को सर्वशक्तिमान मानना उतनी ही बुरी मूर्तिपूजा है, जितनी किसी वृक्ष या पत्थर को ईश्वर मानकर उसकी पूजा करना है ।

स० ई०, ८५

४ परमात्मा ने आदमी को वुद्धि इस लिए दी थी कि वह अपने विधाता को जाने, पर आदमी ने उसका दुरुपयोग किया, जिससे वह उसे भूल सके ।

हिं० स्व० ४८

५ अपनी वुद्धि को रुपये-आने-पाई मे वदलने के बदले देश की सेवा मे लगाइये ।

सर्वो०, ४०

६ जो चीज वुद्धि की कसौटी पर परखी जा सकती है, उसे हम जरूर परख ले, और जो इस कसौटी पर खरी न निकले, वह प्राचीनता का चोला पहनकर सामने आये तो भी हम उसे रद्द कर दे।

स्त्रि० स०, २७

७ मनुष्य को अपनी वुद्धि की शक्ति का उपयोग आजीविका या उससे ज्यादा प्राप्त करने के लिए नही, वल्कि सेवा के लिए, परोपकार के लिए, करना चाहिए।

स० ई०, ४६

८ मनुष्य की प्रतिष्ठा उसके दिल मे, हृदय मे है, न कि उसके मस्तिष्क मे, यानी वुद्धि मे।

वा० आ०, १५३

९ हम वुद्धि की वात अधिकार-सीमा के ही भीतर माने, तो सवकुछ ठीक हो जाय।

वि०, ३३

१० जव वुद्धिवाद अपने सर्वशक्तिमान होने का दावा करता है, तव वह विकराल राक्षस वन जाता है।

वि०, ३३

११ वुद्धि से रुपया वटोरकर भोग-विलास के साधन खडे करके ऐश-आराम मे जीवन व्यतीत करना पाप है।

ए० च० १२७

१२ ईश्वर ने मनुष्य को वुद्धि दी है, परतु सदुपयोग की अपेक्षा उसका दुरुपयोग अधिक हुआ है।

वि० कौ० आ०, १७५

३—धर्म-ग्रथ

१ मेरा यह विश्वास तो है कि मुख्य धर्म-पुस्तके ईश्वरप्रेरित है, लेकिन उनमे दोहरी छनाई का दोष भी है। पहले तो वे किसी मानव-रूप सदेश-वाहक के द्वारा आती है और फिर उनपर टीकाए लिखी जाती है।

स० ई०, ८७

२ ईश्वरीय ज्ञान पुस्तको से उधार नही लिया जा सकता। उसे अपने ही भीतर अनुभव करना पडता है।

स० ई०, ८८

३ धर्मशास्त्रो का सच्चा अर्थ अनुभवी लोग ही कर सकते है।

स० ई०, ६०

४ शास्त्र तभी शास्त्र है जब वह शरीर, मन और आत्मा की भूख को मिटाने का पूरा मौका दे।

खा०, ६८

५ धर्म-शास्त्र के नाम पर जो कुछ छपता है, उस सभी को ईश्वर का वाक्य या वेदवाक्य मानना जरूरी नही है।

स्त्रि० स०, ४

६ हम किसी ऐसे शास्त्र को नही मान सकते जो इसान को उसके जन्म के ही कारण ऊचा या नीचा मानता हो।

स्त्रि० स०, ३८

७ निरतर पवित्र पुस्तको का ही सग रखे।

बा० पा० ज०, ३०

८ शास्त्र युक्ति और सत्य से ऊचे नही हो सकते। उनका हेतु युक्ति को शुद्ध करना और सत्य को चमकाना है।

रि० अ०, १६

९ प्रमाणो का अधानुकरण मन की दुर्वलता का चिह्न है।

शा० नै० आ०, १८

१० यदि कोई वडे धर्म-धुरधर हो, मगर उनका धर्म सिर्फ पुस्तको मे और दिमाग मे ही चक्कर काटता रहे तो वे कहने के ही धर्म-पडित है।

म० डा०, २५३

११ पुस्तको मे लिखा हुआ सवकुछ वेदवाक्य नही माना जा सकता। जो सदाचार के खिलाफ है ओर अमानुपिक है, वह कही भी लिखा हो तो भी न माना जाय। सच-झूठ को तौलने की शक्ति जवतक हममे नही आती, तवतक पढी हुई चीज के वारे मे जिन वुजुर्गो पर विश्वास हो,

उनका कहना मानना चाहिए ।

म० टा०१, ३२६

१२ शास्त्र का मुख से उच्चारण करने मे कोई लाभ नही है, उस-पर अमल करने मे ही लाभ है ।

गा० वा०,१०६-१०

१३ स्वाध्याय के बराबर उदात्त या स्थायी और कोई वस्तु नही।

वि०, १८

१४ धर्म की बाते अरबी में हो, सस्कृत मे हो या चीनी भाषा मे हो, सब अच्छी ही हैं ।

प्रा० प्र०१, २१

१५ महज सस्कृत मे कुछ लिख देने से कोई वाक्य शास्त्र-वाक्य नही बन जाता ।

प्रा० प्र०१, १६६

१६ शास्त्र की जो चीज हम पचा सके, वही सार्थक है । जैसे वही आहार हमारे लिए सार्थक बनता है, जिसका हम रक्त बनाय ।

प्रा० प्र०१, १७४

१७ शास्त्र के नाम से जो चलता है सबको शास्त्र न माना जाय, और शास्त्र वही माना जाय, जिसमे कम-बेश हमेशा होता रहे ।

प्रा० प्र०१, २२८

४—शिक्षा

१ पढे हुए मे से जो पसद न आये उसे भूल जाना, और पसद आये उस पर अमल करना ।

आ० क०, ८

२ विद्याभ्यास मे व्यायाम का, अर्थात शारीरिक शिक्षा का, मान-सिक शिक्षा के समान ही स्थान होना चाहिए ।

आ० क०, ११

३ हम लोगो मे यह भ्रम फैला हुआ है कि पहले पाच वर्षो मे बालक को शिक्षा प्राप्त करने की आवश्यकता नही होती । पर सच तो यह है

कि पहले पाच वर्ष मे बालक को जो मिलता है, वह बाद मे कभी नही मिलता ।

आ० क०, १७५

४ बच्चो की शिक्षा मा के पेट से शुरू होती है । माता-पिता के गर्भाधान-काल के शारीरिक श्रम और मानसिक स्थिति का प्रभाव बालक पर पड़ता है । गर्भ के समय की माता की प्रकृति और माता के आहार-विहार के भले-बुरे फल विरासत मे लेकर बालक जन्म लेता है ।

आ० क०, १७५

५ मैंने हृदय की शिक्षा को, अर्थात चरित्र-विकास को, हमेशा पहला स्थान दिया है ।

आ० क०, २९२

६ हरएक बालक को बहुत-सी पुस्तके दिलाने की मैंने जरूरत नही देखी । शिक्षक ही विद्यार्थी की पाठ्य पुस्तक है ।

आ० क०, २९५

७. बालक आखो से जितना ग्रहण करते हैं, उसकी अपेक्षा कानो से सुनी हुई बात को वे थोड़े-से परिश्रम से बहुत अधिक ग्रहण कर सकते है ।

आ० क०, २९५

८ बुनियादी नीति-शास्त्र सब धर्मों मे एक-सा है । बुनियादी नीति-शास्त्र की शिक्षा देना बेशक राज्य का काम है ।

स० ई०, १३९

९. बच्चो की शिक्षा का प्रारम्भ वर्णमाला से करने से उनका विकास रुक जाता है ।

शरीर, बुद्धि और आत्मा के सभी उत्तम गुणो को प्रकट किया जाय। पढना-लिखना शिक्षा का अत तो है ही नही, वह आदि भी नहीं है।

सर्वो०, १६६

१२ पढने, लिखने तथा गणित का अपना मूल्य है। इसलिए जिन्हे वह प्राप्त है, अशिक्षितो को उनका ज्ञान देना उन लोगो के लिए एक आवश्यक विशेष सेवा है।

ग्ली० वा० फी०, २०

१३ बहुत-सी किताबो मे निर्दोष आनद का भडार भरा पडा है। वह हमे शिक्षा के विना नही मिल सकता।

स्त्रि० स०, १५

१४ विदेशी माध्यम के द्वारा वास्तविक शिक्षा असभव है।

गा० वा०, १६४

१५ परोपकार करना, दूसरो की सेवा करना ओर वैसा करते हुए जरा भी वडप्पन न मानना, यही सच्ची शिक्षा है।

गा० सा०, ६६

१६ शिक्षा का अर्थ अक्षर-ज्ञान नही, वल्कि चरित्र का विकास, और धर्म-भावना का भान है।

गा० सा०, ६८

१७ विद्या की उमग आज जिस कारण से होती है, वह उसे कलकित करती है और उस हद तक वह कम हो जाय, तो उसमे भला ही है। विद्या मुक्ति के लिए यानी सेवा के लिए है। जिसमे सेवा की लगन होगी, वह विद्या प्राप्त करने की कोशिश करेगा ही, और उसकी विद्या उसे और समाज को सुशोभित करेगी। जव उसमे से रुपया पैदा करने का लालच दूर हो जायगा, तव विद्याभ्यास का क्रम बदल जायगा ओर उसे लेने और देने का तरीका भी बदल जायगा। उसका आज खूब दुरुपयोग होता है। इस नये दृष्टिकोण का आदर हो तो विद्या का कम-से-कम दुरुपयोग हो।

स० ई०,७३

१८ वच्चो की शिक्षा मा-वाप का धर्म है, ऐसा सोचे तो हमे वेशुमार

पाठशालाओ की अपेक्षा सच्ची शिक्षा का वायुमडल पैदा करने की ज्यादा जरूरत है ।

स० ई०, ८८

१९ अनुभव बडे-से-बडा स्कूल है ।

मे० स० भा०, २१३

२० जबतक हमे सच्चा जीवन जीना नही आता, तबतक सारी पढाई बेकार है । सच्चे जीवन मे बनावट की गुजाइश ही नही है । सत्य का पुजारी जैसा है, वैसा ही दिखाई देगा । उसके विचार, जबान और कामो मे एकता होगी । ईश्वर को सत्य के रूप मे जानने से यह शिक्षा जल्दी मिलती है। ऐसा सत्यमय जीवन बनाने के लिए बहुत-सी पोथिया उलटनी नही पडती, मगर सारी बाजी ही हमारे हाथ मे आ जाती है ।

म० डा०१, ३१७

२१ पढा और सोचा हुआ किसी काम का न रहे, तो जान लेना चाहिए कि हम कुछ भी नही सीखे ।

म० डा०२, २५३

२२ शिक्षा मात्र आत्मोन्नति के लिए होती है । इसलिए इस प्रकार की शिक्षा लेनी चाहिए, जिससे यह उन्नति हो । उसका एक ही प्रकार हो, ऐसा जरूरी नही है ।

म० डा०३, १५५

२३ सच्ची शिक्षा का काम शिक्षा पानेवाले लडको और लड-कियो के उत्तम गुणो को बाहर लाना है ।

मे० स० भा०, २०७

२४ मनुष्य न तो कोरी बुद्धि है, न स्थूल शरीर है, और न केवल हृदय या आत्मा ही । सपूर्ण मनुष्य के निर्माण के लिए तीनो के उचित और एकरस मेल की जरूरत होती है और यही शिक्षा की सच्ची व्यवस्था है ।

मे० स० भा०, १९७

२५ अक्षर-ज्ञान न तो शिक्षा का अतिम लक्ष्य है और न उसका आरभ। वह तो मनुष्य की शिक्षा के कई साधनो मे से केवल एक साधन

है। अक्षर-ज्ञान अपने-आप मे शिक्षा नही है।

मे० स० भा०, १९७

२६ विद्याभ्यास सेवा के लिए ही होना चाहिए। लेकिन सेवा मे अपूर्व आनद रहता है, इसलिए विद्या आनद के लिए है, ऐसा कहा जा सकता है।

बा० प० प्रे०, १३०

२७ बच्चो को पढाना या अनुशासन सिखाना ही हमारा ध्येय नही है। उन्हे चरित्रवान बनाना हमारा ध्येय है और उसीके लिए पढाई, अनुशासन वगैरा है। उन्हे चरित्रवान बनाने मे अनुशासन टूटे और पढाई बिगडे, तो भले ही टूटे और बिगडे।

बा० प० प्रे०, ३७

२८ बच्चो को जो देना चाहिए वह हम नही देते, ऐसा लगा करता है। सरल प्रयत्न से जो दिया जा सके, वह तो दे।

बा० प० प्रे०, ४०

२९ सारा जीवन पाठशाला और शिक्षण-रूप बन जाना चाहिए।

म० डा०१, २८६

३० अनुभव सच्ची पाठशाला है।

गा० सा०, ८७

३१ नई तालीम का आधार है सत्य और अहिंसा। व्यक्तिगत जीवन और सामजिक जीवन, दोनो मे ये ही उसके आधार है।

प्रा० प्र०२, २०३

३२ सच्ची शिक्षा हरएक को सुलभ होनी चाहिए। वह चद लाख शहरियो के लिए ही नही, मगर करोडो देहातियो के लिए उपयोगी होनी चाहिए।

प्रा० प्र०२, २०३

३३ यह शिक्षा तो जीवन की किताब मे से मिलती है, उसके लिए कुछ खर्च नही करना पडता और उसे ताकत के जोर से कोई छीन नही सकता।

प्रा० प्र०२, २०३

५—भाषा और सुलेख

१ किसी भी हिंदू बालक को सस्कृत का अच्छा अभ्यास किये विना न रहना चाहिए।

आ० क०, १४

२ भारतवर्प की उच्च शिक्षा के पाठ्य-क्रम मे मातृभापा के अतिरिक्त राष्ट्रभापा हिंदी, सस्कृत, फारसी, अरबी और अग्रेजी का स्थान होना चाहिए।

आ० क०, १४

३ हिदुस्तानी का मतलब यही है कि आसान वोली बोली जाय और वही लिखी-पढी जाय।

प्रा० प्र०१, १५३

४ खराब अक्षर अधूरी शिक्षा की निशानी माने जाने चाहिए।

आ० क०, १२

५ अच्छे अक्षर विद्या का आवश्यक अग है।

आ० क०, १२

६ बालको को पहले चित्रकला सिखानी चाहिए।

आ० क०, १२

७ खराव अक्षर कोई छोटा-मोटा दोप नही। अच्छे अक्षर भूषण है। खराब अक्षरो से हम अपने मित्रो और बुजुर्गो पर वहुत वडा बोझ डालते है।

म० डा०१न०, ३३५

६—शिक्षक

१ जिस काम को हम शिक्षक न करे, वह बालको से न कराया जाय और बालक जिस काम मे लगे हो, उसमे उनके साथ उसी काम को करनेवाला एक-एक शिक्षक हमेशा रहे।

आ० क०, २९३

२ मैं स्वय झूठ बोलू तो अपने शिष्यो को वीरता नही सिखा सकता। व्यभिचारी शिक्षक शिष्यो को सयम किस प्रकार सिखायगा ?

आ० क०, २९६

३ शिक्षक शिष्यो के दोपो के लिए कुछ अश मे जरूर जिम्मेदार हे।

आ० क०, ३००

४ शिक्षक का काम है कि वह शिष्य की अपूर्णताओ को दूर करे।

वा० प० ज०, २३७

५ मनुप्य का सच्चा शिक्षक वह स्वय ही हे।

मे० स० भा०, २१३

६ जिसे मारकर पढाने की आदत पड गई हो, उसे अपनी आदत छोडना मुश्किल लगता है। लेकिन यह तो वदूक-धारी सिपाही के अनुभव-जैसा हुआ। वह तो यही मानेगा कि गोली के विना दुनिया मे काम चल ही नही सकता। चलता है, यह सिद्ध करने का काम हमारा है। इसी तरह वच्चो के वारे मे समझना चाहिए।

वा० प० प्रे०, ३३

७ शिक्षक शिष्यो से माफी मागे तो अपना स्वाभिमान नही खोता, उल्टा वह वढता ही है।

वा० प० प्रे०, १६७

८ जिस-जिस वारे मे वच्चो को कुतूहल पैदा हो और उसकी हमे जानकारी हो, तो वह उन्हे वतानी चाहिए। जानकारी न हो तो अज्ञान मजूर करना चाहिए। न वताने लायक वात हो तो रोक देना चाहिए और दूसरो से पूछने के लिए भी मना कर देना चाहिए।

म० डा०१, २४२

९ शिष्य के हृदय मे पाठ उतारना शिक्षक का फर्ज है। कैसे उतारे, यह शिक्षक जाने। यह न जाने, तो शिक्षक काहे का ।

म० डा०२, २६२

१० वह शिक्षक अभागा है, जो मुख से एक वात पढाता है और हृदय मे दूसरी ही रखता है।

वि०, १७

११ सुघड घर के समान कोई स्कूल नही हो सकता, न ईमानदार और सदाचारी माता-पिता के समान कोई अध्यापक हो सकते है।

गा० का पुन०, ९०

७—विद्यार्थी

१ अधिक उम्र हो जाने पर भी पढा जा सकता है।

आ० क०, ११०

२ जिसे सचमुच पढने का शौक होता है, वह चाहे जहा अपनी इच्छा पूरी कर सकता है।

वा० प० ज०, २१५

३ शरीर बिगाडकर पढने से दोनो बिगडेगे।

वा० प० ज०, २३६

४ विद्यार्थी-जीवन विचार-विकास का समय है।

वा० प० ज०, २६६

५ हमारा विद्यार्थी-जीवन तब शुरू होता है, जब हम कालेज और विश्वविद्यालय तथा कानून की शिक्षा छोड देते है।

ऐ० बा०, ९४

६ जो विचार करना जानते है उनके लिए शिक्षक की जरूरत नही। शिक्षक हमे रास्ता बता सकते है, परतु विचार करने की शक्ति नही दे सकते। वह शक्ति हमारे भीतर छिपी हुई रहती है।

ऐ० बा०, १४६

७ विद्यार्थियो को राजनीति मे भाग नही लेना चाहिए। वे विद्यार्थी तथा शोधक है, न कि राजनीतिज्ञ।

रच० का०, २६

८ हमारा सारा जीवन विद्यार्थी का होना चाहिए।

म० डा०१न०, ३३१

९ जो लडका मन, शरीर और कार्य की पवित्रता की रक्षा नही करता, उसका पाठशाला मे कोई काम नही, उसे निकाल देना चाहिए। शूरवीर लडका हमेशा अपना मन पवित्र रखेगा, अपनी आखे पवित्र रखेगा और अपने हाथ पवित्र रखेगा। जीवन के इन बुनियादी उसूलो को सीखने के लिए तुम्हे किसी स्कूल मे जाने की आवश्यकता नही।

वि० गा० सी०, १०९

१० सच्ची शिक्षा का निर्माण करने के लिए व्यक्तिगत जीवन की

शुद्धता एक अनिवार्य शर्त है।

घि०, ४३

११ विद्यार्थी अगर अपने को साधारण मजदूरो मे गिनने लगे, तो उनकी बेकारी की समस्या विना किसी कठिनाई के हल की जा सकती है।

वि०, ११६

१२ विद्यार्थी किसी दल का पक्ष क्यो ले ! विद्यार्थियो का पक्ष एक है—विद्यार्थी तो विद्याभ्यास करते है, सारे मुल्क के लिए, अपने काम के लिए नही, अपना पेट भरने के लिए नही।

प्रा० प्र० २, २८०

१३ विद्यार्थियो के लिए न समाजवाद है, न कम्यूनिज्म है, और कांग्रेस भी नही—उनका एक ही काम है विद्याभ्यास करना, जिससे ज्ञान की वृद्धि हो।

प्रा० प्र० २, २८०

१४ हडताल विद्यार्थियो के लिए निकम्मी है। यह सबके लिए घातक है।

प्रा० प्र० २, २८०

८—समाचार-पत्र

१ दुनिया की दृष्टि मे सपादक की सत्ता बडी चीज होती है, हालाकि सपादक स्वय तो जानता है कि उसकी सत्ता उसके दफ्तर की दहलीज भी नही लाघ पाती।

आ० क०, १५७

२ समाचार-पत्र एक जबरदस्त शक्ति है, किंतु जिस प्रकार निरकुश पानी का प्रवाह गाव-के-गाव डुबो देता है और फसल को नष्ट कर देता है, उसी प्रकार कलम का निरकुश प्रवाह भी नाश की सृष्टि करता है। यदि ऐसा अकुश बाहर से आता है तो वह निरकुशता से भी अधिक विषैला सिद्ध होता है। अकुश अदर का ही लाभदायक हो सकता है।

आ० क०, २४८

३ वार-वार प्रचार से कोई चीज मूल सत्य नही वन जाती, और न सत्य इसलिए मूल वन जाता है कि उसे कोई देखता नही ।

स० ई०, ८८

४ अख़वारो मे जो आता है, उसमे कम-से-कम ५० फीसदी कम करके पढो ।

वा० प० ज०, २५०

५ जव आप कोई वात कहना चाहते है तो गोल-गोल वाते मत कहिये, कठोर वात को नरम शब्दो मे कहना या चुटकिया लेना आदि न कीजिये, वल्कि सीधे साफ ढग से कहिये ।

ऐ० वा०, १४४

६ जव कोई सपादन की जिम्मेदारी लेता है, तो उसे अपना दायित्व पूरी कर्तव्य-भावना से पूरा करना चाहिए । इसी पद्धति से पत्रकार का धधा चलाना चाहिए ।

ऐ० वा०, १४४

७ जो अखवार मे छपता है, उसपर भरोसा न करो । याद रखो कि खवर न मिलना खुशखवरी है ।

वा० प० मी०, ३८४

८ निकम्मे अखवारो को आप फेक दे । कुछ खवर सुननी हो दूसरो से जान-पूछ ले । अखवार न पढेगे तो आपका कोई नुकसान होनेवाला नही है ।

प्रा० प्र० १, ५२

९ अखवारो से वहुत-सी वाते वनाई या विगाडी जा सकती है ।

प्रा० प्र० १, ५२

१० वहुत-से अखवारनवीस ऐसे होते है, जो थोडा इधर पूछते है, थोडा उधर पूछते है और वात घड लेते है । वे लोग उच्छिष्ट भोजन खाते है । उच्छिष्ट भोजन करना अखवारनवीस का काम नही है ।

प्रा० प्र० २, ६५

११. जो अखवारनवीस है एडीटर है और जो अखवारो के मालिक है, उनको सच्चा वनना है, लोगो का सेवक वनना है । अखवारो मे गलत

और झूठी खवरो को न जाने देना चाहिए और न लोगो को उकमानेवाली वाते छापनी चाहिए।

प्रा० प्र०१, ३६४

१२ हम अपने हृदय को साफ करे, गदी चीज को पसद न करे। गदी चीज को पढना छोड दे। अगर हम ऐसा करेंगे, तो अखवार अपना सच्चा धर्म पालन करेंगे।

प्रा० प्र०१, ३६५

१३ आजादी के जमाने मे तो पब्लिक का यह फर्ज हो जाता है कि गदे अखवारो को न पढे, उनको फेक दे। जव उन्हे कोई लेगा नही, तो वे अपने-आप ठीक रास्ते पर चलने लगेंगे।

प्रा० प्र०१, ३६५

१४ अखवार आजकल की दुनिया मे एक वडी सत्ता हो गए है और यदि चाहे तो वे वडा काम कर सकते है।

प्रा० प्र०१, ४२३

१५ किसी वयान का सार वनाने मे मानी वदल जाने का खतरा रहता है।

प्रा० प०२, ३५६

९—कवि और कला

१ कवि के अर्थ का कोई पार नही है।

स० ई०, ६६

२ हमारी अतस्थ सुप्त भावनाओ को जाग्रत करने का सामर्थ्य जिसमे होता है, वह कवि है। सव कवियो का प्रभाव सवपर एक-सा नही होता, क्योकि सव लोगो मे सभी अच्छी भावनाए समान मात्रा मे नही होती।

सर्वो०, ३

३ जो मनुष्य हममे सोई हुई उत्तम भावनाओ को जाग्रत करने की शक्ति रखता है, वह कवि है।

आ० क०, २५६

४ सच्चा सौदर्य तो गुण मे ही होता है।

आ० क०, २६६

५ प्रत्येक सच्ची कला मे आत्मा की अभिव्यक्ति होनी चाहिए।

स० ई०, ९८

६ प्रत्येक सच्ची कला को अपना भीतरी रूप पहचानने मे आत्मा का सहायक होना ही चाहिए।

स० ई०, ९८

७ मानव की कला-कृतियो का मूल्य उतना ही है, जितनी वे आत्म-साक्षात्कार मे सहायक होती है।

स० ई०, ९८

८ जब कभी मनुष्य को सत्य मे सौंदर्य दिखाई देने लगेगा, तब सच्ची कला जन्म लेगी।

स० ई०, ९९

९ भूखे मर रहे करोडो के लिए जो चीज उपयोगी हो सकती है, मुझे वह सुदर ही दिखाई देती है।

स० ई०, १००

१० जीवन की पवित्रता सबसे ऊची और सबसे अच्छी कला है।

स० ई०, १००

११ सच्ची कला केवल रूप और आकृति की ही नही है। वह रूप और आकृति अर्तानिहित सत्य का भी विचार करती है।

स० ई०, १००

१२ संच्ची कला मे कलाकार की आतरिक पवित्रता, सतोप और आनद का परिचय मिलना चाहिए।

स० ई०, २००

१३ कला अगर सच्ची कला है, तो उसमे शाति मिलनी चाहिए।

खा०, ९

१४ सच्ची कला उसका निर्माण करनेवालो के सुख, सतोप और शुद्धता का सबूत होनी चाहिए।

स्त्रि० स०, ४२

१५ एक कला वह है, जो जान लेने का काम करती है और दूसरी

कला वह जो जीवन-दान देती हे ।

स्त्रि० स०, ४२

१६ कला किसी देश या व्यक्ति का एकाधिकार नही होती । जिसमे छिपाने की जरूरत है, वह कला नही हे ।

बा० प० प्रे०, १३०

१७ समग्र सच्ची कला आत्मा की अभिव्यक्ति हे । वाहरी रूपो का केवल इतना ही मूल्य है कि वे मनुष्य की आतरिक भावना को अभिव्यक्त करते हे ।

मो० मा०, १११

१८ सच्चे कलाकार की दृष्टि मे केवल वह चेहरा सुदर हैं, जो अपने वाहरी रूप से विल्कुल अलग आत्मा मे वसे हुए सत्य की ज्योति से चमकता है । सत्य से अलग कोई सौदर्य नही है । दूसरी ओर सत्य ऐसे स्वरूपो मे अपने को प्रकट कर सकता है, जो वाहर से देखने मे जरा भी सुदर न हो ।

मो० मा०, ११२

१९ जीवन समग्र कला से भी अधिक महान है । मैं इससे भी आगे बढकर यह घोपणा करूगा कि जिस मनुष्य का जीवन पूर्णता के निकट-से-निकट पहुचता है वह सर्वोच्च कलाकार है, क्योकि उच्च और उदात्त जीवन की निश्चित बुनियाद और आधार के अभाव मे कला का क्या मूल्य है ।

मो० मा०, ११३

२० अत मे सच्ची कला उन जड मशीनो के जरिये अभिव्यक्त नही की जा सकती, जो भाप और विजली की शक्ति से चलती है और विशाल पैमाने पर माल तैयार करने के लिए बनाई गई है, सच्ची कला तो केवल स्त्री-पुरुपो के हाथो के कोमल प्राणवान स्पर्श के द्वारा ही अभिव्यक्त हो सकती है ।

मो० मा०, ११३

२१ जीवन की शुद्धि सवसे ऊची और सबसे सच्ची कला हे । तालीम पाई हुई आवाज से मधुर सगीत को जन्म देने की कला तो अनेक लोग

सिद्ध कर सकते है, परतु शुद्ध जीवन के स्वरो के सुमेल से मधुर सगीत को जन्म देने की कला विरले ही लोग सिद्ध कर सकते है।

मो० मा०, ११३

२२ हम सबको जो रास्ता तय करना है, उसमे कला, साहित्य वगैरा सिर्फ साधन है। वे ही जब साध्य बन जाते है तब बधन बनकर मनुष्य को गिराते है।

म० डा०१, २११

२३ कला को उपयोग से अलग नही किया जा सकता। हा, उपयोग का अर्थ अधिक-से-अधिक विशाल करना चाहिए।

म० डा०१, २८१

२४ मैं कला के दो भेद करता हूं—आतर और बाह्य, और इनमे तुम किसपर अधिक जोर देते हो, यही सवाल है। मेरे नजदीक तो बाह्य की कीमत तबतक कुछ नही है, जबतक अतर का विकास न हो।

गा० वा०, १४०

२५ जो कला आत्मा को आत्म-दर्शन करने की शिक्षा नही देती, वह कला ही नही है।

गा० वा०, १४०

१०—सस्कृति

१ दूसरी सस्कृतियो की समझ और कद्र स्वय अपनी सस्कृति की कद्र होने और उसे हज्म कर लेने के बाद होनी चाहिए, पहले हरगिज नही। मेरा दृढ मत है कि कोई सस्कृति इतने रत्न-भडार से समृद्ध नही है, जितनी हमारी अपनी सस्कृति।

सर्वो०, १६९

२ मेरा धर्म जहा यह आग्रह करता है कि स्वय अपनी सस्कृतियो को हृदयगम करके उसके अनुसार आचरण किया जाय, (क्योकि वैसा न किया गया तो उसका परिणाम जातीय आत्म-हत्या होगा) वहा दूसरी सस्कृतियो को तुच्छ समझने या उनकी उपेक्षा करने का वह निषेध भी करता है।

सर्वो०, १६९-७०

३ कोई सस्कृति जिंदा नही रह सकती, अगर वह दूसरो का वहिष्कार करने की कोशिश करती है।

सर्वो०, १७०

४ मैं चाहता हूं कि सब देशो की सस्कृतियो की हवा मेरे घर के चारो ओर अधिक-से-अधिक स्वतत्रता के साथ बहती रहे। मगर मैं उनमे से किसीके झोके मे उड नही जाऊगा।

सर्वो, १७०

५ एक देश, जिसकी सस्कृति का आधार अहिंसा पर है, यह जरूरी समझेगा कि उसका प्रत्येक घर अधिक-से-अधिक स्वावलबी हो।

खा०, २११

६ जो सस्कृति सबसे अलग रहने का प्रयत्न करती है, वह जी नही सकती।

मो० मा०, १४४

७ मन की सस्कृति हृदय की सस्कृति के अधीन होनी चाहिए।

वि०, १६

८ भिन्न-भिन्न धर्मों और सप्रदायो को एक सूत्र मे बाधनेवाली हमारी एक सामान्य सस्कृति है।

मे० स० भा०, २१४

९ आधुनिक सभ्यता का विशिष्ट लक्षण मानव की जरूरतो को विना किसी मर्यादा के बढाते जाना है। प्राचीन सभ्यता का लक्षण इन जरूरतो पर आवश्यक मर्यादा लगाना और इनका कठोर नियमन करना है।

मो० मा०, ११६

१० शिष्टाचार और सहन-शक्ति तो इस तरह की होनी चाहिए कि हमारी सस्कृति अपना स्वय परिचय दे।

प्रा० प्र०१, ३३५

खंड ६ : राजनीति

१—राजनीति और धर्म

१ जो लोग यह कहते है कि राजनीति से धर्म का कोई वास्ता नही, वे नही जानते कि धर्म का अर्थ क्या है।

आ० क०, १३७

२ मेरे लिए धर्म-रहित राजनीति बिल्कुल गदी चीज है, जिससे हमेशा दूर रहना चाहिए।

स० ई०, १३७

३ राजनीति मे भी हमे स्वर्ग का राज्य स्थापित करना होगा।

स० ई०, १३१

४ आज मनुष्य की सारी प्रवृत्तिया एक अविभाज्य वस्तु बन गई है। आप सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और धार्मिक कार्य को एक-दूसरे से अलग करके बिल्कुल अलग-अलग विभागो मे नही बाट सकते। मै मानवीय प्रवृत्ति से अलग किसी धर्म को नही जानता।

स० ई०, १३७

६ मेरी दृष्टि मे राजनैतिक सत्ता कोई साध्य नही है, वरन जीवन के प्रत्येक विभाग मे लोगो के लिए अपनी हालत सुधार सकने का वह साधन है।

सर्वो०, ८६

७ व्यक्ति के आत्मा होती है, परंतु, चूकि राज्य एक आत्मा-रहित मशीन होता है, इसलिए उससे हिंसा कभी नही छुडवायी जा सकती, उसका तो अस्तित्व ही हिंसा पर निर्भर है।

सर्वो०, ८४

८ यदि आदमी केवल यह अनुभव कर ले कि उन कानूनो को, जो

अन्यायपूर्ण है, मानना पौरुषहीनता है, तो किसी आदमी का अत्याचार भी उसे गुलाम न बना सकेगा। स्वराज्य की यही कुजी है।

हिं० स्व०, ८१

९ इस बात मे विश्वास करना एक अधविश्वास और परमात्मा मे अश्रद्धा की बात है कि बहुसख्या के काम अल्पसख्याओ को बाधते है।

हि० स्व०, ८१

१० जैसा नेता करेगे, जनता बदले मे खुशी से वैसा ही करेगी।

हिं० स्व०, ९५

११ जो चीज राजनैतिक है, उसमे सामाजिक और धार्मिक तत्त्व भी है।

खा०, २६४

१२ मै राजनीति और धर्म को एक-दूसरे से अलग नही समझता। सच्चा धर्म जीवन की हरएक प्रवृत्ति मे व्याप्त होना चाहिए।

म० डा०२, ११६

१३ आजकल की राजनीति अविश्वास से चल ही नही सकती।

प्रा० प्र०२, ३३४

२—राष्ट्र और राष्ट्रीयता

१ राष्ट्र एक दिन मे नही बनता, उसके निर्माण मे वर्षो लगते हैं।

हिं० स्व०, २५

२ जो आदमी राष्ट्रीयता की भावना को समझते है, वे एक-दूसरे के धर्म मे हस्तक्षेप नही करते। यदि ऐसा करते है तो वे एक राष्ट्र समझे जाने के योग्य नही है।

हिं० स्व०, ४८

३ दुनिया के किसी भाग मे भी राष्ट्रीयता और धर्म पर्यायवाची शब्द नही हैं। न कभी ऐसा भारत मे हुआ है।

हिं० स्व०, ४६

४ वह राष्ट्र महान है, जो मृत्यु-रूपी तकिये पर अपने सिर को विश्राम देता है। जो मृत्यु को ललकारते है, वे सब भयो से मुक्त रहते है।

हि० स्व०, ८२

५ एक अहिंसक राष्ट्र को दास बनानेवाली कोई बात नही है ।

ग्ली० वा० पी०, १६

६ रोम, यूनान, बेबीलोन, मिस्र और अन्य कई राष्ट्र इस बात के प्रमाण हैं कि अपने दुष्कर्मो से राष्ट्र का पहले भी नाश हुआ है ।

खा०, २३

७ प्रत्येक राष्ट्र की अपनी विशेषताए होती है और अपना व्यक्तित्व होता है ।

खा०, २३

८ व्यक्तियो की भाति राष्ट्रो का निर्माण भी केवल बलिदान के द्वारा हो सकता है, और किसी तरह नही ।

ऐ० वा०, २७

९ राष्ट्रीय रुचियो-अरुचियो का निर्णय बुद्धि से नही होता ।

ऐ० वा०, ६९

१० अहिंसक रूप से बने समाज या राष्ट्र को अपने ढाचे पर बाहर या भीतर के आक्रमण का सामना करने के योग्य होना चाहिए ।

रच० का०, २१

११ राष्ट्रो ने विकास और क्राति के द्वारा उन्नति की है । पहली उतनी ही आवश्यक है, जितनी कि दूसरी ।

सि० गा०, ३४

१२ जिस राष्ट्र मे असीम बलिदान की योग्यता है, उसीमे असीम ऊचाई तक उठने की क्षमता है । बलिदान जितना अधिक शुद्ध होता है, उतनी ही अधिक तीव्र उन्नति होती है ।

सि० गा० १७८

१३ राष्ट्रवादी हुए बिना कोई अतर्राष्ट्रवादी नही हो सकता । अतर्राष्ट्रवाद तभी सभव है जब राष्ट्रवाद सिद्ध हो चुके, यानी जब विभिन्न देशो के निवासी अपना सगठन करने और हिलमिल कर एकता-पूर्वक काम करने की सामर्थ्य प्राप्त करले ।

से० प० गा०, १५

१४. हमारी राष्ट्रीयता दुनिया के दूसरे राष्ट्रो के लिए खतरा नही

भौगोलिक स्वतत्रता नही है ।

वि० को० आ०, १५९

१३ जवतक वज्र-हृदय उसकी रक्षा के लिए मौजूद न हो, तवतक आजादी एक अत्यत दूपित वस्तु की तरह हे ।

गा० वा०, १८७

१४ स्वतत्रता इस ससार मे सवसे अधिक चचल और स्वच्छद स्त्री है । यह दुनिया मे सवसे वडी मोहिनी है । इसको प्रसन्न करना वडा कठिन काम है । यह अपना मदिर जेलखानो मे, तथा इतनी ऊचाई पर वनाती है कि जहा जाते-जाते आखो मे अधेरा छा जाता है ।

गा० वा, १९०

१५ धीमी स्वतत्रता के समान कोई चीज नही है । स्वाधीनता जन्म के समान है । जवतक हम पूर्ण रूप से स्वतत्र नही हो जाते, हम गुलाम है । तमाम जन्म एक क्षण मे होता है ।

सि० गा० १२९

१६ कोई भी आदमी अपनी दुर्वलताओ के कारण के विना अपनी स्वतत्रता नही खोता ।

सि० गा०, १२२

१७ स्वतत्रता एक राप्ट्र का दूसरे को उपहार कभी नही हो सकता । यह वह बहुमूल्य पदार्थ है, जिसको राप्ट्र के अति उत्तम रक्त से खरीदा जाता है । स्वराज्य तो निरतर परिश्रम और असीम कप्ट-सहन का फल होगा ।

सि० गा० १२१

१८ किसी की मेहरवानी मागना अपनी आजादी वेचना है ।

वा० आ०, १५१

१९ दूसरो को गुलाम वनानेवाला खुद गुलाम वन जाता है ।

प्रा० प्र०१, २८०

२० वाहर की दुनिया कहती है, हमने जो आजादी ली है, मिल गई है, वह शराफत से ली है, शराफत से मिली है । तो शराफत से

उसे हमे रखना भी चाहिए। गुडेबाजी से नही। गुडेबाजी से हम उसे गवानेवाले है।

प्रा० प्र०२, १७७

२१ आजादी का यह अर्थ हो नही सकता कि तूफान करे और अगर उनपर डडा चलाया जाय तो शिकायत करे।

प्रा० प्र०२, ११६

२२ आजादी के माने यह है कि हम बिना किसी दवाव के धर्म का पालन करे। धर्म की आजादी मिली है, अधर्म की नही। ईश्वर से कोई प्रार्थना थोडे करता है कि हमको झूठ वोलने दे। अगर हम ऐसा करते है तो हम शैतान की वदगी करते है, उसके पजे मे पडते है और गुलाम बन जाते है।

प्रा० प्र०२, २४४

२३ आजादी मिल जाने के वाद, हम सवको और भी मर्यादा के साथ बरतना चाहिए।

प्रा० प्र०२,२५८

२४ आजादी अनमोल वरकत है।

प्रा० प्र०२, २६२

४—स्वराज्य

१ जैसे हर देश खाने-पीने और सास लेने के योग्य है, वैसे ही प्रत्येक राष्ट्र अपना प्रवध आप करने के योग्य है, चाहे प्रवध कितना ही खराव हो।

सर्वो०, ८८

२ स्वराज्य सरकार एक हास्यास्पद चीज वन जायगी, अगर जीवन की हर छोटी वात के नियमन के लिए लोग उसके मुह की तरफ देखने लगे।

सर्वो०, ८८

३ स्वराज्य का अहिसक तरीका नया ही तरीका है।

सर्वो०, १७५

४ केवल परिपक्व विचारो के आदमी ही अपने-आप पर शासन करने

के योग्य होते है, न कि तेज स्वभाव वाले

हि० स्व०, २२

५ स्वराज्य का अर्थ देशवासियो मे से अत्यत दलित लोगो की स्वाधीनता है।

रि० अ०, १३

६ स्वराज्य उसके लिए हे, जो समझता है कि किसीका दिलाया हुआ स्वराज्य तो पराजय ही है।

गा० सा०, ५८

७ स्वराज्य मृत्यु के भय के त्याग का नाम है।

सि० गा०, १२८

८ स्वराज्य एक पवित्र शब्द है। वह एक वैदिक शब्द है, जिसका अर्थ आत्म-शासन और आत्म-सयम है।

मे० स० भा०, ७

९ स्वराज्य की रक्षा केवल वही हो सकती है, जहा देशवासियो की ज्यादा वडी सख्या ऐसे आदमियो की हो, जिनके लिए दूसरी सब चीजो से, अपने निजी लाभ से भी, देश की भलाई का ज्यादा महत्व हो।

मे० स० भा०, ६

१० स्वराज्य का सच्चा अर्थ यही है कि मानव अपनी शासन-सत्ता के अतर्गत स्वय सरलता से जीये ओर अपने आस-पास के लोगो को जिला सके।

अ० भा०, ३

११ अगर हम विदेशी रीति-रिवाज अपनाते है तो स्वदेशी राज की बात करना बेकार है।

प्रा० प्र०१, १९७

१२ स्वराज्य हिंदुस्तान का फेफडा है। अगर हमे जिदा रहना है, तो दूसरे की मदद से वह नही चलेगा।

प्रा० प्र०१, १९७

१३ स्वराज्य बुजदिल आदमियो के लिए नही होता।

प्रा० प्र०१, १९७

१४ हम दुनिया मे किसी को दुश्मन बनाना नही चाहते और न हम किसी के दुश्मन बनना चाहते है, यह मेरी व्याख्या का स्वराज्य है।

प्रा० प्र०१, ४३८

१५ भगवान के दर्शन तो स्वराज्य मे ही है।

प्रा० प्र०१, ४३८

५—प्रजा-तत्र

१ केवल अहिसा-शास्त्र ही किसी देश को शुद्ध प्रजातत्र की ओर ले जा सकता है।

फा० पै०, ८

२ मेरी कल्पना का प्रजा-तत्र वह है, जिसमे अत्यत दुर्बल लोगो को वही अवसर प्राप्त हो जो कि अत्यत बलवानो को प्राप्त है।

फा० पै०, ८९

३ लोक-तत्र को बलपूर्ण साधनो के द्वारा विकसित नही किया जा सकता। लोकतत्र की भावना को बाहर से लागू नही किया जा सकता; इसे तो भीतर से ही आना पडता है।

सि० गा०, ४१

४ जनता का बहुत बडा समुदाय जो बात चाहता हो, उसे कर देने के लिए जनता के प्रतिनिधियो को किसी भी तरह से डरने की जरूरत नही।

अ० झा०, ३९

५ अनुशासन और विवेकयुक्त जन-तत्र दुनिया की सबसे सुदर वस्तु है।

मे० स० भा०, १७

६ लोक-तत्र और हिसा का मेल नही बैठता।

मे० स० भा०, १८

७ जन्मजात लोकतत्रवादी जन्म से ही अनुशासन पालनेवाला होता है। लोकतत्र की भावना कुदरती तौर पर उसीमे विकसित होती है, जो सामान्यत समस्त मानवीय अथवा ईश्वरीय कानूनो को स्वेच्छा से

पालने का आदी हो जाता है।

मो० मा० ११७

८ लोकतत्र की भावना कोई यात्रिक वस्तु नही है, जिनका विकास शासन के बाहरी रूपो का अत करने से हो जाय। उसके लिए हृदय-परिवर्तन आवश्यक होता है।

मो० मा०, ११७

९ अनुशासन-बद्ध ओर जाग्रत लोकतत्र ससार की सुदर-से-सुदर वस्तु है। पूर्वाग्रहो से जकडा, अज्ञान मे फसा हुआ तथा अधविश्वासो का शिकार बना हुआ लोकतत्र अराजकता और अधा-धुधी के दलदल मे फस जायगा और खुद ही अपना नाश कर लेगा।

मो० मा०, ११८

१० बाहरी नियत्रणो के तनाव मे लोकतत्र टूट जायगा। वह केवल विश्वास के बल पर ही टिक सकता है।

मो० मा०, ११८

११ वही मनुष्य सच्चा लोकतत्रवादी है, जो शुद्ध अहिंसक साधनो द्वारा अपनी स्वतत्रता की रक्षा करता है और इसलिए जो अपने देश की, तथा अत मे सारी मानव-जाति की, स्वतत्रता की भी अहिंसक साधनो से रक्षा करता है।

मो० मा०, १२०

१२ लोकतत्र के सिद्धातो पर चलनेवाले राज्य मे लोग भेडो की तरह व्यवहार नही करते। लोकतत्र मे व्यक्ति के मत और कार्य की स्वतत्रता की सावधानी से रक्षा की जाती है। इसलिए मेरी यह मान्यता है कि अल्पमत को बहुमत से भिन्न आचरण करने का पूरा अधिकार है।

मो० मा०, १२१

१३ जो राष्ट्र अमर्यादित त्याग और बलिदान करने की क्षमता रखता है, वही अमर्यादित ऊचाई तक उठने की क्षमता रखता है। बलिदान जितना अधिक शुद्ध होगा, प्रगति उतनी ही अधिक तेज होगी।

मो० मा०, १२६

१४ जनतन्त्र वह है, जिसमे रास्ता चलनेवाला भी जो बोले, वह सुना जाय ।

प्रा० प्र०१, १८

१५ यह कहावत कि 'यथा राजा तथा प्रजा' उतनी सत्य नही है, जितनी यह वात कि 'यथा प्रजा तथा राजा ।'

प्रा० प्र०१, १४२

१६ प्रजातन्त्रात्मक राज मे राजा और मेहतर की कीमत एक-सी रहनेवाली है । मनुष्य के नाते दोनो की कीमत एक ही रहेगी, पर दोनो की वुद्धिमत्ता मे भेद हो सकता है ।

प्रा० प्र०१, १५७-५८

१७ लोकशाही मे हर आदमी को समाज की इच्छा यानी राज की इच्छा के मुताविक चलना होता है और उसी के मुताविक अपनी इच्छाओ की हद बाधनी होती है । स्टेट लोकशाही के द्वारा और लोकशाही के लिए राज चलाती है । अगर हर आदमी कानून अपने हाथ मे ले ले, तो स्टेट नही रह जायगी । यह आजादी को मिटा देने का रास्ता है ।

प्रा० प्र०१, ३१८-१९

१८ हमारी हुकूमत आज तो ऐसी ही है कि जिसको हम बना सकते है, उसको हम मिटा सकते है । इसका नाम डेमोक्रेसी है ।

प्रा० प्र०१, ३६१

१९ आजादी का मतलव होना चाहिए लोक-राज । लोक-राज का अर्थ है कि हर शख्स को बुद्धि पाने का मौका मिले । वुद्धि का अर्थ केवल जानकारी से अलग है ।

प्रा० प्र०२, ८६

२० सच्चे प्रजातन्त्र मे हमारे यहा किसानो का राज्य होना चाहिए ।

प्रा० प्र०२, १२४

२१ अगर हम हिंदुस्तान मे पचायत राज्य या लोगो का राज्य चाहते है, तो सव लोगो को उस काम मे मदद देनी है । वह कोई हवा मे से तो आता नही है और न हिमालय से चलकर आता है । वह तो यहा की जनता के द्वारा ही हो सकता है । जनता एक तरह की नीव है, जिसपर हम

एक वहुत ऊचा मकान वना सक्ते हैं।

प्रा० प्र०२, २२८

२२ प्रजा-सत्ता वन गई, इसका मतलव यह नही है कि राज दिल्ली से चले। अगर वैसी सत्ता वन जाती है तव तो वह प्रजा के मार्फत ही वनेगी और उसमे देहात के लोग रहेगे।

प्रा० प्र०२ २७३

२३ तलवार के जरिये पचायत-राज नही हो सकता।

प्रा० प्र०२, २७३

६—लोकमत

१ लोकमत मे वडी प्रचड शक्ति है। अभी हमारे यहा इस शब्द का अर्थ पूरे जोर से प्रकट नही हुआ है, पर अगरेजी मे उस शब्द का अर्थ जोरदार है। अगरेजी मे इसे 'पब्लिक ओपीनियन' कहते है और उसके सामने वादशाह भी कुछ नही कर सकता।

प्रा० प्र०१, १४३

२ यदि हमारे लोकमत मे सच्ची वहादुरी और सच्चाई नही आई, तो उससे कुछ वननेवाला नही है।

प्रा० प्र०१, १४३

३ अगर लोकमत जाग्रत रहता है तो सवका अच्छा ही होने वाला है।

प्रा० प्र०१, १४४

४ जो जगत है, वह पच के समान है। इसलिए जो जगत कहता है, वही सही तरीके से ईश्वर का न्याय है।

प्रा० प्र०२, ७६

५ प्रजातत्र या लोकशाही मे एकमात्र ताकत लोकमत की होती है।

मे० स० भा०, २८९

६ लोकमत ही एक ऐसी शक्ति है, जो समाज को शुद्ध और स्वस्थ रख सकती है।

मे० स० भा०, ३२७

७ लोकमत से आगे वढकर कानून वनाना प्राय निरर्थक ही नही, उससे भी ज्यादा बुरा सिद्ध होता है।

मे० स० भा०, ३२७

७—समालोचना

१ अगर हम खुद को अपने शत्रु की स्थिति मे रखकर उसके दृष्टि-कोण को समझे तो ससार के तीन-चौथाई दुख-दर्द और गलतफहमिया मिट जाय। तब या तो हम अपने शत्रु के साथ जल्दी सहमत हो जायगे या उसके बारे मे उदारतापूर्वक विचार करेगे।

सर्वो० ६६

२ विरोधियो के प्रति शिष्टता और उनका दृष्टिकोण समझने की उत्सुकता अहिंसा का क-ख-ग है।

ऐ० वा०, १३६

३ एक-दूसरे के दोष देखने मे किसी का लाभ नही है।

अ० भा०, ६

४ हमे पहले अपना हृदय टटोलना चाहिए। बाद मे दूसरे की आलोचना करनी चाहिए। शायद ही कोई सर्वांगपूर्ण होने का दावा कर सके।

अ० भा०, १४

५ कभी-कभी हम अपने विरोधी के द्वारा ही ऊपर चढते हैं।

वि० कौ० ग्रा०, ३५

६ आलोचना करने के अधिकार के लिए हममे स्पष्ट समझ और सहिष्णुता की शक्ति होनी चाहिए।

बा० प० मी०, ५६

७ पवित्रता दूसरो के आक्षेपो से लज्जित नही होती, वल्कि विशेप वल प्राप्त करती है।

गा० सा०, १२४

८ जगत की सारी आलोचना को सोने के काटे से न तोलकर लोहे

या पत्थर तोलने के काटे का उपयोग करना चाहिए। उसमे मन-आधे-मन का तो हिसाव तक नही होता।

वा० प० प्रे०, १८५

९ प्रकृति ने हमे ऐसा वनाया है कि हम अपनी पीठ नही देख पाते, दूसरे लोग ही हमारी पीठ को देख सकते है। इसलिए वे जो कुछ देखते है, उससे लाभ उठाना हमारे लिए वुद्धिमानी की वात होगी।

मो० मा०, ३१

१० अपनी अल्पता का दर्शन महान वनने का आरभ है। अलग पडा हुआ समुद्र-विंदु अपने को समुद्र कहकर सूख जायगा। परतु अपनी विंदुता को स्वीकार करे, तो वह समुद्र की ओर प्रयाण करेगा और उसमे लीन होकर समुद्र वन जायगा।

वा० प० प्रे०, ४१

११ निंदा करना तो गिरे हुए को लात मारने के वरावर है।

म० डा०१न०, ३१२

१२ अगर किसी ने गदा काम नही किया और दूसरा कोई लाछन लगाता है, तो जी क्यो दुखाया जाय।

प्रा० प्रा०१, १४४

१३ हमे किसीकी बुराई नही करनी चाहिए, भला ही देखना चाहिए।

प्रा० प्र०१, १४४

१४ गालिया देना या स्तुति करना तो दुनिया का एक खेल है।

प्रा० प्र०१, १६६

१५ कडवी-से-कडवी टीका करनेवाले के पास हमारे विरुद्ध कोई-न-कोई सच्ची काल्पनिक शिकायत रहती है। अगर हम उसके साथ धीरज रखे, जव कभी मौका आवे उसकी भूल उसे वतावे, हमारी गलती हो तो उसे सुधारे, तो हम टीका करनेवाले को भी सुधार सकते है। ऐसा करने से हम कभी रास्ता नही भूलेगे।

प्रा० प्र०१, १५०

८—समाजवाद

१ हमारे समाजवाद और साम्यवाद का आधार अहिसा पर तथा मजदूर और पूजीपति, जमीदार और किसान सबके प्रेम-पूर्ण सहयोग पर होना चाहिए ।

सर्वो०, ११२

२ जैसे व्यक्ति के शरीर के सब अग बराबर होते है वैसे ही समाज-रूपी शरीर के सारे अग भी वराबर होते है। यह समाजवाद है ।

मे० स०, ६

३ समाजवाद की जड मे आर्थिक समानता है । थोडे लोगो को करोड और वाकी सव लोगो को सूखी रोटी भी नही, ऐसी भयानक असमानता मे राम-राज्य का दर्शन करने की आशा कभी नही रखी जा सकती ।

मे० स० ३३

४ समाजवाद का अर्थ है सर्वोदय ।

मे० स० ५६

९—धर्म-निरपेक्ष राज्य

१ हुकूमत का फर्ज है कि अपने यहा के सब लोगो की, चाहे वे विधर्मी ही हो, रक्षा करे ।

प्रा० प्र०१, १८०

२ हिंदुस्तान मे एक ही प्रजा रहेगी और वह हिंदुस्तानी प्रजा होगी ।

प्रा० प्र०१, १९२

३. कोई किसी धर्म का हो, लेकिन हिंदुस्तान का वफादार है, तो वह हिंदुस्तानी है। उसको यहा रहने का उतना ही हक है, जितना मुझ को है, भले ही उसके जातिवालो की तादाद बहुत छोटी हो। धर्म मुझको यही सिखाता है ।

प्रा० प्र०१, २९०

४ हुकूमत तो सब की है—हिंदू, मुसलमान, पारसी सब की ।

प्रा० प्र०२, १३२

५ हुकूमत तो सब लोगो के लिए बनाई गई है। अगरेजी शब्द तो उसके लिए 'सेक्युलर' है, अर्थात वह कोई धार्मिक सरकार नही है, या ऐसा कहो कि वह किसी एक धर्म की नही है।

प्रा० प्र०२, १३५

६ बेशक राज्य धर्म-निरपेक्ष होना चाहिये। उसमें रहनेवाले हर नागरिक को बिना किसी रुकावट के अपना धर्म मानने का हक होना चाहिए, जबतक वह देश के कानून को मानता हो।

सर्वो०, ६२

१०—शासन और शासक

१ महलो मे रहनेवाला आदमी राज्य नही चला सकता।

प्रा० प्र०१, ११६

२ हम लोग ऐसे बने हैं कि जो अपने काम की डुग्गी पिटवाता फिरता है और राज्य-कारण मे उछाले भरता है, उसको तो हम आसमान पर चढा देते है, लेकिन मूक काम करनेवालो को नही पूछते।

प्रा० प्र०१, १२४-२५

३. प्रेसीडेंट बहुत पढा-लिखा ही हो और उसे कई भाषाओ का ज्ञान हो, यह कोई जरूरी नही है।

प्रा० प्र०१, २०१

४ हकीकत मे राजा प्रजा का सबसे आला दर्जे का सेवक होता है। सेवक का धर्म है सबकुछ स्वामी को भेट कर देना और फिर जो कुछ बच जाय, उसे खाकर निर्वाह कर लेना।

प्रा० प्र०१, २०४

५ जो हुकूमत अपना गान करती है, वह चल नही सकती।

प्रा० प्र०२, १२३

६ सत्ता सच्ची सेवा मे से ही मिलती है। सत्ता पाकर बहुत बार इसान गिर जाता है। सत्ता पाने के लिए झगडा शोभा नही देता।

प्रा० प्र०२, २५३

७ हुकूमत तो हम है।

प्रा० प्र०२, ३०३

११—अपराध और अपराधी

१ अपराध को सोने की तराजू मे नही तौला जा सकता।

प्रा० प्र०१, ३१६

२ किसी ने अगर खून किया है, चोरी की है या डाकू बना है या कानून की पुस्तक मे जितने गुनाह लिखे है, उनमे से कोई एक किया है, तो मैं तो इन सबको एक किस्म की व्याधि मानता हू। वह एक मर्ज है। कोई गुनाह करने की खातिर गुनाह थोडे ही करता है।

प्रा० प्र०१, ४६१

३ अपराध मे दीनता होती है।

आ० क०, १४२

४ मनुष्य और उसका काम, ये दो भिन्न वस्तुए है। अच्छे काम के प्रति आदर और बुरे काम के प्रति तिरस्कार होना ही चाहिए। भले-बुरे काम करनेवालो के प्रति सदा आदर अथवा दया रहनी चाहिए।

आ० क०, २३७

५ कोई मनुष्य इतना बुरा नही होता कि कभी सुधर ही न सके।

सर्वो०, १०८

६ गुडे आकाश से नही टपक पडते और न वे भूतो की तरह जमीन से निकल आते है। वे समाज की कुव्यवस्था की ही उपज है और इसलिए उनके अस्तित्व के लिए समाज जिम्मेदार है।

सर्वो०, १००

७ चोर या अपराधी के प्रति दुर्भाव रखने या उसे सजा दिलवाने की कोशिश करने के बजाय हमे उसके हृदय के भीतर प्रवेश करने का प्रयत्न करना चाहिए। जिस कारण से वह अपराध करने लगा हो, उसे समझना चाहिए और उसका इलाज करने का प्रयत्न करना चाहिए।

सर्वो०, १३१

८ अपराधी को दी जानेवाली सजा के पीछे आखिर तो उसे सुधारने का ही हेतु होता है।

य० ग्र०, १२

९ मनुष्य अपराधी ठहरा कि फिर समाज ने तो उसे खो ही दिया समझिये।

य० ग्र०, १८

१० अपराध दूसरे रोगो के समान एक रोग है और वह प्रचलित सामाजिक व्यवस्था की उपज है। इसलिए वध-समेत समस्त अपराधो का एक रोग के समान इलाज होगा।

फा० पै०, २७

११ चोर या अपराधी तुम्हारे से भिन्न प्राणी नही है। निस्सदेह यदि तुम अपने भीतर खोज-प्रकाश डालो और अपनी आत्माओ को सूक्ष्म रूप से देखो तो तुम पाओगे कि तुम्हारे मे केवल अशो का अतर है।

फा० पै०, २८

१२ कोई आदमी अपराध इसलिए नही करता कि ऐसा करने मे उसे मजा आता है। अपराध उसके रोगी दिमाग की निशानी है।

दि० डा०, ११७

१३ साधारण अपराधी राज्य के कानूनो का, वे अच्छे हो या बुरे, भग ही नही करता, बल्कि उस भग के परिणामो से बचना भी चाहता है।

म० डा०१, ३६६

१४ 'अपराध' शब्द को ही हमें अपने शब्द-कोष से निकाल देना चाहिए, वरना हम सभी अपराधी है।

म० डा०२, २३५

१५ जो सरकार अपराध और सजा मे विश्वास करते हुए भी अपराधी को सजा नही देती, वह सरकार हुकूमत कहलाने लायक ही नहीं रहती।

वि० को० आ०, ५१

१२—न्याय

१ श्रेष्ठ न्याय तो यह है कि विपक्ष ने हमारी वात का जो अर्थ माना, वही सच माना जाय। हमारे मन मे जो है, वह खोटा अथवा अधूरा है। ऐसा ही दूसरा उत्तम न्याय यह है कि जहा दो अर्थ हो सकते हो, वहा दुर्वल पक्ष जो अर्थ करे, वही सच माना जाना चाहिए।

आ० क०, ५०

२ वकील का कर्तव्य दोनो पक्षो के वीच की खाई को पाटना है।

आ० क०, ११६

३ प्रतिपक्षी को न्याय देकर हम जल्दी न्याय पा जाते है।

आ० क०, १५८

४ सच्चा अर्थ-शास्त्र न्याय का अर्थशास्त्र है। लोग जितना न्याय करना और सदाचारी वनना सीखेगे, उतने ही सुखी होगे।

सर्वो०, ३८

५ कानूनी सिद्धात असल मे नैतिक सिद्धात ही है।

मे० स० भा०, ११

६ कानून से किसी मनुष्य को वदला नही जा सकता, समझाने से ही वदला जा सकता हे।

वि० कौ० आ०, १७५

७ नियम की आत्मा की रक्षा के लिए नियम के देह का, वाह्य स्वरुप का, त्याग करना पडता है।

वा० प० प्रे०, १६५

८ इसाफ से वाहर कुछ नही होना चाहिए।

प्रा० प्र०१, १४६

९ युग-युग मे नीति वदलती रहती है। जिनमे फर्क नही हो सकते, ऐसे कानून वहुत कम होते हे।

प्रा० प्र०१, २६८

१० जो आदमी कानून को अपने हाथो मे लेता है, वह गुनहगार

बनता है ।

प्रा० प्र०१, २६८

११ जो न्याय चाहते है, उन्हे न्याय करना भी होगा । उन्हे बेगुनाह और सच्चा होना चाहिए ।

प्रा० प्र०१, ३१७

१२ सच्चा तरीका दोस्ती का तो यह है कि हम हमेशा इसाफ पर रहे और शरीफ बने रहे । इस तरह करने से जगली और दीवाना भी आखिर मे सुधर जाता है ।

प्रा० प्र०१, ३६४

१३ न्याय हुकूमत के हाथो मे रहने दे, अपने हाथ मे न ले ले । वह वहशियाना काम होगा ।

प्रा० प्र०२, ३३४

१३—जेल

१ लज्जा जेल जाने मे नही, बल्कि चोरी करने मे है ।

आ० क०, ३२२

२ जेल जाना पडे तो उसे प्रायश्चित समझिए ।

आ० क०, ३२२

३ जहा लोग जेल इत्यादि के विषय मे निर्भय बन जाते है, वहाँ राजदड लोगो को दबाने के बदले उनमे शूरवीरता उत्पन्न करता है ।

आ० क०, ३८०

४ यदि मै यह कहू कि जेले अच्छी या बुरी व्यवस्थावाली पशुशालाए है, तो इसमे अतिशयोक्ति नही है ।

य० अ०, ११

५ सारी दुनिया मे जेल ही एक ऐसी सार्वजनिक सस्था है, जिसकी तरफ लोग सबसे अधिक लापरवाही दिखाते है ।

य० अ०, ११

६ मेरी निश्चित राय है कि जेलो के प्रबध मे यदि मनुष्यत्व का तत्त्व दाखिल किया जाय और जेलो के प्रबध के साथ जनता का सबध

१४—वहुसख्यक-अल्पसख्यक

१ जहा पर अल्पमत-वाले थोडे-से आदमियो का रक्षण सरकार नही कर सकती, वहा पर उस सरकार को वने रहने का कोई हक नही रहता ।

प्रा० प्र०१, १४७

२ जहा पर वहुमतवाले अल्पमतवालो को मार डाले, वह तो जालिम हुकूमत कहलायगी, उसे स्वराज्य नही कहा जा सकता ।

प्रा० प्र०१, १४७

३ सख्या-वल से मगरूरी आती है और मगरूरी से हमारा नाश हो जाता है ।

प्रा० प्र०१, २१२

४ कोई अपने को अल्प-सख्यक न माने । सव एक है ।

प्रा० प्र०१, २१७

५ अकलियत (अल्पसख्यक) के लिए सम्मान रखना अक्सरियत (वहुसख्यक) का भूपण है । उसका तिरस्कार करने से अक्सरियत पर दुनिया हसेगी ।

प्रा० प्र०१, ३३६

६ वहुमत के लिए अल्पमत से डरना, चाहे वह कितना ही ताकतवर क्यो न हो, वुजदिली की पक्की निशानी है ।

प्रा० प्र०१, ४४२

७ अगर हम अपने पडोसियो का स्व-मान नही रखते, चाहे वे गिनती मे कितने ही थोडे हो, तो हम खुद स्व-मान रखने का दावा नही कर सकते ।

प्रा० प्र०१, ४४३

८ अकलियत को, चाहे वह कितनी ही छोटी क्यो न हो, अपनी इज्जत और इसान को जो भी प्रिय और निकट लगता है, वह सव-कुछ वचाने के लिए डर रखने का कभी कारण नही रहा ।

प्रा० प्र०२, २३०

१०. अल्प-सख्यको का विलाप एक झूठा अभियोग है ।

इं० ६०, ५८

११ अन्त करण के मामलो मे वहुसख्या के नियम को कोई स्थान नही है ।

सि० गा०, ११६

१२ अत्यत श्रेष्ठ और अत्यत ठोस काम अल्पसख्यकता के जगल मे किया गया था ।

सि० गा०, ३४५

१३ हमे अल्पसख्यको को अपने पक्ष मे धीरज के साथ, समझा-वुझाकर और दलील करके ही लाने की कोशिश करनी चाहिए ।

मे० स० भा०, २३

१४ मेल और समझौता तो तभी हो सकता है जब कि ज्यादा वलवान पक्ष दूसरे पक्ष के जवाव की राह देखे विना सही दिशा मे वढना शुरू कर दे ।

मे० स० भा०, २६८

१५ अगर अल्पमत के अधिकारो का आदर करना हो तो वहुमत को अल्पमत वालो की राय का और कार्य का आदर करना चाहिए ।

मो० मा०, १२०

१६ जिन वातो का सवध अतरात्मा के साथ होता है, उनमे वहुमत के कानून के लिए कोई स्थान नही होता ।

मो० मा०, १२०

१७ वहुमत के शासन का उपयोग सकुचित है, अर्थात मनुष्य को तफसील की वातो मे वहुमत के सामने झुकना चाहिए । लेकिन वहुमत के चाहे-जैसे निर्णयो के अनुकूल वनने का अर्थ गुलामी होगा ।

मो० मा०, १२०

१५—भारत

१ भारत का भविष्य पश्चिम के अहिंसक मार्ग पर निर्भर नही करता जिसपर लाचार पश्चिम स्वयं थका हुआ दिखाई देता है । भारत का भविष्य ऐसे शांति के मार्ग पर निर्भर करता है जो सादे और पवित्र

ईश्वर-परायण जीवन का परिणाम है ।

मो० मा०, ६०

२ भारत का मिशन—जीवन-कार्य—दूसरे देशो से भिन्न है। भारत मे दुनिया से धार्मिक प्रतिष्ठा मागने की क्षमता है। इस देश ने स्वेच्छा से आत्मशुद्धि के लिए जो प्रयत्न किया है, उसकी मिसाल ससार मे कही नही मिलेगी ।

मो० मा०, ६०

३ भारत भोग-भूमि नही है, वह मूलत कर्मभूमि है ।

मो० मा०, ६१

४ मैं चाहता हू कि भारत इस बात को समझ ले कि उसके पास एक ऐसी आत्मा है, जिसका नाश नही हो सकता, जो हर प्रकार की शारीरिक कमजोरी पर विजय प्राप्त कर सकती है तथा जो सारे ससार के भौतिक सगठन का विरोध कर सकती है ।

मो० मा०, ६१

५ अगर भारत सत्य और अहिसा के जरिये लक्ष्य सिद्ध कर ले, तो वह विश्व-शाति की स्थापना मे बहुत बडी सहायता करेगा, जिसके लिए आज दुनिया के सारे राष्ट्र तरस रहे है। उस स्थिति मे भारत उस सहायता का थोडा बदला भी चुका सकेगा, जो दुनिया के राष्ट्र स्वेच्छा से उसे देते रहे है ।

मो० मा०, ६१

६ भारत की स्वतत्रता ससार के शाति और युद्ध से सबधित दृष्टिकोण मे जडमूल से परिवर्तन करेगी ।

मो० मा०, १८

७ भारत के स्वतत्र होने पर भी सेना की जरूरत तो रहेगी ही। मेरी अहिसा मे मैं इतनी शक्ति नही पाता, जिसमे लोग सेना की अनावश्यकता की बात मान ले, और सेना होगी तो सैनिक शिक्षण भी होगा ही ।

बा० प० प्रे०, २३६

८ आजाद हिंदुस्तान दुनिया को हिसा का एक नया पाठ नही

पढायगा । वह पहले ही बुरी तरह बेजार है ।

प्रा० प्र०१, ८६

९ अगर आजाद हिंदुस्तान में सभी अपने धर्म का प.लन करें, तो सारा हिंदुस्तान खुश हो सकता है ।

प्रा० प्र०१, ११६

१० हम तो हिंदुस्तान को समुदर ही रखें, जिसमें सारी गदगी बह जाय ।

प्रा० प्र०१, ३२१

११ जो हिंदुस्तान बिना तलवार उठाये आजाद हुआ, उसमें इतनी ताकत होनी चाहिए कि बिना तलवार के वह उसे कायम भी रख सके ।

प्रा० प्र० २, १६८

१२ हिंदुस्तान का फौजीकरण होगा तो वह बरबाद होगा और दुनिया भी बरबाद होगी ।

प्रा० प्र०२, १६८

खंड ७ : अर्थशास्त्र

१—अर्थशास्त्र

१ जो अर्थशास्त्र धन की पूजा करना सिखाता है, और कमजोरो को हानि पहुचाकर सबलो को दौलत जमा करने देता है, वह झूठा है और भयानक अर्थशास्त्र है। वह मृत्यु का दूत है। इनके विपरीत सच्चा अर्थशास्त्र सामाजिक न्याय की हिमायत करता है।

सर्वो०, ३६

२ जो अर्थशास्त्र किसी व्यक्ति अथवा राष्ट्र के नैतिक कल्याण को हानि पहुचाता है, वह अनैतिक है और इसलिए पापपूर्ण है।

मो० मा०, ७३

३ जो अर्थशास्त्र नैतिकता की और मानव-भावनाओ की उपेक्षा करता है, वह मोम के उन पुतलो की तरह है, जो जीवित-जैसे दिखाई देने पर भी जीवन-धारी मानवो की तरह प्राणवान नही होते।

मो० मा०, ७२

४ अर्थशास्त्र के क्षेत्र मे अहिंसा के कानून को ले जाने का अर्थ है उस क्षेत्र मे नैतिक मूल्यो को दाखिल करना। अतर्राष्ट्रीय व्यापार का नियमन करने मे इन भौतिक मूल्यो का ध्यान रखना जरूरी है।

मो० मा०, ७२

५ सच्चा अर्थशास्त्र सामाजिक न्याय की हिमायत करता है। वह समान भाव से सबकी भलाई का, जिनमे कमजोर भी शामिल है, प्रयत्न करता है, और सभ्य तथा सुदर जीवन के लिए अनिवार्य है।

मे० स०, ३८

६ देश की आर्थिक स्थिति और शिक्षा—दोनो विभाग सगे भाई

जैसे ही है। एक प्रश्न हल करेंगे, तो दूसरा अपने-आप हल हो जायगा।

अ० भा०, ३३

२—आर्थिक समानता

१ आर्थिक समानता का सच्चा अर्थ है जगत के सब मनुष्यो के पास एक-सी सपत्ति का होना, यानी सब के पास इतनी संपत्ति होना, जिससे वे अपनी कुदरती आवश्यकताए पूरी कर सके।

सर्वो०, ३६

२ मै अहिंसा के द्वारा, घृणा के विरुद्ध प्रेम की शक्ति का उपयोग करके लोगो को अपने विचार का बनाकर आर्थिक समता सपादन करूगा।

सर्वो०, १८२

३ आर्थिक समानता अहिसक आजादी की मास्टर-चाबी है।

रच० का०, २०

४ आर्थिक समानता के लिए काम करने का अर्थ पूजी और श्रम के बीच अनादि सघर्ष को समाप्त करना है।

रच० का०, २०

५ अहिसक शासन-प्रणाली तबतक असभव बात है, जबतक कि धनवानो और करोडो निर्धनो के बीच चौडी खाई दृढ है।

रच० का०, २१

६ एक बैरिस्टर को जितना पैसा मिलता है, उतना ही एक भगी को मिलना चाहिए।

प्रा० प्र० १, २८३

३—गाव और किसान

१ यदि माग हो तो इसमे कोई सदेह नही है कि हमारी अत्यत अधिक मागो की पूर्ति गावो से हो सकती है।

रच० का०, १५

२ बुद्धि तथा श्रम के विच्छेद का फल गाव की अपराध-पूर्ण उपेक्षा है।

रच० का०, १५

३ किसान या काश्तकार का स्थान पहला है, चाहे वह भूमिहीन मजदूर हो, चाहे मेहनत-मजदूरी करनेवाला भूस्वामी । खेती किसान पर ही निर्भर है, इसलिए न्याय की दृष्टि से जमीन का मालिक वही है, या होना चाहिए, न कि गैरहाजिर जमींदार ।

सर्वो०, १४७

४ स्वराज्य एक शक्तिशाली भवन है । अस्सी करोड हाथो को इसे बनाने के लिए काम करना है । किसान इनमें सबसे बडा भाग है ।

र्च० का०, २२

५ किसानो को सत्तात्मक राजनीति के लिए काम में नही लाना चाहिए ।

र्च० का०, २२

६ जो दो मुट्ठी खाता है, उसे चार मुट्ठी पैदा करना चाहिए ।

सर्वो०, १५०

७ सारासार का विचार करने पर इतना तो पता चलता है कि किसानो पर सारी दुनिया का आधार है ।

गा० सा०, ५६

८ किसान समझे कि अनाज बोना है, तो अपने ही पेट के लिए नही, सब लोगो के लिए ।

ग्रा० प्र०२, १७४

४—गो-पालन

१ गो-रक्षा मेरे लिए मनुष्य-जाति के विकास मे एक सबसे अद्भुत चमत्कारपूर्ण घटना है । यह मानव को अपनी स्वाभाविक मर्यादा से बाहर ले जाती हे ।

सर्वो०, ७६

२ गाय को ही देवता क्यो माना गया, यह मेरे लिए स्पष्ट है । भारत मे गाय मनुष्य का उत्तम साथी है । वह कामधेनु है । वह न केवल दूध देती है, बल्कि खेती भी उसीके कारण सभव हे । गाय मूर्तिमत करुणामयी कविता हे । इस नम्र और निरीह पशु की आखो से करुणा टपकती है । भारत के करोडो लोगो की वह माता है । गो-रक्षा का अर्थ

है भगवान की समस्त मूक सृष्टि की रक्षा । प्राचीन ऋपियो ने, भले वे कोई भी हो, गाय से इसका प्रारभ किया । निम्न श्रेणी के प्राणियो की पुकार और भी प्रबल है क्योकि वे मूक है ।

सर्वो०, ७१

३ जो हिंदू गाय की रक्षा करता है, उसे हरएक पशु की रक्षा करनी चाहिए । परतु सव वातो का विचार करते हुए हम सिर्फ इसलिए उसकी गो-रक्षा मे दोप न निकाले कि वह दूसरे जानवरो को नही वचा पाता ।

सर्वो०, ७७

४ आजकल तो गो-सेवा करने से ही मनुप्य के सिवा दूसरे सव प्राणियो की सेवा हो जाती है ।

स० ई०, ७३

५ रुपया देकर गाय को छुडवाने मे उसकी रक्षा नही है, वह कसाई को धोखा सिखाने का रास्ता है ।

गा० सा०, ५८

६ हिदुस्तान के पशु-धन को सभालने व वढाने का काम और गाय और उसकी सतान के साथ उचित वर्ताव करने का काम सियासी आजादी लेने के काम से कही ज्यादा कठिन है ।

प्रा० प्र०२, १००

७ गो-सेवा के वारे मे अपने दिल की बात कहू, तो आप रोने लग जायगे, और मैं रोने लग जाऊ--इतना दर्द मेरे दिल मे भरा हुआ है ।

गां० वा०, २६८

५—श्रम

१ मनुष्य-मात्र के लिए शारीरिक श्रम अनिवार्य है ।

य० म०, ७७

२ रोटी के लिए प्रत्येक मनुष्य को मजदूरी करनी चाहिए। शरीर से मेहनत करनी चाहिए । यह ईश्वरीय नियम है ।

य० म०, ७८

३ जो मजदूरी नही करता, उसे खाने का भी क्या अधिकार है ?

य० म०, ७१

४ जिसे अहिसा का पालन करना है, सत्य की आराधना करनी है, ब्रह्मचर्य को स्वाभाविक बनाना है, उनके लिए तो श्रम रामबाण का काम देता हे ।

य० म०, ८२

५ जिनके हृदय मे ईश्वर हर समय बसा हुआ है, उनके लिए श्रम ही प्रार्थना है । उनका जीवन सतत पूजा या प्रार्थना ही है ।

म० ई०, ४७

६ केवल मानसिक अर्थात बौद्धिक श्रम आत्मा के लिए है और वह खुद ही अपना पुरस्कार है । उसका मुआवजा कभी नही मागना चाहिए । आदर्श राज्य मे डाक्टर, वकील आदि अपने लिए काम न करके केवल समाज के लिए करेगे ।

म० ई०, १२५

७ काम पर जितना जोर दिया जाय, उतना हमेशा अच्छा है ।

स० ई०, १२६

८ क्षण-भर के विचार से प्रकट हो जायगा कि श्रमिक के पास वह पूजी है, जो पूजीपति के पास कभी नही हो सकती ।

सर्वो०, ५४

९ अगर पूजी ताकत है तो श्रम भी ताकत है । दोनो ही ताकतो का विनाश या रचना के लिए उपयोग किया जा सकता है । दोनो एक-दूसरे पर निर्भर है ।

सर्वो०, ५५

१० वास्तव मे श्रमिक जो पैदा करता है, उसका वही मालिक है । अगर मेहनत या श्रम करनेवाले बुद्धिपूर्वक एक हो जाय, तो उनकी ताकत का कोई मुकाबला नही कर सकता ।

सर्वो०, १११

११ श्रम पूजी से कही श्रेष्ठ है । मै श्रम और पूजी का विवाह करा देना चाहता । वे दोनो मिलकर आश्चर्यजनक काम कर

सकते है ।

सर्वो० ११४

१२ पूजी को मजदूरी का सेवक होना चाहिए, न कि स्वामी। मजदूरो को अपने कर्तव्य का भान कराना चाहिए, क्योकि उनका पालन करने से अपने-आप अधिकार मिल जाते है ।

सर्वो०, १४८

१३ मै इससे अच्छी ईश्वर-पूजा की कल्पना नही कर सकता कि उसके नाम पर गरीबो के लिए मै भी उसी तरह श्रम करू जैसे वे करते है ।

सर्वो०, १६२

१४ जी-तोड काम करना ही आलस्य से दूर रहना है ।

य० श्र०, ६

१५ मशीन आधुनिक सभ्यता का मुख्य प्रतीक है । यह एक बडे पाप का प्रतिनिधित्व करती है ।

हिं० स्व०, ९४

१६ श्रम ही धन है ।

खा०, ६

१७ सारी बुराई का कारण, उसकी जड, बेकारी है ।

खा०, ३२

१८ ईश्वर ने मनुष्य को पसीने की कमाई खाने के लिए बनाया है ।

खा०, ३२

१९ एक सस्कार-युक्त मानव-परिवार मे श्रम का अद्वितीय स्थान है ।

फा० पै०, १०५

२० शरीर-श्रम करके श्रमजीवी बनना धार्मिक और नैतिक जीवन का मुख्य साधन है ।

गा० सा०, ८९

२१ काम सब कठिनाइयो को हल कर देता

गा० सा०, ३९

२२ जिन हाथो मे घट्ठे न पडे हो, जिनमे कभी छाले ही न पडे हो, वे हाथ किस काम के !

वा० प० प्रे०, २३७

२३ प्रफुल्ल-चित्त से किया हुआ काम वढता है और फलदायी सिद्ध होता है ।

वा० प० प्रे०, ८७

२४ जो आदमी सव लोगो के सामान्य कल्याण के लिए परिश्रम करता है, वह जरूर समाज की ही सेवा करता है और उसकी आवश्यकताए पूरी होनी ही चाहिए ।

मे० स० भा०, ६३

२५ शरीर-श्रम के नियम का स्वेच्छा पूर्वक पालन करने से सतोप और स्वास्थ्य मिलता है ।

मे० स० भा०, ६४

२६ भगवान के नाम पर किया गया और उसे समर्पित किया गया कोई भी काम छोटा नही है ।

मे० स० भा०, ६७

२७ जो आदमी अपनी जीविका ईमानदारी से कमाना चाहता है, वह किसी भी श्रम को छोटा, यानी अपनी प्रतिष्ठा को घटानेवाला, नही मानेगा । महत्त्व की वात यह है कि भगवान ने हमे जो हाथ-पाव दिये है हम उनका उपयोग करने के लिए तैयार रहे ।

मे० स० भा०, १६३

२८ जो कुछ करे, सुव्यवस्थित करे या न करे । इसका प्रत्यक्ष दर्शन नित्य होता है ।

वा० आ०, २४७

२९ भगवान ने मृत्यु को वनाया है, इसलिए प्रत्येक मनुष्य का यह धर्म है कि वह काम किये विना खाना न खाय ।

ए० च०, १२७

३० प्रत्येक सच्चा कार्य मनुष्य को अमर बनाता है । मनुष्य के मर जाने के वाद उसका काम रुक जाता है, यह कहना गलत है ।

ए० च०, १३२

३१ जो लोग अपने उद्धार के लिए स्वय सचाई से मेहनत करते है, उन्हे ईश्वर अवश्य सहायता देता है ।

प० च०, १७३

३२ अगर दुखी लोग अपना दुख मिटाना चाहते है, दुख से सुख निकालना चाहते है , तो उन्हे काम करना ही चाहिए । दुखी को यह हक नही कि वह काम न करे और मौज करे ।

अ० का०, १२५

३३ पोषण के लिए जितना चाहिए उससे ज्यादा जो खाता है, वह चोरी करता है, क्योकि इसान गुजारे के लायक श्रम भी मुश्किल से ही करता है ।

म० ई०, ५०

३४ इसान को गुजारे से अधिक लेने का हक नही है । और जो मेहनत करते है, उन सबको उतना ही लेने का अधिकार है, जितने से शरीर कायम रहे ।

स० ई०, ५०

३५ विचार पूर्वक किया हुआ श्रम उच्च-से-उच्च प्रकार की समाज-सेवा है ।

श० श्र०, २९

३६ अगर हरएक आदमी अपने पसीने की कमाई पर रहे, तो यह दुनिया स्वर्ग बन जाय ।

श० श्र०, ३०

३७ बूते से बाहर मेहनत नही करनी चाहिए ।

बा० प० म०, ५९

६—मजदूर

१ जिस क्षण मजदूर अपना गौरव पहचान लेगे, उसी क्षण पैसे को अपना उचित स्थान मिल जायगा, अर्थात वह मजदूरो के लिए धरोहर बन जायगा, क्योकि श्रम पैसे से बडा है ।

सर्वो०, ११४

२ मजदूरो को राजनीतिज्ञो के हाथो मे राजनैतिक शतरज का मुहरा नही बनना चाहिए । उन्हे केवल अपने ही बल के आधार पर उस शतरज पर अपना प्रभुत्व कायम करना चाहिए ।

सर्वो०, ८५

३ अगर हमे करोडो श्रमिको के प्रति न्याय करना है, तो हमे उनका हक देना ही चाहिए ।

ख० १४७

४ किसी को अपने पूरे समय के काम का पूरा वेतन मिल जाता है तो उसे उसी समय मे अन्यत्र किये हुए काम के किसी मुआवजे की आशा नही रखनी चाहिए ।

ए० वा०, १४६

५ हमारी तमाम मुसीबते हमारी अकुशलता के कारण है । कुशलता आजाय तो अभी जो चीज हमे कष्टदायक-सी लगती है, वह आनददायी मालूम होने लगेगी ।

म० डा० १, १४०

६ मजदूर का कौशल ही उसकी सच्ची पूजी है ।

ह०, १७

७ मजदूर के लिए यह मानना सबसे बडा वहम है कि वह मालिको के सामने लाचार और असहाय है ।

ह०, १८

८ कोई काम करना हो तो उसके बारे मे हमे पूरा ज्ञान होना चाहिए ।

ए० च०, ६६

९ जो मजदूरो को योग्य मेहनताना नही देते और उनके परिश्रम का शोषण करते है, उनसे वस्तुए खरीदना या उन वस्तुओ का उपयोग करना पापपूर्ण है ।

मे० स० भा०, ७६

१० काम करनेवाला सीधा अपनी व्यावहारिक कठिनाई पर जा पहुचता है और उसे स्पष्ट दिखा देता है ।

गा० ना० स०, २६

११. दुर्भाग्यवश हमारा मन पूजी की मोहिनी से मुग्ध हो गया है, और हम यह मानने लगे है कि दुनिया मे पूजी ही सबकुछ है, लेकिन यदि हम एक क्षण के लिए भी गहरा विचार करे तो हमे पता चल जायगा कि मजदूरो के पास जो पूजी है, वह पूजीपतियो के पास कभी हो ही नही सकती ।

ह०, ७३

१२ मजदूरो को अपने बीच साप्रदायिकता को कोई जगह नही देनी चाहिए ।

प्रा० प्र०१, ३२०

७—पूजी और पूजीपति

१ मुनाफे के लिए मुनाफा नही किया जा सकता ।

२ सच्चा बनिया वह है जो सच्ची तौल तौलता है ।

प्रा० प्र०१, ११५

३ क्या धनिक लोग इतने कठोर और नास्तिक बन जाय कि ईश्वर को भी भूल जाय और अपने धन को ही परमेश्वर मानकर बैठ जाय ?

प्रा० प्र०२, २३

४ अगर अमीर गरीबो को घृणा से देखेगे तो वह धर्म नही, अधर्म हो जायगा ।

प्रा० प्र०२, २३

५ पैसे से किसी की कीमत नही होती ।

प्रा० प्र०२, ३३१

६ करोडपति भी काम न करे और खावे तो वह निकम्मा है, पृथ्वी पर भार है । जिस आदमी के घर पैसा भी है, वह भी मेहनत करके खाये, तब बनता है ।

प्रा० प्र०२, ३५५

८—यत्र

१ यत्रो का उतना उपयोग जायज है, जो सबकी भलाई के लिए हो ।

सर्वो०, ४६

२ मैं तमाम नाशकारी यत्रो का कट्टर विरोधी हू ।

सर्वो०, ४६

३ मुझे आपत्ति स्वय मशीनो पर नही, बल्कि उनके लिए पागलपन पर है ।

सर्वो०, ४६

४ वैज्ञानिक सत्यो और आविष्कारो को निरे लोभ के साधन नही रहना चाहिए ।

सर्वो०, ५०

५ मेरा उद्देश्य यत्रो का सर्वथा नाश नही, वरन उनकी सीमा बाधना है ।

सर्वो०, ५०

६ जो यत्र हमारा स्वामी बन जाय, उसका मैं सख्त विरोधी हू ।

सर्वो०, ५१

७ मशीन एक शरीर के समान है । वह तभी तथा उसी हद तक लाभदायक होती है, जबतक कि वह आत्मा के विकास मे सहायक होती है ।

हिं० स्व०, ६६

८ अगर भारत यत्रो का गुलाम बन जाता है तो मैं कहूगा कि भगवान जगत को भारत से बचाये ।

खा०, १८

९ श्रम का विकेद्रीकरण जितना अधिक होगा, औजार उतने ही अधिक सस्ते तथा सादे होगे ।

खा०, १३

१० यत्र का अच्छा उपयोग यही होगा कि वह मनुष्य के श्रम मे

मदद करे और उसे आसान वनाये ।

मो० मा०, ७८

९—हड़ताल

१ न्याय-प्राप्ति के लिए हडताल करना मजदूरो का जन्म-सिद्ध अधिकार है, परतु ज्योही पूजीपति पच का सिद्ध त मान ले, हडताल को अपराध समझना चाहिए ।

ह०, १५

२ हमारी सहानुभूतिपूर्ण हडतालो का उद्देश्य भी आत्मशुद्धि, अर्थात असहयोग, ही होना चाहिए ।

ह०, १०

३ शातिपूर्ण हडताल उन्ही लोगो तक सीमित रहनी चाहिए, जिन्हे वह कप्ट हो, जिसे दूर कराना है ।

ह०, ११

४ नाजायज हडताल को न तो कामयावी हासिल होनी चाहिए और न किसी हालत मे आम जनता की हमदर्दी मिलनी चाहिए ।

मे० स० भा०, ४१-४२

५ हर हडताल या अनशन उचित नही होता ।

अ० भा०, ५१

६ सत्याग्रही हडताल या और किसी प्रकार का सत्याग्रह तभी कर सकता है, जव इसाफ पाने के सव मामूली दरवाजे वद हो जाते है और इसाफ के वदले आप-खुदी चलती है ।

वा० प० स०, ३५४

७ हडताल का भी एक शास्त्र होता है । यो ही हडताल करने से कोई लाभ नही ।

प्रा० प्र०१, २८१

१०—स्वदेशी

१ जैसे हम वेहतर आव-हवा वाले देश के लिए अपने देश को छोड नही देते, वल्कि अपने ही जलवायु को सुधारने की कोशिश करते है, ठीक उसी तरह वेहतर या अधिक सस्ती विदेशी चीजो के खातिर हम स्वदेशी

को छोड नही सकते ।

खा०, ५७

२ प्रत्येक देश की प्रगति के नियमो का तकाजा है कि वहा के रहने-वाले अपने यह की ही पैदावार और माल को ज्यादा अपनाये ।

खा०, ५७

३ स्वदेशी का पुजारी अपने निकट के पडोसियो की सेवा मे अपने को समर्पण करना अपना पहला धर्म समझेगा ।

खा०, ५७

४ स्वदेशी-धर्म के पालन से कभी किसी को हानि नही हो सकती, और यदि होती है तो मानना चाहिए कि मै स्वधर्म से नही, बल्कि अहकार से प्रेरित हू ।

खा०, ५८

५ स्वदेशी मे स्वार्थ की कोई गुजाइश नही और अगर उसमे स्वार्थ है तो वह इतने उच्च प्रकार का है कि वह उच्चतम परोपकार से भिन्न नही है ।

खा०, ५८

६ अपने विशुद्ध हृदय मे स्वदेशी-धर्म का पालन चरम कोटि की विश्व-सेवा है ।

खा०, ५८

७ स्वदेशी का सच्चा भक्त विदेशियो के लिए अपने मन मे कभी दुर्भाव नही रखेगा ।

खा०, ६०

८ स्वदेशीवाद द्वेष का रास्ता नही है, वह नि स्वार्थ सेवा का सिद्धात है और उसकी जड विशुद्ध अहिंसा, अर्थात प्रेम, मे है ।

खा०, ६१

९ स्वदेशी वह है, जो आत्मा को भाता है ।

प्रा० प्र०१, १८४

११—चरखा और खादी

१ मैने तो चरखे को दरिद्र भारत की गरीबी मिटानेवाले के रूप

मे इतना अधिक मान लिया है कि उसकी मुझपर अद्भुत मोहिनी छा गई है।

य० अ०, ७९

२ चरखा स्वय एक कीमती मशीन है और मैंने अपने नम्र ढग से, भारत की विशेष परिस्थिति के अनुसार, उसमे सुधार करने का प्रयत्न किया है।

सर्वो०, ४६

३ चरखे का सदेश उसकी परिधि से कही ज्यादा व्यापक है। उसका सदेश सादगी, मानव-सेवा, अहिसामय जीवन तथा गरीब और अमीर, पूजी और श्रम, राजा और किसान के बीच अकाटच सबध स्थापित करना है।

सर्वो०, १६०

४ लाखो लोगो के लिए एकमात्र सार्वत्रिक उद्योग कताई ही है, और कोई नही।

खा०, १३

५ चरखा व्यापारिक युद्ध की नही, व्यापारिक शाति की निशानी है। उसका सदेश ससार के राष्ट्रो के लिए दुर्भाव का नही, वरन सद्भाव और स्वावलबन का है।

खा०, १७

६ भारत और ससार की रक्षा चरखे मे ही निहित है।

खा०, १८

७ चरखा तो लगडे की लाठी है—सहारा है। निर्धन स्त्रियो के सतीत्व की रक्षा करनेवाला किला है।

गा० वा०, १६७

८ खादी मानवीय मूल्यो की प्रतीक है, जबकि मिल का कपडा केवल भौतिक मूल्य प्रकट करता है।

खा०, ७८

९ खादी मजदूरो की सेवा करती है, मिल का कपडा उनका शोषण करता है।

खा०, ८२

१० खादी ऐसा ग्रामोपयोगी उद्योग है, जैसा और कोई उद्योग न तो है, न हो सकता है।

खा०, ९०

११ खादी की जड सत्य और अहिसा मे है।

खा०, १२२

१२ चरखे मे नीतिशास्त्र भरा है, अर्थशास्त्र भरा है और अहिसा भरी हे।

प्रा० प्र०२, २०२

१३ चरखा तो ग्राम-उद्योग का मध्य-बिंदु है। अगर सात लाख गावो मे चरखा न चले तो अन्य गृह-उद्योग भी नही चल सकते। चरखा तो सूरज है और दूसरे जो उद्योग है वे ग्रह हे, जो सूरज के इर्द-गिर्द घूमते रहते है। अगर सूरज डूब जाय तो दूसरे गह चल नहीं सकते, क्योकि वे सब सूरज पर ही आश्रित है।

प्रा० प्र०२, २२७

१२—दरिद्र-नारायण

१ गरीबो के लिए रोटी ही अध्यात्म है। हा, आप उनके पास रोटी लेकर जाइये, तो वे आपको ही अपना ईश्वर समझने लगेगे।

स० ई०, २५

२ मै उस ईश्वर की, जो सत्य है या उस सत्य की जो ईश्वर है, इन लाखो लोगो (गरीबो) की सेवा के द्वारा ही पूजा करता हू।

स० ई०, २६

३ भूखे मरनेवाले इसान को सबसे पहले पेट की सूझती है। वह रोटी के टुकडे के लिए अपनी आजादी और सबकुछ बेच देगा।

सर्वो०, १६३

४ भूख की पीडा से व्यथित और पेट भरने के सिवा और कोई इच्छा न रखनेवाले मनुष्य के लिए उसका पेट ही ईश्वर है। उसे जो रोटी देता है, वही उसका मालिक है। उसके द्वारा वह ईश्वर के दर्शन कर सकता है।

खा०, १३४

५ जहा गरीबो के लिए शुद्ध और सक्रिय प्रेम है, वहा ईश्वर भी है।

खा०, १३४

६ लोक-सत्ता के इस युग मे जबकि अमीर और गरीब, ऊच और नीच का भेद मिटाया जा रहा है, धनवानो का यह काम है कि वे अपने ऐश-आराम मे सयम रखकर, गरीबो को सतोष का जीवन बिताने का अवसर दे।

स्त्रि० स०, ६९

७ जिनकी वृत्ति गरीबी की है, उन्ही को स्वर्ग का राज्य मिलता है।

ऐ० बा०, ७१

८ निर्धनो का कोई वर्ग नही होता। जाति तथा धर्म की अपेक्षा के बिना वे अपने-आप ही एक पद-दलित वर्ग बनाते है। उनपर लादा हुआ धर्म नीच निर्धनता है।

ड्रि० ड्र०, ५६

९ मनुष्य-जाति ईश्वर को, जो वैसे ही नामहीन है और मनुष्य की बुद्धि की पहुच से परे है, जिन अनत नामो से पहचानती है, उनमे से एक नाम दरिद्रनारायण है। उसका अर्थ है गरीबो का या गरीबो के हृदय मे प्रकट होनेवाला ईश्वर।

मे० स० भा०, ५६

१० गरीबी मे धर्म का दर्शन करनेवाले और मिलने पर भी धन का त्याग करनेवाले लोग दुनिया मे इने-गिने ही पाये जाते है। असल मे धर्म के रूप मे स्वीकार की गई गरीबी ही सच्ची सपत्ति है।

मे० स० भा०, ६२

११ मैं भगवान की इससे अच्छी पूजा की कल्पना नही कर सकता कि उसके नाम पर मैं गरीबो के लिए गरीबो की ही तरह परिश्रम करू।

मे० स० भा०, १००

१३—ट्रस्टीशिप (सरक्षकता)

१ अहिसा मे विश्वास रखनेवाला होने के कारण मेरा ट्रस्टीशिप

(सरक्षकता) मे विश्वास है ।

सा०, ३०२

२ जब एक आदमी के पास अपने अनुरूप भाग मे अधिक हो, तो वह परमात्मा की सतान के लिए उस भाग का ट्रस्टी बन जाता है ।

फा० पै०, ६७

३ ट्रस्टी के पास करोडो रुपयो के रहते हुए भी उनमे की एक भी पाई अपनी नही होती ।

आ० क०, ००८

४ आर्थिक समानता की जड मे धनिक का ट्रस्टीपन निहित है । इस आदर्श के अनुसार धनिक को अपने पडोसी से एक कौडी भी ज्यादा रखने का अधिकार नही है ।

मे० स०, १३४

५ सरक्षकता की योजना मे जनता को केवल पूजीपतियो के धन का ही उपयोग करने को नही मिलता, बल्कि उनकी बुद्धि, योग्यता और कार्य-कुशलता का भी उपयोग करने को मिलता है ।

टु० न्यू० हो० ६८

६ मालिक ट्रस्टी बने, इसका अर्थ यह है कि अपनी कमाई का अमुक भाग रखकर बाकी सब गरीबो को, अर्थात राज्य को अथवा ऐसी ही लोकोपयोगी सस्था को दे दें ।

बा० प० प्रे०, २४८

७ मालिक अपनी सपत्ति का दुरुपयोग भी कर सकता है, मगर ट्रस्टी या रक्षक को तो बहुत ही सावधानी रखनी चाहिए । सौपी हुई सपत्ति का उसे अच्छे-से-अच्छा उपयोग करना है ।

म० डा०२, १७४

८ ट्रस्ट का अर्थ जिम्मेदारी है और मुझे तो यह पसद है कि मनुष्य अपनी जायदाद का ट्रस्टी बन जाय । जो ट्रस्टी बन जाता है वह मालिक नही कहा जाता । उसे तो रक्षक की हैसियत से, सपत्ति का जो कमीशन मिले उसीसे गुजर करनी चाहिए । ट्रस्ट का यही अर्थ है । जो ट्रस्टी रक्षक

होकर भक्षक वन जाता है, उसकी वात यह नही है।

म० डा०२, २०३

९ जो भी सपत्ति है वह ईश्वर की, खुदा की है। वह सर्व-शक्तिमान ईश्वर से मनुष्य को मिली है। आदमी के पास जो कुछ है, वह उसकी निजी सपत्ति है। किसी भी व्यक्ति के पास यदि उसकी अपनी जरूरत से ज्यादा जायदाद हो तो वह भगवान की, दुखी और गरीव सतान की, सेवा मे उसका उपयोग करने के लिए, उस जायदाद का ट्रस्टी है।

ए० च० ११६

१० धनवान लोग चाहे करोडो रुपये कमाये (वेशक केवल ईमानदारी से), लेकिन उनका उद्देश्य वह सारा पैसा सवके कल्याण मे समर्पित कर देने का होना चाहिए।

से० ह०, (१-३-४२) ६२

११ सरक्षक का जनता के सिवा दूसरा कोई उत्तराधिकारी नही होता। अहिसा पर आधारित राज्य मे सरक्षको का कमीशन नियत्रित और मर्यादित होगा। राजाओ और जमीदारो का दरजा दूसरे धनवानो-जैसा ही होगा।

ह० से०, (१२-४-४२) ११६

१२ मनुष्यो का भी यह सिद्धात होना चाहिए कि वे उतना ही अपने पास रखे, जिससे आज का काम चल जाय, कल के लिए वे चीजे इकट्ठी करके न रखे।

ह० से०, (२३-२ ४७) ३१

१३ अहिसक मार्ग यह है कि जितनी उचित मानी जा सके, अपनी उतनी आवश्यकताए पूरी करने के वाद जो पैसा वाकी वचे, उसका वह प्रजा की ओर से ट्रस्टी वन जाय। अगर वह प्रामाणिकता से सरक्षक वनेगा तो जो पैसा पैदा करेगा, उसका सद्व्यय भी करेगा। जव मनुष्य अपने-आपको समाज का सेवक मानेगा, समाज की खातिर धन कमायगा और समाज के कल्याण के लिए उसे खर्च करेगा, तव उसकी कमाई

मे शुद्धता आयगी ।

मे० स०, ३५

१४ सरक्षक वह हे जो अपने ट्रस्ट के कर्तव्यो को ईमानदारी से ओर श्रेष्ठतम हितो मे पूरा करता हे ।

अ० भा० ३००

१४—आजीविका और वेरोजगारी

१ जिन धधो की आदमी को अपने जीवन के लिए जरूरत हे, उन धधो मे ऊच-नीच का कोई भेद होता ही नही ।

ह० ०१

२ अहिसक धधा वह धधा है, जो वुनियादी तौर पर हिसा से मुक्त हो, और जिसमे दूसरो का शोपण या ईर्ष्या नही हो ।

मे० स०, ३६

३ जवतक एक भी सशक्त आदमी ऐसा हो, जिसे काम न मिलता हो या भोजन न मिलता हो, तवतक हमे आराम करने या भर-पेट भोजन करने मे शर्म महसूस होनी चाहिए ।

मे० स० भा०, ५१

४ जो ईमानदारी से धधा करते है, वे भी देश की सेवा करते हे । सेवा का दावा करनेवाले लोग भार-स्वरूप हो सकते है और धधा करके कमानेवाले लोग शुद्ध सेवक हो सकते हे ।

बा० प० प्रे०, २२६

५ ईमानदारी के साथ अपनी रोजी कमाने की इच्छा रखनेवाले के लिए कोई भी काम नीच नही है ।

शा० अ०, २६

६ अगर आदमी हर तरह की मेहनत-मजदूरी करने को तैयार रहे, तो ईमानदारी से रोटी कमाने का जरिया तो मिल ही जाता है ।

प्रा० प्र०, २५३

खण्ड ८ : शरीर और स्वास्थ्य

१—शरीर

१ देह केवल परमार्थ के लिए मिली है ।

य० म०, १२४

२ शरीर को एक अमानत समझकर यथासभव उसकी रक्षा करना रक्षक का धर्म है ।

बा० प० ज०, ८३

३ शरीर और मन के बीच ऐसा निकट सबध है कि एक की शुद्धता के साथ दूसरे का सवध ज्यादातर जुडा होता है ।

बा० प० ज०, २३६

४ शरीर-सवधी नियमो को हम कब तोडते है, इसका हमे पता नही चलता । और जो सिद्धात इसान के बनाये कानून के बारे मे है, वही कुदरत के कानून के बारे मे भी है कि अज्ञान कोई बचाव नही है ।

म० डा०१, ३१४

५ शरीर अथवा जड-तत्व का भी उपयोग तो है ही । उसीके द्वारा आत्मा की अभिव्यक्ति हो सकती है ।

म० डा०१न०, ३२२

६ ईश्वरीय वरदान, अर्थात शरीर, की अवहेलना करने से ईश्वर नाराज हुए बिना नही रहेगा ।

अ० भा०, १

२—स्वास्थ्य

१. कितने ही काम होने पर भी जैसे हम खाने का समय निकाले बिना नही रहते, वैसे ही व्यायाम का समय भी हमे निकालना चाहिए ।

आ० कु०, २०२

२ मनुष्य को स्वस्थ या अस्वस्थ करने मे मन का हिस्सा कौन कम होता है ।

आ० क०, ४२४

३ प्रकृति का नियम स्वास्थ्य है, बीमारी नही ।

स० ई०, १३८

४ किसी भी अस्वस्थ जाति के लिए स्वराज्य लेना असभव है ।

सर्वो०, १५५

५ बीमारी का अच्छे-से-अच्छा उपयोग यह है कि भगवान पर आस्था बढाना और स्वभाव काबू मे रखना ।

बा० प० ज०, २४१

६ सोना-बैठना, खाना-पीना सब नियमित हो, तो बीमार पडने की नौबत ही न आये ।

ए० च०, १५७

७ स्वास्थ्य की बात को भी व्यापार की बात-जैसा समझना आवश्यक है ।

गा० छ०, १४६

३—आहार

१ जैसा आहार, वैसा उद्गार—मनुष्य जैसा खाता है, वैसा बनता है ।

आ० क, २३४

२ मनुष्य बालक के रूप मे माता का जो दूध पीता है, उसके सिवा उसे दूसरे दूध की आवश्यकता नही है । हरे और सूखे वन-पक्व फलो के अतिरिक्त मनुष्य का और कोई आहार नही है । बादाम आदि चीजो मे से और अगूर आदि फलो मे से उसे शरीर और बुद्धि के लिए आवश्यक पूरा पोषण मिल जाता है ।

आ० क०, २३४

३ जो मनुष्य ईश्वर से डरकर चलना चाहता है, जो ईश्वर के प्रत्यक्ष दर्शन करने की इच्छा रखता है, ऐसे साधक और मुमुक्षु के लिए अपने आहार का चुनाव—त्याग और स्वीकार—उतना ही आवश्यक है, जितना

कि विचार और वाणी का चुनाव—त्याग और स्वीकार—आवश्यक है।

आ० क०, २३५

४ मौज-मजे के लिए गुड की एक डली भी न मागो, न लो, परतु औषधि के तौर पर महगे-से-महगे अगूर भी मिल सके तो प्राप्त करने मे कोई बुराई नही दिखाई देती।

बा० प० ज०, ८३

५ जो कुछ तुम खाओ, औषधि समझकर खाओ, स्वाद के लिए नही। औषधि मे जो स्वाद निकलता है, वही सच्चा स्वाद और पोषण है।

बा० प० ज०, २४३

६ सारे धर्म का निचोड भोजन मे ही मान बैठना, जैसा भारत मे अक्सर किया जाता है, उतना ही गलत है, जितना भोजन-सबधी सारे सयम की उपेक्षा करना और मनमाना खाना-पीना है।

सर्वो०, १८

७ यह बात बिना किसी अतिशयोक्ति के भय के कही जा सकती है कि ऐसे देश मे मिठाइया तथा दूसरे स्वादिष्ट भोजन खाना डकैती के समान है, जिसमे करोडो आदमी साधारण पूरा भोजन भी नही प्राप्त करते।

शा० नै० आ०, १०

८ आहार जितना तामस होगा, शरीर भी उतना ही तामस होगा।

मे० स० भा०, १६७

९ कम खाने के कारण जितने लोग बीमार या कमजोर रहते है, उनसे अधिक लोग ज्यादा या गलत भोजन के कारण रहते है। अगर हम उचित भोजन चुन ले, तो यह देखकर आश्चर्य होता है कि कितनी थोडी-सी मात्रा काफी हो जाती है।

बा० प० मी०, २६३

४—शुद्धता और स्वच्छता

१ शुद्ध बनने का अर्थ है मन से, वचन से और काया से निर्विकार बनना, राग-द्वेष आदि से रहित होना।

आ० क०, ४३३

२ जहा भीतरी और वाहरी, दोनो तरह की सपूर्ण शुद्धता होती है, वहा वीमारी असभव हो जाती है ।

सर्वो० १७२

३ जवतक मेरे देशवासी सफाई नही सीखेगे, तवतक उनकी प्रगति नही होगी ।

दे० वा०, ८

४ एक सुव्यवस्थित समाज के नागरिक स्वास्थ्य और स्वच्छता के नियम जानते और पालते है ।

रच० का०, १८

५ यह कितनी गलत वात है कि हम मैले रहे और दूसरो को साफ रहने की सलाह दे ।

वा० आ०, १७१

६ पूरी सफाई रखने मे गरीवी कभी वाधक नही होती ।

ए० च०, १२६-२७

७ सफाई का काम खुद करना चाहिए । काम करने मे कोई शर्म नही है ।

प्रा० प्र०२, २३५

५—नीद

१ निर्दोष नीद लेने के लिए जाग्रत अवस्था मे हमारे आचार-विचार निर्दोप होने चाहिए। निद्रावस्था जाग्रत अवस्था को जाचने का दर्पण है ।

वा० प० प्रे०, १७

२ नीद तो पूरी लेनी ही चाहिए। पूरी नीद लेने पर उत्साह वढेगा ।

वा० प० प्रे० २१-२२

३ मनुष्य को खाने की अपेक्षा नीद की ज्यादा जरूरत होती है। खाने का उपवास फायदा करता है, लेकिन नीद का उपवास शरीर को घिस डालता है । उससे सिर घूमता है और मनुष्य अस्वस्थ हो जाता है ।

वा० प० प्रे०, ३५

४ शरीर को जरूरत हो उतनी ही नीद, उतनी ही खुराक वगैरा, ली जाय ।

ए० च०, ४८

६---मदिरा-पान और दुर्व्यसन

१ नैतिक दुराचारो का विचार करते समय खर्च का प्रश्न सामने लाना कोई शोभा नही है ।

य० अ०, १५

२ राज्य अपनी प्रजा के दुर्व्यसनो के लिए इतजाम नही करता ।

सर्वो०, १७३

३ शराबी पत्नी, माता और बहन का भेद भूल जाता है और ऐसे गुनाह कर डालता है, जिनपर वह अपनी शात अवस्था मे लज्जा अनुभव करता है ।

सर्वो०, १७३

४ शराब और नशीले द्रव्य, ये शैतान के दो हाथ है, जिनके प्रहारो से वह अपने असहाय गुलामो को बेभान और विमूढ बना डालता है ।

सर्वो०, १७४

५ जिन लोगो को नशे की चीजे खाने और पीने की लत पड गई है, उनका नैतिक स्वास्थ्य पूरा बरबाद हो जाता है ।

स्त्रि० स०, ४५

६ स्त्री के सिवा पत्नियो मे अपने पतियो की लत छुडाने की शक्ति और कर्तव्य की भावना और कौन जाग्रत कर सकता है ।

स्त्रि० स०, ४८

७ मै मदिरापान को चोरी और शायद वेश्यागमन से भी अधिक निदनीय समझता हू । क्या वह इन दोनो की जननी नही है ।

ह्रिं० ड्र०, ३

८ मदिरा-पान तथा मादक वस्तुए उनका पतन करती है, जिनको इनकी लत है, और उनका भी जो इनका व्यापार करते है ।

ह्रिं० ड्र०, ११

९ भारत के लिए अछूतपन के बाद अत्यंत शोचनीय वस्तु मदिरा

का अभिशाप ही है। पूर्ण शराववदी से कम कोई वात लोगो को इस अभिशाप से नही वचा सकती।

हिं० न०, २३

११ जो राष्ट्र मदिरा-पान की आदत का शिकार है, उसके सामने विनाश के सिवा और कोई वात नही है।

हिं० न०, २७

१२ शराव-वदी की समस्त कल्पना दड-विषयक नही, वल्कि शिक्षात्मक है।

हिं० न०, ४७

१३ यदि हम मदिरापान और मादक पदार्थो की आदतो के शिकार वने रहे तो हमारी स्वतत्रता गुलामो की स्वतत्रता होगी।

हिं० न०, ४९

१४ शराववदी मिल-मालिको को प्रत्यक्ष सहायता देती है। शराव-वदी से होने वाली कर की हानि को वे निस्सदेह पूरा कर सकते है।

हिं० न०, ५०

१५ शराववदी पहले और प्रधान रूप से एक नैतिक कर्तव्य है।

हिं० न०, ६१

१६ शराव पीने से शरीर और आतमा की वेहद दुर्दशा होती है।

अ० भा०, १०

१७ प्रजा को सस्कारी वनाने मे कदाचित सरकार को कुछ घाटा भी उठाना पडे, तो भी मै मानता हू कि आजादी के इस युग मे जन-तान्त्रिक सरकार को उतना सहन कर लेना चाहिए।

अ० भा०, ८१

१८ मदिरा-पान की तरह धूम्र-पान को भी मै भयकर वस्तु मानता हू। धूम्रपान मेरी दृष्टि मे एक दुर्व्यसन है। वह मनुष्य की अतरात्मा, को जड वना देता है और अक्सर मदिरा-पान से भी ज्यादा वुरा होता है, क्योकि वह अदृष्ट रूप मे काम करता है।

मो० मा०, ६१

१९ शराव जहर से भी ज्यादा वुरी है। जहर से शरीर ही मरता

है, शराब से तो आत्मा सो जाती है। खुद अपने ऊपर काबू पाने का गुण ही मिट जाता हे।

प्रा० प्र०२, २५६

२० शराब छोड देने से काम करनेवालो का शारीरिक बल और नैतिक बल दोनो बहुत बढ जाते है, और उनकी कमाने की ताकत भी बढ जाती है।

खड ९ : सत्याग्रह

१——सत्याग्रह

१ अन्याय के विरुद्ध सत्याग्रह सर्वोपरि शस्त्र है ।

आ० क०, ३७८

२ सत्याग्रह की लडाई पैसे से नही चल सकती । उसे पैसे की कम-से-कम आवश्यकता रहती है ।

आ० क०, ३७८

३ यदि सत्याग्रही अविनयी बनता है तो वह दूध मे जहर मिलने के समान है ।

आ० क०, ३७८

४ विनय सत्याग्रही का कठिन-से-कठिन अश है ।

आ० क०, ३४

५ सत्याग्रह का शुद्ध अत तभी माना जाता है जब जनता मे आरभ की अपेक्षा अत मे अधिक तेज और शक्ति पाई जाय ।

आ० क०, ३८१

६ सत्याग्रह आत्म-शुद्धि की लडाई है । वह धार्मिक युद्ध है । धर्म-कार्य का आरभ शुद्धि से करना ठीक मालूम होता है। उस दिन सब उप-वास करे और काम-धधा बद रखे ।

आ० क०, ३९८

७ सत्याग्रह मे विरोधी को हानि पहुचाने की हमने जरा भी कल्पना नही की है। सत्याग्रह का नियम यह है कि स्वय कष्ट उठाकर विरोधी पर विजय प्राप्त की जाय ।

सर्वो०, ८६

८ क्रोध या द्वेप-रहित कष्ट-सहन के सूर्योदय के सामने कठोर-से-

कठोर हृदय और घोर-से-घोर अज्ञान भी विलीन हो जायगा ।

सर्वो०, ८६

९ सक्रिय अहिसा का अर्थ ज्ञानपूर्वक कष्ट-सहन है। इसका मतलव यह नही कि दुराचारी की मरजी के सामने चुपचाप गर्दन झुका दी जाय, बल्कि इसका मतलव यह है कि आत्मा की मरजी के विरुद्ध अपनी आत्मा की सारी शक्ति को लगा दिया जाय ।

सर्वो०, ९६

१० सत्याग्रही का मार्ग साफ है। उसे सव प्रकार की विरोधी धाराओ के वीच खडा रहना चाहिए। न उसे अधी कट्टरता के प्रति अधीर होना चाहिए और न दवे हुए लोगो के अविश्वास पर चिढना चाहिए। उसका कष्ट-सहन कट्टर-से कट्टर धर्मांध के कठोर-से-कठोर हृदय को भी पिघला देगा ।

सर्वो०, ९६-९७

११ वल शारीरिक क्षमता से नही आता, वह अजेय सकल्प-शक्ति से आता है ।

सर्वो०, ९८

१२ सत्याग्रही का उद्देश्य अन्याय करनेवाले को दवाना नही होता, बल्कि उसका हृदय-परिवर्तन करना होता है ।

सर्वो०, ९८

१३ सत्याग्रही भय को सदा के लिए तिलाजलि दे देता है।

सर्वो०, १००

१४ सत्याग्रही अधिकारियो को परेशान करने के लिए जेल नही जाता, वल्कि अपनी निर्दोषता का प्रत्यक्ष प्रमाण देकर उनका हृदय-परिवर्तन करने के लिए जाता है ।

सर्वो०, १३७

१५ सत्याग्रही के नाते जेल के तमाम कष्ट और कोडे खाना आदि की हद तक दूसरे अन्याय भी आनद से सहन करने को तैयार रहना हमारा धर्म है ।

य० अ०, ७८

१६ सत्याग्रह मे पाखड के लिए कोई गुजाइश नही।

य० इ०, ३२.

१७ सत्याग्रह मे कैदियो का यह धर्म है कि वह जेल के तमाम उचित नियमो का पालन करे और मिला हुआ काम तो जरूर करे। असल मे सत्याग्रही के जेल जाने के बाद उसका नियम भग करने का काम समाप्त हो जाता है। कोई असामान्य कारण होने पर ही वह फिर शुरू किया जा सकता है।

य० इ०, ६१

१८ सत्याग्रह एक कठोर पदार्थ से बना हुआ है। इसमे न कोई बात अलग रखी हुई है और न गुप्त।

हिं० स्व०, १८८

१९ सत्याग्रह व्यक्तिगत कष्ट-सहन के द्वारा अधिकार-प्राप्ति का एक तरीका है। यह शस्त्रो के द्वारा मुकाबला करने का उलटा है।

हिं० स्व०, ७६८

२० सत्याग्रह अर्थात आत्मशक्ति अद्वितीय है। यह शस्त्र-शक्ति से बढिया है। फिर इसे निर्बलो का हथियार कैसे समझा जा सकता है!

हिं० स्व० ८१

२१ सत्याग्रह सब धारो वाली तलवार है। इसका किसी तरह भी प्रयोग किया जा सकता है। जो इसका प्रयोग करता है और जिसके विरुद्ध इसका प्रयोग किया जाता है, यह दोनो का मगल करता है। खून की एक बूद बहाये बिना यह दूरगामी परिणाम पैदा करता है।

हिं० स्व०, ८२

२२ जबतक शरीर अनुशासित न हो, तबतक सत्याग्रही बनना कठिन है।

हिं० स्व०, ८४

२३ बडे अनुभव के बाद मुझे यह मालूम होता है कि जो देश-सेवा के लिए सत्याग्रही बनना चाहते हैं उन्हे पूर्ण शील का पालन करना, निर्धनता को स्वीकार करना, सत्य का पालन करना और निर्भयता को पैदा करना

पडता है।

हिं० स्व०, ८४

२४ धन की लालसा और सत्याग्रह साथ-साथ नही चल सकते।

हिं० स्व०, ८५.

२५ सत्याग्रह का रहस्य गलती करनेवाले को गलती करने की तरफ आकृष्ट करने मे नही होता।

ग्ली० वा० फी०, १६.

२६ सत्याग्रही सदा बुराई को भलाई से, क्रोध को प्रेम से, झूठ को सच से और हिंसा को अहिंसा से जीतने की कोशिश करेगा। दुनिया को बुराई से पाक करने का और कोई उपाय नही है।

स्त्रि० स०, ५४

२७ सत्याग्रही का सबसे जोरदार हथियार जागा हुआ और समझदार लोकमत है।

स्त्रि० स०, ५५.

२८ सत्याग्रही अपना शरीर अच्छा ही रखता है।

बा० प० मी०, १०६.

२९ सत्याग्रह लोकमत को शिक्षा देने की एक ऐसी प्रक्रिया है, जो समाज के समस्त तत्वो को प्रभावित करके अत मे अजेय बन जाती है।

हरि० (३१-३-४३), ६४

३० सत्ता लेने के लिए सत्याग्रह हो ही नही सकता। सत्ता हाथ मे लेकर उसका त्याग करने मे सत्याग्रह हो सकता है ताकि वह सत्ता शुद्ध रूप मे कायम रहे।

म० डा०२, ३४३.

३१ सत्याग्रह का उद्देश्य लोगो को साहसी और स्वतत्र बनाना है।

म० डा०१न०, ३५.

३२ चुपचाप मार सहन करना तो सत्याग्रही का मत्र है, परतु वह दुख-निवारण की खातिर है।

म० डा०१न०, ४००

३३ जिस समय सत्याग्रह के दुराग्रह बन जाने की सभावना हो, उस

समय सत्याग्रह वद कर देने मे सच्चा सत्याग्रह चल पडता है। सत्याग्रह ऐसी सूक्ष्म वस्तु है कि वार-वार सशोधन और अनुभव करते-करते ही कुछ अशो मे उसका ज्ञान होता है।

म० डा०१ न०, ४१०

३४ सत्याग्रही होना तलवार की धार पर चलने के वरावर है।

म० डा०१ न०, ४११

३५ अन्याय के विरुद्ध न्याय करने का लोगो के पास सत्याग्रह का अतिम उपाय न हो, तव तो उनका नाश ही हो जाय। अधिक-से-अधिक निश्चित और ज्यादा-से-ज्यादा सुरक्षित ढग का उपाय सविनय प्रतिकार है।

म० डा०१ न०, ४४८

३६ सत्याग्रह की लडाई चरित्र-रूपी पूजी के विना असभव है।

सि० गा०, ७३५

३७ सत्याग्रह ऐसा कानून है जो सर्वत्र लागू किया जा सकता है। परिवार से आरभ करके दूसरे किसी भी क्षेत्र तक उसके उपयोग का विस्तार किया जा सकता है।

मे० स०, ४७

३८ सत्याग्रह से जो कुछ भी पाने-जैसा है वह सव पाया जा सकता है। सत्याग्रह वडे-से-वडा साधन है, हथियार है। मेरी राय मे समाजवाद तक पहुचने का इसके सिवा दूसरा कोई रास्ता नही है।

मे० स०, ५२

३९ सत्याग्रह का अर्थ ही यह है कि सत्याग्रही सारे ससार को प्रेम से अपने वश मे कर सकता है।

वि० कौ० आ०, १४३

४० सत्याग्रह का रहस्य ही यह है कि सत्याग्रही समूची दुनिया का मत अपनी ओर कर लेता है।

प्रा० प्र०१, ४९

४१ दुर्वलो के साथ अहिसा का कभी मेल वैठता ही नही। अत उसे अहिंसा के वजाय निष्क्रिय प्रतिरोध करना चाहिए।

प्रा० प्र०१, २१९

४२ हमको कुछ मिल जाय, इस उद्देश्य से जो सत्याग्रह करते है, वह सत्याग्रह नही हो सकता । वह तो असत्य का आग्रह होगा ।

प्रा० प्र०१, ३७४

४३ सत्याग्रह के लिए दो चीजे अनिवार्य है । एक तो यह कि जिस चीज के लिए लडते है वह सचमुच सत्य है, और दूसरे यह कि उसका आग्रह रखने मे अहिसा का ही उपयोग हो सकता है ।

प्रा० प्र०१, ३७५

४४ जो आदमी एक असत्य चीज म गता है और पीछे कहता है कि अहिसा से कर लेगा, वह कर नही सकता है ।

प्रा० प्र०१, ३७५

४५ यह सत्याग्रह मे बिल्कुल सही है कि चाहे जान चली जाय, पैसा चला जाय, लेकिन हारना नही । उसमे सत्य आ जाता है । असत्य काम करने से उसमे असत्य आ जाता है ।

प्रा० प्र०१, ४३२

४६ आजकल हथियारवद या दूसरी तरह के किसी भी विरोध को सत्याग्रह का नाम देना एक फैशन-सा हो गया है। इससे समाज का नुकसान होता है । अगर आप लोग सत्याग्रह के पूरे अर्थ समझ ले और जान ले कि सत्य और प्रेम के रूप मे जीता-जागता भगवान सत्याग्रह के साथ लगा रहता है, तो आपको यह मानने मे कोई हिचकिचाहट नही होगी कि सत्याग्रह पर कोई विजय नही पा सकता ।

प्रा० प्र०२, ८२-८३

२—असहयोग

१ असहयोग आत्मा की पीडा को प्रकट करने का अत्यत शक्तिशाली साधन है और एक बुरे राज्य के जारी रहने का जोरदार विरोध है ।

सर्वो०, १३५

२ बुराई से असहयोग करना भलाई से सहयोग करने कि बराबर ही मनुष्य का फर्ज है ।

य० अ०, १९

३ हिसा-वृत्ति से किया गया असहयोग अत मे दुनिया मे बुराई को

घटाने के वजाय वढाने का ही हथियार वन जाता है।

य० अ०, १९

४ असहयोग का वल तो कोई शिकायत न करके जेल जाने मे है।

य० अ०, २९

५ अनर्थ के काम का कोई लाभ न उठावे, यही अहिसक युद्ध का राजमार्ग है। इसी का नाम असहयोग है।

प्रा० प्र०१, ८७८

३—सविनय कानून-भग

१ लोग सविनय कानून भग करने योग्य वने, इसके पहले उन्हे उसके गभीर रहस्य का ज्ञान चाहिए। जो कानूनो को रोज जानवूझकर भग करते हो, वे अचानक सविनय कानून भग को कैसे समझ सकते है।

आ० क०, ४०७

२ आज्ञा-भग सविनय होने के लिए सर्वथा अहिसा होनी चाहिए। क्योकि उसके पीछे मूल सिद्धात यह है कि कष्ट-सहन करने से, अर्थात प्रेम से, विरोधी को जीता जाय।

सर्वो०, १३५

३ जवतक यह विश्वास कायम है कि आदमी को अन्याय पूर्ण कानूनो को पालना चाहिए, तवतक उनकी दासता कायम रहेगी।

हिं० स्व०, ८१

४ सामूहिक या व्यक्तिगत सविनय कानून-भग रचनात्मक कोशिश का सहायक और सशस्त्र विद्रोह का विरोधी है। सविनय कानून-भग के लिए ट्रेनिग भी उतनी ही आवश्यक है, जितनी कि सशस्त्र विद्रोह के लिए है।

रच० का०, ५

५ सविनय कानून-भग को स्वातन्त्र्य-जैसे आम काम के लिए प्रयोग मे कभी लाया नही जा सकता।

रच० का०, ७८

६ सविनय कानून-भग लडनेवालो के लिए एक प्रोत्साहन ओर

विरोधी के लिए एक चुनौती है ।

रच० का०, २९

७ व्यक्तिगत सविनय भग मे हरएक आदमी को व्यक्तिगत ढग से सविनय कानून-भग करने का अधिकार रहता है। हरएक आदमी अपना नेता बन जाता है और अपनी जिम्मेदारी पर काम करता है। वही अपना सेनापति और वही अपना सिपाही होता है । वह सब-कुछ जान-बूझकर ईश्वर के हाथो मे सौप देता है ।

म० डा० ३, ३१३

८ व्यक्तिगत सविनय भग करने के लिए भले ही दो-तीन आदमी ही निकले, एक आदमी भी निकले, तो वह भी अग्नि को प्रज्ज्वलित रखने के लिए काफी है ।

म० डा०३, ३१३

९ एक आदमी की सरदारी मे सौ आदमी इकट्ठे होकर भी व्यक्तिगत सविनय भग कर सकते है । व्यक्तिगत सविनय भग मे किसी भी मनुष्य की शक्ति या उत्साह को रोका नही जा सकता ।

म० डा०३, ३१५

१० व्यक्तिगत सविनय भग की खूबी तो इसमे है कि उसमे हार जैसी चीज ही नही रहती । कोई भी दुनियावी ताकत कितनी ही बलवान क्यो न हो, वह व्यक्तिगत सविनय भग करनेवाले को हरा नही सकती ।

म० डा०३, ३२०

११ सत्याग्रह मे व्यक्तिगत सविनय भग का शस्त्र अमोघ और अजेय है ।

म० डा०३, ३२१

४—बहिष्कार

१ सामाजिक बहिष्कार का उद्देश्य बहिष्कृत आदमी को चोट पहुचाना हरगिज न होना चाहिए । सामाजिक बहिष्कार का अर्थ इतना ही है कि कसूरवार आदमी के साथ समाज पूरी तरह असहयोग करदे । न इससे ज्यादा कुछ किया जाय और न कम ।

स्त्रि० स०, ५५

२ जो आदमी जानबूझकर समाज की परवाह नही करता, उसे कोई हक नही कि समाज उसकी सेवा करे ।

स्त्रि० स०, ५५

३ समाज का यह कर्तव्य है कि जो लोग समाज-बधन तोडे, उनके साथ निर्दयता का वर्ताव न किया जाय । बहिष्कार आदि भी अहिंसक होने चाहिए ।

स्त्रि० स०, ५६

४ दुर्भाव अथवा द्वेष-भाव से मैं एक भी विदेशी वस्तु के बहिष्कार का समर्थन नही करूगा ।

खा०, ५५

५—धरना

१ धरने मे दवाव हरगिज न डालना चाहिए, वल्कि समझा-बुझाकर दिल वदलना चाहिए ।

स्त्रि० स० ४४

२ जहा कही स्त्रियो ने धरने का काम अपने हाथ मे ले लिया है, वहा अगर पुरुष दखल देगे, तो वे आदोलन को नुक्सान पहुचायगे ।

स्त्रि० स०, ४८

३ जब एक नागरिक को राज्य के द्वारा सहायता न की जाय, तब धरना देना उसका वह कर्तव्य है, जिसे उसे पूरा करना चाहिए ।

ड्रि० ह्र०, ६८

४ पुलिस का पहरा यदि धरना नही है तो क्या है ?

ड्रि० ह्र०, ६८

५ जब एक धरना देनेवाला अपने किसी निर्वल भाई को मदिरा-पान की बुराई के विरुद्ध चेतावनी देता है, तो वह लज्जा अर्थात प्रेम का प्रभाव काम मे लाता है ।

ड्रि० ह्र०, ६९

६ धरना शराव के व्यापारी या शराबी के विरुद्ध विना हिंसा या दुर्भावना के प्रयोग मे लाया जाय, तो वह एक नैतिक कर्तव्य है ।

ड्रि० ह्र०, ७०

७ धरना काल के समान प्राचीन है। इसको कानूनी रूप देने की आवश्यकता नही है।

हि० ह०, ७३

८ धरना एक सुधारक का ऐसा अधिकार है, जिसे वह अपने प्रयोजन को छोडे बिना नही छोड सकता।

हि० ह०, ७३

९ शांति-पूर्ण धरना एक ऐसे आचरण के विरुद्ध कल्याणकारी चेतावनी है, जिसे एक सुधारक बुरा समझता है। जब यह इससे आगे चला जाता है और हिसापूर्ण बन जाता है, तब कानून बीच मे आ जाता है और आदमी की मानव-स्वाधीनता मे विघ्न डालने से रोकता है।

हि० ह० ७४

१० शिक्षात्मक पद्धति का धरना स्थायी बन गया है, क्योकि उसने अपनी उपयोगिता सिद्ध कर दी है।

हि० ह०, ७४

६—उपवास

१ मैला मन उपवास से शुद्ध नही होता।

आ० क०, २८

२ आसपास महामारी की हवा हो, तब पेट जितना हलका रहे उतना ही अच्छा है।

आ० क०, २५४

३ उपवास आदि से मुझपर तो आरोग्य और विषय-नियमन की दृष्टि से बहुत अच्छा प्रभाव पडा। फिर भी मै यह जानता हू कि उपवास आदि से सबपर इस तरह का प्रभाव पडेगा ही, ऐसा कोई अनिवार्य नियम नही है।

आ० क०, २६१

४ संयमी के मार्ग मे उपवास आदि एक साधन के रूप मे है, किंतु ये ही सबकुछ नही है। यदि शरीर के उपवास के साथ मन का उपवास न हो तो उसकी परिणति दंभ मे होती है और वह हानिकारक सिद्ध

होती है ।

आ० क०, २६१

५ लबे उपवास करनेवाले को खोई हुई ताकत झट प्राप्त करने या वहुत खाने का लोभ कभी न करना चाहिए ।

आ० क०, ३०२

६ मच्चा उपवान शरीर, मन और आत्मा की शुद्धि करता है। वह इन्द्रियो का दमन करता है और उस हद तक आत्मा को मुक्त करता है ।

स० ई०, ४८

७ सच्चा उपवास वह है, जिसके साथ शुद्ध विचारो को ग्रहण करने की तैयारी हो, और शैतान के सारे प्रलोभनो का विरोध करने का सकल्प हो ।

स० ई०, ४९

८ सपूर्ण उपवास पूरी तरह और अक्षरश आत्म-त्याग है। वह सच्ची-से-सच्ची प्रार्थना है ।

स० ई०, ५०

९ अन्न और जल का भी त्याग केवल समर्पण का प्रारभ है, अल्पतम भाग है ।

स० ई०, ५०

१० आमरण अनशन सत्याग्रह के कार्य-क्रम का अभिन्न अग है और खास परिस्थितियो मे वही सत्यागह के शस्त्रागार का सबसे बडा और रामवाण शस्त्र है। लेकिन अच्छी तरह तालीम पाये विना हर कोई ऐसा अनशन करने के योग्य नही होता ।

सर्वो०, १०२

११ उपवास से प्रार्थना की वृत्ति तेजी से जाग्रत होती है, अर्थात उपवास एक आध्यात्मिक कर्म है और इसलिए उसका रुख ईश्वर के प्रति होता है ।

सर्वो०, १०३

१२ जवतक अपने पक्ष के बिल्कुल स्पष्ट औचित्य के वारे मे अत्यत जवरदस्त आधार न हो, तवतक उपवास करना गलत है ।

य० अ०, २६

१३ जिस अवस्था मे खाना और जीना निर्लज्जतापूर्ण हो जाता है, उसी अवस्था मे सत्याग्रही उपवास करता है, और तभी वह उचित माना जाता है ।

य० अ०, ३१

१४ उपवास के बिना प्रार्थना नही होती और जो उपवास प्रार्थना का पूर्ण भाग नही है, वह केवल काया-क्लेश है, वह किसीका हित नही करता ।

ब्ली० बा० फी०, ९

१५ ठीक परिस्थितियो मे उपवास करना श्रेष्ठता के समान अपील है ।

फा० पै०, २३

१७ जो आदमी फल की आशा मे उपवास करता है, वह प्राय असफल होता है । और यदि वह प्रकट रूप से असफल नही भी होता, तो वह उस आतरिक आनद को खो देता है, जो कि सच्चे उपवास मे होता है ।

फा० पै०, २४

१७ बार-बार होने वाले उपवास यात्रिक क्रिया-जैसे हो जाते हैं । उनके पीछे पूर्ण विचार नही होता । इसलिए हर उपवास के चारो तरफ जाग्रति की जरूरत रहती है ।

स० ई०, १४

१८ उपवास का अर्थ है अपनी या दूसरे की आत्मा की शुद्धि के लिए किया हुआ सभी इद्रियो का दमन । अकेला भोजन छोडना उपवास नही माना जाता और बीमारी के इलाज के लिए किया हुआ आहार-त्याग तो उपवास मे गिना ही नही जा सकता ।

स० ई०, १४

१९ अनशन का अधिकार सभी को नही होता और अधिकार के बिना जो करते है, उनका तप अशास्त्रीय, अर्थात आसुरी है, इसलिए उनके पल्ले निरे कष्ट के सिवा और कुछ पडता ही नही ।

म० टा०, २१

२० तुच्छ हेतु से जो उपवास किया जाता है उससे किसी का भी भला नही होता। उसका उपवास करनेवाले के शरीर को कष्ट होने के सिवा और कोई असर नही होता।

म० डा०३, १७

२१ अनशन का हेतु केवल निर्णय बदलवाना नही, आपको उसे बदलवाने के प्रयत्न मे से जो जागृति और शुद्धि पैदा होनी चाहिए, उसे पैदा करना है।

म० डा०२, ५१

२२ शुद्ध उपवास भी शुद्ध धर्म-पालन की तरह है।

ब्र० भा०, ८३

२३ नपी-तुली खुराक और उपवास की उपयोगिता भी सीमित है। उनसे सदैव इच्छित फल प्राप्त नही होता है।

गा० छ०, १३२

२४ उपवास से लगाकर जितने सयमो की कल्पना की जा सकती हो, वे सब ईश्वर की कृपा के बिना बेकार हैं।

स० ई०, ४४

२५ उपवास मे भी नम्रता और सद्भाव है। लोग अपने खुद के प्रति अधीर हो, दूसरे के प्रति नही।

म० डा०२ २२६

२६ उपवास यदि ईश्वर-प्रेरित हो, तो वह लाखो आदमियो के हृदय हिला देगा। ऐसा नही होगा तो वह बेकार हो जायगा।

म० डा०२, २४६

२७ उपवास एक खास तरह का उपाय है। जबतक भीतर से साफतौर पर आवाज न आये, तबतक किसी को उपवास न करना चाहिए। इसलिए अनुकरण करके तो उपवास हो ही नहीं सकता।

म० डा०२, २५४

२८ उपवास किसी को भी अपने अत करण के विरुद्ध कुछ भी करने को मजबूर नही करता।

म० डा०२, २७५

२९ जीने के लिए खाना जितना जरूरी है, उतना ही उपवास भी जरूरी है। प्रार्थना का यह एक आवश्यक अग है । हम जीवित रहकर जितनी सेवा करते है, उतनी ही मरकर भी कर सकते है। मगर उपवास करने का अधिकार थोडो को होता है ।

म० डा०२, ३१३

३० मनुष्य निराशा से भी उपवास करने का विचार करता है, यह तो स्पष्ट आत्मघात कहा जायगा ।

म० डा०२, ३१३

३१ फाके का भी एक शास्त्र होता है । वगैर तरीके के फाका करने मे धर्म नही होता । अगर कोई कहे कि—जवतक ईश्वर मेरे सामने नही आयगा, तवतक मै भूखो मरूगा—तो वह मर भले ही जाय, पर ईश्वर उसे नही दीखेगा ।

प्रा० प्र०१, १७१

३२ ऐसा मौका भी आता है जव अहिसा का पुजारी समाज के किसी अन्याय के सामने विरोध प्रकट करने के लिए उपवास करने पर मजवूर हो जाता है । वह ऐसा तभी करता है, जव अहिसा के पुजारी की हैसियत मे उसके सामने दूसरा कोई रास्ता खुला नही रह जाता ।

प्रा० प्र०२, २८६

३३ उपवास तो आखिरी हथियार है । वह अपनी या दूसरो की तलवार की जगह लेता है ।

प्रा० प्र०२, २६०

खड १० शांति और सर्वोदय

१—युद्ध और शाति

१ एक भावी योद्धा के लिए ब्रह्मचर्य का पालन करना और निर्धनता से, वतौर अपने भाग्य के, सतुष्ट होना चाहिए ।

हिं० स्व०, ८६

२ समस्त ससार मे युद्ध के लिए शहरी आदमी ही जिम्मेदार है, न कि ग्रामीण ।

ग्ली० वा० फी०, १७

३ सेना का भार इतना कुचल देनेवाला और अनुत्पादक है कि वह देश के सारे धन का सफाया कर देता है ।

खा०, १६७

४ युद्ध मे फसी हुई दुनिया शाति के अमृत की प्यासी है ।

स्त्रि० स० ३५

५ निर्भीकताहीन किसी भी योद्धा की कल्पना नही की जा सकती ।

फा० पै०, १८

६ अणुबम ने उन श्रेष्ठतम भावनाओ को मार दिया है, जिन्होंने मानव-जाति को युगो से जीवित रखा है ।

फा० पै०, ८३

७ प्राचीन काल के योद्धाओ के युद्ध-नियम हितकर थे ।

फा० पै०, ८५

८ युद्ध-शास्त्र शुद्ध तथा स्पष्ट डिक्टेटरी की ओर ले जाता है ।

फा० पै०, ८६

९ हमारी सबकी शाति का सच्चा आधार तो अपने खुद के

ऊपर ही है ।

वा० प०, प्रे० ७६

१० सर्वनाश का जो खतरा दुनिया के सिर पर झूल रहा है, उससे वचने का इसके सिवा दूसरा कोई मार्ग नही है कि अहिसा की पद्धति को उसमे समाये हुए सारे भव्य अर्थो के साथ साहस पूर्वक और विना किसी शर्त के स्वीकार कर लिया जाय ।

मो० मा० ९२

११ अगर हथियारो के लिए आज की पागलभरी दौड, स्पर्धा, जारी रही, तो निश्चित रूप से उसका परिणाम ऐसे मानव-सहार मे आयगा, जैसा ससार के इतिहास मे पहले कभी नही हुआ । अगर कोई विजेता वचा रहा तो जिस राष्ट्र की विजय होगी, उसके लिए वह विजय ही जीवित मृत्यु-जैसी वन जायगी ।

मो० मा० ९२

१२ हथियारो का सच्चा त्याग तवतक सभव नही हो सकता जव-तक दुनिया के राष्ट्र एक-दूसरे का शोपण वद नही करते ।

मो० मा०, ९३

१३ कोई-न-कोई दिन ऐसा जरूर आयगा, जव जगत शाति की खोज करता-करता भारत मे आयगा और भारत तथा सारा एशिया समस्त ससार की ज्योति वनेगा ।

वि० कौ० आ०, १३२

१४ शाति से जो काम होता है वह झगडा-फसाद करने या गुस्से से नही होता ।

वि० कौ० आ०, १३२

१५ किसी भी धर्म का उद्धार करना हो, उसे ऊचा उठाना हो, तो विश्वव्यापी प्रेम ही उसका एकमात्र मार्ग है ।

वि० कौ० आ०, १५४

१६ अपवाद-स्वरूप परिस्थिति मे एक अनिवार्य वुराई के रूप मे युद्ध का आश्रय लेना पडता है ।

म० डा०१ न०, ६

१७ जो योद्धा लोग बाकायदा लडते है, उसमे भी विनाग ही होता है, हाथ कुछ भी नही आता ।

प्रा० प्र०१, ३०

१८ बचाव के लिए तलवार पकडने की बात की जाती है, पर आजतक मुझे दुनिया मे एक भी आदमी ऐसा नही मिला है, जिसने बचाव से आगे बढकर प्रहार न किया हो। बचाव के पेट मे ही वह पडा है।

प्रा० प्र०१, १५६

१९ शाति बाहर की किसी चीज से, जैसे दौलत से, महलो से, नही मिलती । शाति अपने अदर की चीज है । सब धर्मो ने इस सचाई का ऐलान किया है कि जब आदमी को इस तरह की शाति मिल जाती है तो उसकी आखो, उसके शब्दो और उसके कामो, सबसे वह शाति टपकने लगती है । इस तरह का आदमी झोपडी मे रहकर भी सतुष्ट रहता है और कल की चिता नही करता ।

प्रा० प्र०२, २६१

२० सिपाही तो वह है, जो सूखी रोटी और नमक मिलता है, उसको खाकर पेट भर लेता है ओर अपने धर्म का पालन करता है ।

प्रा० प्र०१, ३६६-६७

२१ भले आदमियो पर दुनिया चलती है, न कि हथियार रखनेवालो पर ।

प्रा० प्र०२ १६

२२ पवित्रता सबसे बडा हथियार होता है ।

प्रा० प्र०२, ३१

२—विश्व-बधुत्व

१ जिस क्षण हम मनुष्य-मनुष्य के बीच सच्ची और सजीव समानता फिर से स्थापित कर लेगे, उसी क्षण मनुष्य और सारी सृष्टि के बीच समानता स्थापित कर सकेगे ।

सर्वो०, ७६

२ शुद्ध होने पर व्यक्ति परिवार के लिए, परिवार गाव के लिए,

गाव जिले के लिए, जिला प्रात के लिए, प्रात राष्ट्र के लिए और राष्ट्र सारे ससार के लिए अपने को कुर्बान करता है।

सर्वो०, ६३

३ जिदा रहने का अधिकार भी हमे तभी मिलता है, जब हम ससार की नागरिकता का कर्तव्य-पालन करते है।

ऐ० बा०, १०६

४ एक अहिसक आदमी के लिए समस्त विश्व एक कुटुब है।

फा० पै०, ३८

५ जबतक जीव-मात्र के साथ एकता महसूस न हो, तबतक प्रार्थना, उपवास, जप-तप सब थोथी बाते है।

म० डा०१, ३४०

६ सजातीय और विजातीय की भावनाए हमारे मन की तरगे है। वास्तव मे हम सब एक परिवार ही है।

आ० क०, २३६

७ कूप-मडूक बनना छोडो तो हिदुस्तान एक कुटुब बन जाता है। अगर सब बधन गायब हो जाते है तो सारा ससार एक कुटुब बन जाता है। इन बधनो को पार न करने का मतलब यह है कि हम उन सद्-भावनाओ की ओर से, जो मनुष्य को मनुष्य बनाती है, कठोर बन जाते है।

प्रा० प्र०२, ६१

३—सर्वोदय

१ अहिसा का पुजारी अधिक-से-अधिक लोगो की अधिक-से-अधिक भलाई के उपयोगितावादी सूत्र को स्वीकार नही कर सकता। वह सब की अधिक-से-अधिक भलाई का प्रयत्न करेगा और इस आदर्श की सिद्धि के प्रयत्न मे प्राण भी दे देगा।

स० ई०, १२८

२ स्थायी शाति की सभावना मे विश्वास न रखना मानव-स्वभाव की ईश्वरोन्मुखता पर अविश्वास करना है।

स० ई०, १३३

३ वह देश सबसे ज्यादा समृद्ध है, जो अधिक-से-अधिक सख्या मे सज्जन और सुखी मानवो का भरण-पोषण करता है ।

सर्वो०, ३७

४ वकालत का पेशा करने का यह मतलव नही होना चाहिए कि एक देहाती वढई की मजदूरी से ज्यादा लिया जाय ।

सर्वो०, ४१

५ जीवन की आवश्यक वस्तुए आपको भी वैसे ही उपलब्ध होनी चाहिए जैसे राजाओ और धनिको को ।

सर्वो०, ४१

६ अगर भारत को स्वाधीनता का ऐसा आदर्श जीवन व्यतीत करना है जिससे ससार ईर्ष्या करे तो तमाम भगियो, डाक्टरो, वकीलो, शिक्षको व्यापारियो और दूसरे लोगो को दिन-भर के प्रामाणिक काम की एक-सी मजदूरी मिलेगी ।

सर्वो०, ४१

७ मेरी कल्पना की ग्रामीण अर्थ-रचना शोषण का सर्वथा त्याग करती है और शोषण हिंसा का सार है ।

सर्वो०, ४२

८ अहिंसक धधा वह धधा है, जो वुनियादी तौर पर हिंसा से मुक्त हो और जिसमे दूसरो का शोषण या ईर्ष्या न हो ।

सर्वो०, ४३

९ दस्तकारियो मे शोषण और गुलामी की गुजाइश नही होती ।

सर्वो०, ४४

१० मैं भी समय और श्रम वचाना चाहता हू, मगर मानव-समाज के एक अग के लिए नही, वल्कि सवके लिए ।

सर्वो०, ४६

११ व्यक्ति का खयाल सवसे ज्यादा रखा जाना चाहिए और प्रामाणिक मानव-दया का विचार, न कि लोभ उसका हेतु होना चाहिए । लोभ के स्थान पर प्रेम को वैठा दीजिए, फिर सव ठीक हो जायगा ।

सर्वो०, ५१

खंड ११ : विविध

१—इच्छा-स्वातत्र्य

१ हमे जो इच्छा-स्वातत्र्य प्राप्त है, वह खचाखच भरे जहाज के मुसाफिरो के इच्छा-स्वातत्र्य से भी कम है।

स० ई०, २४

२—ध्यान

१ यदि ध्यान की जरूरत हो तो वह अपने अतर मे से पाना होगा।

आ० क०, २०६

३—आशा-निराशा

१ आशा अमर है। उसकी आराधना कभी निष्फल नही होती।

बा० आ०, १४

२ निराशा केवल अपनी कल्पना मे बसती है।

बा० प० ज०, २३६

४—सहृदयता

१ सहृदयता की उपेक्षा करना यह भूल जाना है कि मनुष्य मे भावना है।

खा०, १४०

५—निष्कपटता

१ मनुष्य कब आत्म-वचना करता है और कब दभी बनता है यह वह स्वय नही जानता। आत्म-वचना मे दभ से भी ज्यादा बडा खतरा है।

म० डा०२, ४६

२ बदमाश आदमी दुनिया को लबे समय तक धोखा दे सकता है। दभी मनुष्य तो उससे भी ज्यादा धोखा दे सकता है।

म० डा०३, ३६

६—नि स्वार्थता

१ नि स्वार्थ व्यवहार से अत्यत कारगर नतीजा निकलेगा ।

सर्वो०, ३४

२ स्वार्थ का त्याग करने का अर्थ है अहता, मेरापन छोडना ।

ए० च०, १५

३ जिस मनुष्य की स्वार्थ-त्याग की इच्छा अपनी जाति से आगे नही बढती, वह अपने-आपको और अपनी जाति को स्वार्थी बना देता है ।

ए० च०, १७९

७—संतति-निरोध

१. मै लोगो को नपुसक या वध्या बनाने का कानून लागू करना अमानुषिक मानता हू । परतु जीर्ण रोगोवाले व्यक्तियो के बारे मे, वे रजामद हो तो उन्हे वैसा करना वाछनीय ही होगा ।

सर्वो० ७५

२ सतति-निरोध की आवश्यकता के बारे मे दो रायें नही हो सकती। परतु उसके लिए प्राचीन काल से ब्रह्मचर्य या सयम ही एकमात्र उपाय चला आया है ।

स० ई०, ११९

८—तलाक

१ मै स्वय तो अगर तलाक के सिवा दूसरा कोई उपाय न हो तो उसे बिना किसी सकोच के स्वीकार कर लूगा, मगर अपनी नैतिक उन्नति मे बाधा नही पडने दूगा, बशर्ते कि मै केवल नैतिक कारणो से ही सयम रखना चाहू ।

सर्वो०, ७४

२ अगर पुरुष को विवाह-विच्छेद का अधिकार हो तो स्त्री को भी होना चाहिए । लेकिन सामान्यत मै इस प्रथा का विरोधी हूं। प्रेम की गाठ अविभाज्य होनी चाहिए ।

बा० प० प्रे०, ३७

९—दहेज

१ जो युवक शादी के लिए दहेज की शर्त रखता है, वह अपनी तालीम को और अपने देश को वदनाम करता है।

स्त्रि० स०, ६९

२ यह हमारी वदकिस्मती है कि किसी लडकी से शादी करने की कीमत ऐठने की नीचता को निश्चित अयोग्यता नही समझा जाता।

स्त्रि० स०, ७०

३ विवाह, रुपये के खातिर मा-वाप का किया हुआ सौदा नही होना चाहिए।

स्त्रि० स०, ७०

१०—परदा

१ परदा वहम ही नही है, उसमे मुझे पाप की बू आती है।

बा० प० ज०, १०२

२ परदे की जो मूल भावना है, वह सयम की है। यह सयम-रूपी परदा ही सच्चा परदा है।

ए० च०, ११७

३ इस जमाने मे वाहरी परदा किसी भी काम का नही, दिल मे परदा रखो, लाज-मर्यादा रखो और मन को सयत रखो, यही इस परदे का मतलव है।

वि० कौ० आ०, ३७९

११—विधवा और वैधव्य

१ सच्ची हिंदू विधवा एक रत्न होती है। वह हिंदू धर्म की मानव-समाज को एक देन है।

स्त्रि० स०, ६२

२ उस ब्रह्मचर्य से कोई लाभ-पुण्य नही होता, जो ऊपर से लादा जाता है। उससे तो अक्सर गुप्त पाप होता है और जिस समाज मे इस तरह का पाप होता है, उसका सदाचार नष्ट हो जाता है।

स्त्रि० स० ६६

४ स्वेच्छापूर्वक विधवा रहना हिंदू धर्म की अमूल्य देन है, जवरन

विधवा रखना पाप है।

हि० स०, ६६

१२—गुरु

१ गुरु-पद सम्पूर्ण ज्ञानी को ही दिया जा सकता है।

गा० क०, ७६

२ अच्छी बात सीखने मे हजारो क्या, लाखो गुरु हम क्यो न बनाये ? और एक छोटा बच्चा हो तो उससे भी सीखे। अच्छी बात किसी से सीखने मे शर्म काहे की !

ए० च०, ५४

१३—प्रान्तीयता

१ सब प्रान्तो के लोग भारत मे है और भारत सब का है। शर्त एक ही है कि कोई दूसरे प्रान्त मे जाकर इसलिए नही बस सकता कि उसका शोषण करे, उसपर शासन करे या उसके हितो को किसी प्रकार हानि पहुचाये।

१५—राम-राज्य

१ राम-राज्य मे राजा और रक दोनो के अधिकारो की समान रूप से रक्षा की जायगी ।

सर्वो०, १११

२ रामराज्य अवश्य काल्पनिक है, परतु वैसा ही कुछ-न-कुछ तो पहले था ही, यह भी हम सिद्ध कर सकते है। वैसे असत्य और दरिद्रता का पूरा-पूरा लोप बिल्कुल तो न पहले किसी समय हुआ और न भविष्य मे कभी होना सभव है ।

बा० प० प्रे०, २३९

१६—उद्योगवाद

१ दरिद्रता का नाश होना ही चाहिए, परतु औद्योगीकरण इसका सही इलाज नही है ।

सर्वो०, ४८

२ बडे पैमाने पर माल तैयार करने का पागलपन ही आज के विश्व-सकट के लिए जिम्मेदार है ।

सर्वो०, ५३

३ मुझे विशेषाधिकार और एकाधिकार से घृणा है। मेरे लिए वह चीज निषिद्ध है, जिसमे सबका हिस्सा न हो ।

सर्वो०, ५४

४ एक कारखाना कुछ सौ लोगो को काम देता है और हजारो को बेकार बनाता है ।

खा०, ३१

५ प्रत्येक देश को अपने उद्योगो की रक्षा करने का अधिकार है और वह उसका धर्म है ।

बा० प० प्रे०, १३०

१७—कर

१ समस्त करो को स्वस्थ होने के लिए कर-दाताओ के पास आवश्यक सेवाओ के दस गुने रूप मे वापस आना चाहिए ।

डि० इ०, ३३

१९ शोषण हिंसा का सार है।

फ़ा० पै०, १०७

२१—रोग और रोगी

१ हर रोग कुदरत के किसी अज्ञात कानून-भग का ही परिणाम है। कुदरत के कानूनो को जानने की कोशिश करे और उनपर चलने की शक्ति के लिए प्रार्थना करे। इसलिए रोग के समय हृदय से प्रार्थना करना काम भी है और दवा भी है।

बा० प० मी०, ५६

२ तमाम शारीरिक रोगो का आधार हमारी मानसिक स्थिति है।

वि० कौ० आ०, ३९-४०

३ बीमारो की सेवा करने-जैसा उत्तम मार्ग और क्या हो सकता है! उसमे धर्म का बहुत बडी हद तक समावेश हो जाता है।

गा० सा०, ९०

२२—वेश्या-वृत्ति

१ मुझे यह मजूर है कि पुरुष-जाति का नाश हो जाय, मगर यह मजूर नही कि भगवान की पवित्रतम सृष्टि को अपनी वासना का शिकार बनाकर हम पशुओ से भी गये-बीते बन जाय।

स्त्रि० स०, १०६

२ चोर सपत्ति को चोरी करते है, ये वेश्याए सदाचार को हरती है।

स्त्रि० स०, ११२

संदर्भ ग्रंथ-सूची

इस सग्रह के विचार जिन रचनाओ से लिये गए है, उनका उल्लेख यथास्थान सकेत मे किया गया है। उन सकेत-ग्रंथो के पूरे नाम निम्न है :

आत्म-कथा	आ० क०
यरवदा के अनुभव	य० अ०
यरवदा-मंदिर से	य० मं०
शाकाहार का नैतिक आधार	शा० नै० आ०
सत्य ही ईश्वर है	स० ई०
सर्वोदय	सर्वो०
दी ग्लीनिंग्स एट वापूज़ फीट	ग्ली० बा० फी०
प्रार्थना-प्रवचन, भाग १	प्रा० प्र० १
प्रार्थना-प्रवचन, भाग २	प्रा० प्र० २
रिमूवल ऑफ अनटचेबिलिटी	रि० अ०
रचनात्मक कार्यक्रम	रच० का०
ड्रिंक्स, ड्रग्स, गैंबलिंग	ड्रि० ड्र०
फार पैसिफिस्ट	फा० पै०
हिंद-स्वराज	हि० स्व०
खादी	खा०
स्त्रियो की समस्याएं	स्त्रि० स०
ऐसे थे बापू	ऐ० बा०
बापू के पत्र बजाज-परिवार के नाम	बा० प० ब०
मेरे सपनो का भारत	मे० स० भा०
गांधी-वाणी	गां० वा०
बापू के आशीर्वाद	बा० आ०
बापू के पत्र प्रेमाबहन के नाम	बा० प० प्रे०
संरक्षकता के सिद्धांन्त	सं० सि०

गाधीजी की छत्रछाया मे	गा० छ०
गाधी-नास्तिक-सवाद	गा० ना० स०
कुछ पुरानी चिट्ठिया	कु० पु० चि०
एकला चलो रे	ए० च०
वापू के पत्र मीरा के नाम	बा० प० मी०
अतिम झाकिया	अ० झा०
वापू के पत्र मणिबहन पटेल के नाम	बा० प० म०
वापू के पत्र सरदार वल्लभभाई पटेल के नाम	बा० प० स०
महादेवभाई की डायरी, भाग १	म० डा०१
महादेवभाई की डायरी, भाग २	म० डा०२
महादेवभाई की डायरी, भाग ३	म० डा०३
महादेवभाई की डायरी, भाग१ नई	म० डा० १न०
विहार की कौमी आग मे	वि० कौ० आ०
सत्याग्रह-आश्रम का इतिहास	स० आ० इ०
हमारे गाव का पुर्नानिर्माण	गा० का पुन०
विद्यार्थियो से	वि०
मोहन-माला	मो० मा०
मेरा समाजवाद	मे० स०
साम्यवाद और समाजवाद	सा० स०
शरीर-श्रम	श० श्र०
हडतालें	ह०
सिलेक्शस फ्रॉम गाधी	सि० गा०
गाधी की साधना	गा० सा०
मगल-प्रभात	म० प्र०
दिल्ली-डायरी	दि० डा०
टू वर्ड्स न्यू होराइजन	टू० न्यू० हो०
विद गाधी इन सीलोन	वि० गा० सी०
हरिजन-सेवक	ह० से०
हरिजन	हरि०